ज्ञानप्रकाश

ओंपरमात्मनेनमः

श्लोक ॥

नत्वातंकृपया विद्यातिमिरंयस्यन श्यति । मयाज्ञानप्रकाशाख्यग्रंथोऽयंर च्यते विदां १ बांदामण्डलभागस्थे ख्यातिर्यस्यतुतेरही । तद्ग्रामेचास्ति मेस्थानं नामप्रभुदयालिवति २ ॥

दोहा वंदि ब्रह्म अज्ञानतम जासुकृपाहो नाश ।
रचहुंग्रन्थलहें अविद्जन जासोंज्ञानप्रकाश १
बांदा मंडल भागमें ख्याति तेरही ग्राम ।
ग्रन्थकारको वासतहं प्रभु दयालु है नाम २

परमात्मा आनन्द ज्ञानस्वरूप को प्रणामकरके तत्त्व ज्ञानरहितमनुष्योंके ज्ञान प्राप्तहोने व लोकपरलोक के हितके अर्थ सम्पूर्ण शास्त्र व वेदका सारांश जीवके श्रेय प्राप्तिके उपदेशमें यहग्रन्थज्ञानप्रकाशदेशभाषामें वर्णन करनेका प्रारंभकियाहै वर्तमानकालमें मनुष्योंको अति आलस्य युक्त परिश्रमरहित शास्त्रज्ञानधर्मसत्संगविमुख देखकर सरल भाषा करके उनकी बुद्धिके प्र . करने वधर्ममें प्रवर्त बध्वधर्मसे निवृत्त होनेके अर्थ २ विवेक उपदेशमें इसग्रन्थकेवर्णनका अभीष्टहै ज्ञानीसज्जन महात्मापुरुषोंसे यहप्रार्थनाहै किजोकहीं प्रमादसे भूलहोजावैं तौ कृपाकरके शुद्धवविमार्जितकरलेवें क्योंकि सन्त केवलगुण पक्षके ग्रहण कर्ताहोतेहैं दोषग्रहण नहींकरते यह यशसन्तोंका विख्यातहै अब यहजानना चाहियेकि जीवके मुक्तिहोनेका उपाय केवल ब्रह्मज्ञान है परन्तु जबतक साधन चतुष्टय करके हृदय अज्ञानव पापमलसे शुद्धनहीं होतातबतक ब्रह्म ज्ञानयथार्थउदय नहींहोता इससे प्रथम साधन चतुष्टय अर्थात् विवेक विराग षट्सम्पत्ति मुमुक्षा इन चारका विचार वसाधन करना चाहिये इसके पश्चात् ब्रह्मकी जिज्ञासा अर्थात् ब्रह्मके जाननेकी इच्छाकरना चाहिये सत् असत् वस्तु काजानना विवेक है सम्पूर्ण संसार व स्वर्ग पर्य्यन्तके पदार्थ फलभोग अनित्य नाशहोनेवाले जानकर उनसे चित्तकी उदासीनता विरागहै शमदम उपरति तितिक्षा श्रद्धासमाधान यहषट् सम्पत्तिहैं संसारके व्यापारसेमन

काशांतहोनाशमहै बाहेरकी दशइन्द्रियों का बशकरना दमहै ज्ञानकेअर्थ नित्यविहित कर्म आदिका संन्यास उपरतिहै शीतगरमी आदिकासहनातितिक्षाहै ब्रह्मज्ञान वब्रह्मभाव में सर्वत्र सबकाल में प्रीति उदय रहना श्रद्धाहै निद्रा आलस्य प्रमाद अर्थात् अभावना त्याग करके साधन में चित्तकास्थिर होना समाधानहै इनछः सम्पत्तिको षट्सम्पत्ति कहतेहैं मोक्षकीइच्छाहोना मुमुक्षाहै इनचारसाधनके होनेमें ब्रह्मकी जिज्ञासाकेयोग्य चित्तशुद्धहोताहै व ब्रह्ममेंयहांश्रद्धावप्रेमउत्पन्नहोताहै॥

अथ नित्यानित्यविवेक संयुक्तविराग अंगवर्णनम्

यह विचारकरना चाहिये कि सम्पूर्ण जीव सुखकी इच्छाकरतेहैं दुःखको कोईनहींचाहता सुखप्राप्तहोनेका उपाय रात्रिदिनअपनीशक्तिअनुसारकरतेहैंपरन्तुअज्ञान से जिसको सुखजानतेहैं व सुखकाउपायकरतेहैं उससे दुःखहीहोताहै सुख लाभनहींहोता मनुष्यको यहविचार कर अत्यन्तखेद व शोचकरनाचाहिये कि अज्ञानवश जो मनुष्य शरीरही केवल ज्ञान द्वारा स्वर्ग आदि मोक्षप्राप्ति पर्य्यंत साधनकाहेतुहै ऐसे शरीरमें विवेक विचार नहीं करते अनित्य नाशहोनेवाले संसार सुखमें लिप्त होकर अपनेको नरकमें पतित करतेहैं नाना प्रकारके कुयोनि व क्लेशको प्राप्तहोतेहैं मनुष्य शरीरपाकर धर्म विचार

रहित बिषय सुखमेंलिप्त होना परलोक व परिणामकोन शोचना इसकी बराबर और अज्ञानता व मूर्खता नहींहै क्योंकि मैथुनसुख स्त्रीपुत्रआदिका स्नेह सबयोनिमेंहोना प्रत्यक्ष देखपड़ताहै शूकर श्वान आदि निकृष्ट जीव व गज पर्य्यंत बड़े शरीरधारी चतुष्पद पशु पक्षीआदि भी मैथुन समयमें सुखीहोतेहैं केवलवस्त्र सुगंध आदि में मनुष्यसेन्यूनरहतेहैं परन्तु ज्ञान धर्म साधन यह केवल मनुष्यही शरीरमें होसकताहै अन्यशरीरमें नहीं होसक्ता ऐसे ज्ञान व धर्म साधनमें मनुष्य अपने अभाग्य व कुसंस्कारसेविवेकरहित प्रवर्तनहींहोते अनेकछल चतुराईसे कुसंग व अधर्म संयुक्त बिषय सुखमें जो सब योनियोंमें प्राप्तहोनेवालाहै अपने को सुखीमानतेहैं अपने कुकर्मके छिपानेमें दूसरेके जाननेकी भय व लज्जाकरतेहैं परन्तु अंतर्य्यामी सर्वज्ञ परमेश्वरका व उसके दण्ड नियम का कुछभय व लज्जा नहींकरते प्रकटहोनेमें संसारमें निन्दा को प्राप्त व लज्जित होतेहैं व मरनेके पश्चात् दुर्गति भय शोकक्लेशको प्राप्तहोतेहैं गृहस्थाश्रममें विवाहिता स्त्रीमें यथा नियमसे भिन्न जे मनुष्य अनुचित मैथुन में प्रवर्त होतेहैं उनसे पशुओंको उत्तमवभाग्यमानसमुझना उचितहै क्योंकि मैथुनसुख उनको मनुष्योंसेअधिक सुलभहै व निन्दादंडभय लज्जाको नहीं प्राप्तहोतेहैं व्यभिचारी मनुष्योंको अवश्य पशुयोनि होनेकी ईश्वर से प्रार्थना करना चाहिये क्योंकि पशु शरीरमें उनकी अभिलाषा इच्छा अनुसार विनाबिचारमैथुनसुखमेंपूर्ण

होगी मनुष्यशरीरसे उनको कुछ फलनहींहै अर्थात् जिसमें जो उचित व धर्म व जो उसका फलहै उसके विपरीत होनेमें उसकाहोना निन्दा व त्यागकीयोग्यहै यहविचारनाचाहिये कि संसारमें जो सुखहै सबस्वप्नवत् अनित्य व नाशमानहै वदुःख मिलाहुआहै कोई सुख ऐसासंसार में नहींहै जिसमें विचारकरनेसे दुःखका मेलनहोवैअधर्म सुख विष वमिठाई मिलाहुआ लड्डू अथवा अन्नहै कि खानेकेसमयमें स्वादमेंविषका बोधनहींहोता मीठामीठा बहुत अच्छालगताहै पीछे विष दुःखदेताहै प्राणघातक होताहै इसी तरह अज्ञानतासे पहिले अधर्म कुसंग प्रभाव व कामकी प्रबलता उन्मत्तता व इन्द्रियोंके बश होनेसे अच्छालगताहै परन्तु पीछे लोक परलोक दोनों में हानिकरताहै दुर्गति व क्लेशको प्राप्तकरताहै इससे बुद्धिमान को अवश्य बिवेक करके कुसंग व अधर्म को त्याग करना चाहिये व अनित्य दुःख रूप विषय सुखमें फंसिकर परलोककी हानि न करना चाहिये जो परिणामको नहीं विचारता उसकीबराबर मूर्खवअज्ञान संसारमें कोईनहींहै जिसधन पुत्र कलत्र आदिके स्नेह में मोहित होकर नानाप्रकारके कपटछल झूठमें प्रवर्त हो पापमलसे हृदयको मलीनकरताहै उनकोयह दशा प्रत्यक्ष देखीजातीहै कि मरने के समयमें जीवके गमन करनेमें कोई साथनहींदेता धन पृथ्वीमें गड़ारह जाताहै स्त्री घरके द्वारहीतक रोकर रहजातीहै लड़काभाई बिरादरीकेलोगचितातकशरीरकेजलानेकोजातेहैं शरीर

जो कभी क्षणमात्र साथ नहींछोड़ता सबसे अधिकरात दिन साथ रहताहै वहभी चिताहीमें जलकर रहजाता है केवल धर्म अधर्म जैसा कर्मकरताहै वह साथजाता है इससे सुखफल दायक धर्म व ज्ञानलाभ में यत्न करना उचितहै मल मूत्रके भाजन शरीरमें मैथुन सुख आदिमें जोतरुण अवस्थाकी उमंग व मदमात्रसे यद्यपि निषिद्ध है अति प्रिय लागता है फिर उसीशरीर इसी जन्ममें थोड़ेकाल में वृद्धाअवस्थामें अरुचि होजाती है अपने शरीर में शक्तिहीन इन्द्रिय सिथिल होने में न स्त्री प्रिय लगती है न शरीर के क्लेशित होनेमें कुटुंब परिवार प्रिय लागता है क्लेश दुःख को प्राप्त हाय हाय करकेभोग करताहै जब वचनसे अपनी दशानहीं कह सक्ता वाक्रहितहोता है तबअपनी विपत्ति वदशा को आपही जानकर रहजाता है कोई रोग दुःख मरण का साथीनहींहोता जीतेमें दुःख पीड़ाकोई नहींबांटस-क्ता नदूरकर सकताहै नमरनेमेंकोई साथजाताहै ऐसे संसारके नातेमें फंसिकर स्त्रीपुत्र आदिको अपनामान-ताहै वपरमेश्वरको भूलताहै परमार्थको लक्ष नहीकरता इससेअधिकहानि व अज्ञानता कुछ नहीं है इसतृष्णा मोहमें फंसनेसेसेवाय हानिके लाभनहींहै नइस संसार मेंकोई सुखीदेख परताहै जेधनराज्य को प्राप्तहैं उनको अनेक बाधा व फिकिरसे दुःखरहताहै व जो निर्धनक्षु-धापिड़ितहैं वहतौ दुःखरूपहीहैं अर्थात् संसारमें कोई सुखीनहीं है व कालसे नहींवचता यहभी सब जनते हैं

व प्रत्यक्ष अपने मातापिताजोअतिप्यार करतेथे उनको
व अपनेसेबड़ेछोटे बराबर अवस्थावालोंकोमरते व उन
के शरीरोंको चिताअग्नि में जलतेदेखताहै व यह जान
ता वसोचताहै कियहवही शरीरहै जो मेरेपास बैठता-
था मेरेऊपर बड़ास्नेह सूचितकरताथा व यहवहमपर-
स्पर वार्ताकरतेथे आजचिता अग्निमें जलताहै वमैंदेख
ताहूं एकदिनमेरे इसशरीरको भी यहीदशाहोगी वदेख
नेवालेदेखेंगे व दिनदिन प्रातःकाल व संध्याकाल रात्रि
दिन गतहोने में मेरा मरणकाल निकट चलाआताहै
परन्तुऐसा विचारकर व देखकरभी मोहको परित्याग
नहींकरता यहअज्ञानवमोह ऐसाप्रबलहै संसारकेस्नेही
सबस्वार्थके साथीहैं मेरेहितके साथी कोई नहींहैं यह
अपनी दुर्मतिसे विचार नहीं करता जो यहमाना जाय
की संसारसुख अनित्यहै यज्ञ आदिकर्मसे स्वर्ग आदि
सुखकी प्राप्तिहोतीहै इससे यज्ञआदिकर्म करनेसे स्वर्ग
आदिसुख के प्राप्तहोने का यत्न करना चाहिए ब्रह्मकी
जिज्ञासा व ब्रह्मकोउपासनाकरनेसे क्याप्रयोजनहै तो
यज्ञ आदिसे जेलोकप्राप्तहोतेहैं व सुखहोताहै वहचाहै
आयु दीर्घहो सुख दीर्घ कालतकरहै परन्तु पुण्य क्षीण
होने से फिरजीव पतितहोता है इससे स्वर्ग आदि भी
सुख नित्य नहीं है केवल मोक्षदायक ब्रह्म ज्ञानही का
फल नित्य व अनन्त है इससे इस्तरह विवेकसे चित्त
में विराग धारणकरके कि यह संपूर्ण विषयसुख अवश्य
करकेचाहै जितनेदिन अधिकरहै एकदिन छूटनाहै जब

यहनिश्चयहैतौ आपसे छोड़देने के वियोगमें व मृत्युके आधीनहो वियोगहोनेमें क्याभेदहै जोनहीं छोड़ते बिना अपनी इच्छासे त्यागकिए जब मृत्युके आधीन होधन परिवार छूटते देखताहै तब मोहवस मनमें दारुणदुःख को प्राप्तहोताहै व मरनेसेपहिले आपसे विरागसेत्याग करनेमें व हृदयसे त्यागकरनेमें विषयमें लिप्त न होनेमें अत्यंत सुख होताहै अनित्य होनेसे परिणाममें दुःख होने व सांसारिक मोह व स्नेहमें गुणवृत्तिके विरोध से अर्थात् जिसमें व जिससे स्नेह होताहै उसके व अपने चित्तकीवृत्ति व गुणमें विरोध होनेसे परस्पर विपरीत होनेसे दुःखहोता है अथवा अपनेही चित्तमें कहीं रजो गुण तमोगुणमें प्रवर्त्त होविषय सुख इच्छाआदि चित्त वृत्तियोंसे अनेक प्रकारके अधर्म करताहैव फिर समुझ कर सत्त्वगुण वृत्तिसेपश्चात् ताप करताहै व लज्जित होताहै शोचकरताहै इस तरह गुणवृत्तियोंके विरोधसे दुःखहोताहै भोगमें इन्द्रियोंका तृप्तहोनासुखहै व भोग विषयका लाभन होना व भोगमें इन्द्रियों का तृप्ति से शांतनहोना अथवा प्रियपदार्थ का नाशहोना दुःख है भोगके अभ्याससे कामकी अग्निबढ़तीहै बढ़नेमें अनेक कामनासे जो मनोर्थ प्राप्तनहींहोताहै उसमें दुःखअवश्य होताहै व जोप्राप्तभी हुवातौ उसमें कहीं भोग संकोच कहींदुःख संकोचमें द्वेपहोताहै इच्छा व द्वेषके विरोधसे दुःखहोताहै अर्थात् पाप संग्रह अनुचित भोगमें इच्छा होतीहै की यहकरें व संकोचभी होताहै कि यह करना

इच्छानहींहै अथवा ऐसा करैं कि प्रकट न होवैं अथवा यह संकोचहोताहै कि करनेमेंतौसुखहै व इच्छाहै परन्तु फिर दुःखहोगा इसतरह इच्छा व संकोच व द्वेष होने से प्राप्त विषयमें दुःखचित्तहीमें बोधहोताहै दुःख रहित सुखनहीं बोध होता जिस महामूढ़को संकोच व दुःख नहीं बोधहोत्ता तौ इच्छापूर्बक बिषय भोग में ब्याधि दण्डआदि परिणाममें प्राप्तहोनेमें परिणाम दुःखहोता-है जितना अनुचित व पाप आचरणहै सबमें भय लज्जा निन्दा साथही होता है व जिसबिषय में भोगकालमें सुखहै उसके साथ नाशहोनेका भयलगाहै नाश भयसे दुःखहै अथवा भोगसमयमें कोई पदार्थ जो भोगहोनेमें बाधक होताहै उसभोग नाशकरनेवाले पदार्थमें द्वेष व क्रोध होताहै उससे दुःख होताहै इससे जहांतक विचार कियाजाय अधर्म व बिषय सुख में सुख नहीं है तिस से विवेक करनेवालों को सब दुःखही है सुख केवल शान्त चित्तहोने व आत्मज्ञान में है इससे षट्सम्पत्ति संयुक्त मोक्षके अर्थ ब्रह्म को उपासना व ब्रह्मज्ञान लाभ करना उचितहै अब यहविचारना चाहिये कि शांतचित्त न होने का व अधर्म में प्रवृत्त होनेका कारण अज्ञानहै जिससे लोक व परलोक दोनोंमें जीवदुःख व भय को प्राप्त होताहै व निन्दित होता है व अज्ञान कुमति का मुख्य कारण कुसंग है उत्तम गति व मोक्ष का प्राप्त करनेवाला जो बिवेक व ज्ञान है उसका कारण सत्-संगहै तिससे जो कोई अपने कल्याण सुख परलोक

की सुगतिचाहैतौकुसंगकात्याग सत्संगकाग्रहणकरे॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेवैराग्यवर्णनेप्रथमोऽध्यायः १

अथ सत्संगकुसंगगुणदोष वर्णनविषय॥

दो० जाकीरुचि सतसंगमें ताको समनहिं आन॥
बुद्धिमान सुकृतीसुरुचि धर्मवान गुणवान १
प्रीति कुसंगति मित्रता जाकी दुर्जनमाहिं॥
सो मतिमन्दअभाग्ययुतपापीसंशयनाहिं २

जहांतक विवेक किया जाताहै यही सिद्धहोताहै कि सत्संगसे उत्तम हितकारी और कोई पदार्थ नहींहै जो कोई बुद्धिमान् सत्संगतिके गुण व माहात्म्यको बिचार कियाहै कि जिससे इसलोक व परलोकमें शुद्धता शुभ गतिसुखप्राप्तिहोतीहै अतिभाग्यमानहै व वही धर्मवान् व गुणवान्है क्योंकि सबधर्म गुण ज्ञान मोक्ष पर्यंत का आदि कारण सत्संगहीहै जो कुछभी विचार करैगावह कुसंगमें कहीं रुचि न करैगा जिसकी अभाग्य व लोक परलोकदोनों में दुर्गति व दुःख होनहारहोता है उस कोप्रीति कुसंगतिमें होतीहै जिसकी रुचि कुसंगति में व दुष्टजनोंसे मित्रता होवै उसको निश्चयकरके जानना चाहिये कि यह मतिमन्द भाग्यहत पापी है बिना अज्ञान व चित्तकी अशुद्धता कुकर्म व अधर्म्म विषय में रुचि व अधर्मवान् दुष्ट बिपर्यी पुरुषों में मित्रता

उनकी संगति में प्रीति व हर्षहोना असंभव है कुसंग दोष अवश्य होताहै क्योंकि जिसमें जिसकीप्रीतिहोती- है उसीको वह ग्रहण करताहै सज्जन ज्ञानवान् जिनकी प्रीतिहृदयसे नहींहोती वह दैवयोगसे कुसंगमेंभी प्राप्त रहैं तौ उनको कुसंग दोषनहीं होता क्योंकि हृदय के रुचिसे वह कुसंगसे अति दूरहैं कुसंगही नरक दुःख भय लज्जा अधर्मकाहेतुहै इससेमनुष्योंको विचारकरके त्याग करना व सदा कुसंगसे दूररहना उचितहै कुसंग- तिके दोषसे अधर्ममेंप्रवृत्तहो इसजन्म व परजन्ममेंनाना- प्रकारके दुःख व कष्टभोग करते जीव दुर्गति को प्राप्त होताहै जो मनुष्य विचारकरके देखै तो किसीकी अप- नीहीवुद्धि अनुचित अधर्म कर्मको ग्रहणकरना अंगीकार नहीं करती जो यहसंशयहोकि जो किसीकी अपनी ही वुद्धि अधर्मको अंगीकार नकरै तौकोई व्यभिचार चोरी हत्या आदिकर्म नकरै तौयहजानना चाहिये किअज्ञान व पापके अभ्यासमलसे हृदयमलीन होजानेसे अधर्ममें द्वेषवुद्धि लक्ष्यनहींहोती परन्तु आदिमेंजवअधर्ममेंप्रवृत्त नहींहुआ व कुसंगति दुष्टवार्त्ता सुनने से व लोभ काम आदिकी उन्मत्ततासे जव अधर्ममें प्रवृत्तहोने को उद्यत होता है अंतःकरण में प्रथम पाप व अधर्म अभ्यास मल न होनेसे अनुचित होनेका ज्ञानअवश्यरहोताहै फिर जो कुसंगति दोष आदिकी प्रवलताको विचारकरके न संभारसका ज्ञानविवेकरहितहोकर अधर्ममें प्रवृत्तहुआ व उसका अभ्यास हुआ तव माया विकार आधीन

पापमलसे स्वच्छ बुद्धिकीहानि होतीहै विचारकेस्वरूप
का ज्ञाननहीं होताहै जैसेप्रथम साफ़ दर्पणमें मुखदेख
परताहै मोरचा लगजानेके पश्चात् जबतक मोरचामल
दूरनहींहोता फिर नहीं देखपरता यह प्रत्यक्ष सबकोई
देखताहै कि मद्य अफीम आदिके खानेवालों को खाने
में व उसके गुणबुद्धि भ्रष्ट आदि दोषहोने में तथाचोरी
व्यभिचार आदि व जो अन्य अतिनिंदकर्महै कि कहने
में अशोभित ज्ञातहोताहै यद्यपि विचारकरने व प्रत्यक्ष
लज्जाभय दंडके हेतु होनेसे वह अनुचित हानिकारक
समझा जाताहै परन्तु अभ्यास बशसे करनेवाले को
कुछ दोष नहीं जानपरता व करनेमें रुचिहोतीहै विना
उसके करनेके मनकी अभिलाषा पूर्ण नहींहोती उसीमें
सुखबोधकरताहै यह केवल मायाविकारके अभ्यासका
फल है जो जीवको उन्मत्त व अज्ञान बश प्रवृत्त होने
में रुचिको बढ़ाता है क्योंकि जे विचार से अज्ञान व
अभ्यास के आधीन नहीं हुये वह मद्यपान आदि व
व्यभिचार आदि अन्य जे निंदित कर्महैं उनमें प्रवृत्त
नहींहोते न उनकी रुचि होतीहै प्रवृत्त होनेवालों को
अपनेही पूर्व अवस्था को स्मरण करना चाहिये कि
जबवह प्रवृत्तनहीं हुआथा व अभ्यास नहींकियाथा तब
उसकी रुचि ऐसीनहींथी इससे यह केवल प्रकृति बिकार
दोष अभ्यासकी प्रबलता अज्ञानहेतुसेहैं तथायहप्रत्यक्ष
है कि जेमिरचानहींखाते प्रथमखानेसेतीक्ष्ण व कटुबोध
होताहै अश्रुपात होताहै परन्तु जब बिना गुण दोष के

बिचार अभ्यास होजाताहै तब अभ्यासवालेको बिना
उसके भोजन अच्छा नहीं लगता इसीतरह अनेक अति
निकृष्ट निंदित कर्म पर्य्यंत प्रवृत्त होने में अविवेक व
अभ्यास कारण जानना चाहिये बिस्तार से बर्णन
करने की आवश्यकता नहीं है बुद्धिमान् इतनेही संक्षेप
उपलक्षणमात्रसे सबबिचार लेवेंगे अभिप्राय यहहै कि
चाहै अतिनिंदित व निषिद्ध बस्तुकाभी धारण व कुकर्म
की प्रवृत्तिहोवे परंतु अभ्यासआधीन होनेसे बिनासत्-
गुरुउपदेश सत्संगति व बिचारके उसको दोषका ज्ञान
नहींहोता व दिनदिनप्रति अधिक अधिक जीव पतित
होते जाताहै इससे मनुष्यको उचितहै कि बिचारकर अ-
धर्मवअनुचितकर्मके अभ्यासके आधीन न होवै अभ्यास
आराधन ध्यान योगमेंकरै जिससे परिणाममें श्रेयप्राप्त
हो व जोमनुष्य अपनेहित व कल्याणकोचाहै तौमृत्युसे
अधिक कुसंगतिका भयकरै जो कुसंगति के गुण ग्रहण
करनेसे मृत्युसे बचताहो तौधर्मवान्को मरनाअंगीकार
करना उत्तमहै जीना उचित नहीं है क्योंकि मरने में
केवल शरीर त्याग समय मात्र में क्लेशहै कुसंग दोनों
लोकमें भयशोक करनेवाला है व कुबुद्धि अधर्मियों की
मित्रता व संगतिसे निर्जन भयंकर बनमें रहना अथवा
नरकबास करना अच्छाहै जे मनुष्य नरककी त्राससुन
कर किमरनेमें यमदूत दुःख देकर जीवको यमपुर को
लेजातेहैं वहां नानाप्रकारके क्लेशभोग करताहै हृदय
में मृत्युसे व यमदूत से डरतेहैं उनको समझनाचाहिये

कि यमदूत व मृत्युकी भय जो वर्णन कियाहै यह भ्रम की बातहै यमदूतसे व नरकसे कुछभय नहीं है न यमदूत व नरक तुमको दुःख देसकतेहैं मुख्यनरक भयकारी दुःखदाता अज्ञानवश कुसंगति का अंगीकार करना है व दुष्टजन कुकर्मरत यही यमदूतहैं क्योंकि अज्ञानवश जो कुसंगति में प्राप्त न होगा तौ दुःखरूप नरकभी न होगा आदि कारण नरक का द्वारा कुसंगति है व दुष्टजनही यमदूतहैं जो यमराजपुरी वा दुःखलोकके जाने में कारण होतेहैं जो इनकी संगति व प्रीति न होगी तौ यमदूतकभी पास न आवेंगे इससे मुख्यता यमदूतों में केवल दुष्टजन अधर्म आचरण करनेवालोंकीहैं जे यमराजको व नरकको भयकरतेहैं व दुष्टसंगतिसे भयनहीं करते उनकी मूर्खता व अज्ञानता है नरक अथवा यमराजको पापी मनुष्योंको अपेक्षा अपना हितकारीसमझना चाहिये क्योंकि दंड देकर फिर अंतमें शुद्धपापरहित करताहै निकृष्ट दशा निवृत्त होतीहै फिर उससे अच्छी दशा वा अवस्था होतीहै व कुसंग उत्तम दशा से पतित करके नरक दुःख भोगकरनेका कारण होताहै जिस कुसंगसे नरक क्लेश प्राप्त होताहै ऐसे दुःख देनेवाले कुसंग को अति प्रीतिसे अंगीकार करता है जो अवश्य करके भय करनेके योग्यहै उससे भयनहींकरता नरकजोउस के हेतुसे होता है उसकी भय करताहै इसको सिवाय मूर्खता और क्या कहना उचितहै अर्थात् केवलमूर्खता ही कहना चाहिये क्योंकि नरक व दुःख केवल अज्ञान

व कुसंगका अनुगामी है अर्थात् पीछे चलने वाला है इससे जो अपनाहित चाहे तौ कुसंगसे दूर रहे क्योंकि इन्द्रियोंको सहजही अपने अपने विषय रूप रस गंध स्पर्श शब्द की चाहबनी रहती है अर्थात् सुगंध अनेक स्वाद सुन्दररूप स्पर्श मैथुन आदिशब्द गीतआदि के ग्रहण व प्राप्त होनेकी नित्यइन्द्रियोंमें अभिलाषारहती है तिनमें कुसंग विषय कपट छल उन्मत्तता संयुक्तबार्त्ता की सहायतासे अर्थात् सुनने व कहनसे अति प्रबलता होती है कि विनायथार्थ विचार मनुष्य उनके आधीन हो अधर्ममें प्रवृत्त होताहै इससे कुसंग अनुचित वार्त्ता रसकाव्यसे जिससे चित्तमें बिकार उत्पन्नहो धर्मवान् को दूर रहना चाहिये दुष्ट संगति ऐसी निकृष्ट है कि अच्छेसाध करनेवालोंकी बुद्धिको मोहित करतीहै सा-मान्य बिषयी मनुष्योंको न वार्त्ताहै यह इतिहास वाल्मीकि रामायण के वालकांड में दशवें अध्याय व सर्ग में लिखाहै कि शृंगीऋषि वन में तप करतेथे स्त्री बिषय भोगको नहीं जानतेथे उनको नगरमें लानेके अर्थ रोम-पाद राजाको यह चिंताहुई कि ऋषिके नगर में लानेका कुछ उपायहै वा नहींहै क्योंकि केवल तपब्रह्म उपासना को ऋषि जानतेहैं विषय सुखनहीं जानते परंतुगणिका ओं के द्वारा मोहित व क्षोभित करके बुलाने का मंत्र निश्चितकरके बरांगनोंको भेजा वह अच्छा शृङ्गारकिये वनमें ऋषिके आश्रमसे दूरजाकर बासकिया विभांडक-ऋषि शृंगीऋषिके पिताके भयसे आश्रम में नहीं जा

सकतीथीं जब कदाचित् कुछदिनव्यतीत होनेपर श्रृंगी ऋषि विचरते बनमें जहां वरांगनाथीं आगये ऋषि कहीं तपस्वी जनों के रूपके सिवाय ऐसा शोभित अलंकृत विचित्र जैसा बरांगनों काथा नहीं देखाथा यह वरांगना अच्छे मधुर स्वरों से गाती हुई ऋषि के पास जाकर ऋषिका वृत्तांत व नाम पूंछा ऋषि अपना हाल व नाम वर्णन किया ऋषि उन की सुंदरता वस्त्र शृंगारकोदेख जो पहिले कभी नहीं देखाथा ऋषिको स्नेह उत्पन्नहुआ व यह कहा कि कुछ दूरमें हमारा आश्रम है वहां चलो बरांगना यह प्रथम समझकर कि बिभांडकऋषि अभी नहीं हैं आश्रम को गईं ऋषिने सबको सत्पुरुषमान कर उनका पूजन सतकार किया वरांगनांने ऋषि को थोड़े से लड्डू भोजनको दिया ऋषिने उनको फलमान कर भोजनकिया उनमें अपूर्व स्वाद जो ऋषिको पहिले कभी नहीं मिलाथा पाकर ऋषिप्रसन्नहुये वरांगनाकुछ देर रहकर विभांडक ऋषिके आजानेके भयसे वहां से चलीआईं अन्यदिनउनकी प्रीतिसे ऋषिआपसेजहांवरां-गनाथींआये वरांगनोंने प्रीतिका अंकुर जानकर ऋषि से कहा हमारे आश्रम स्थान में अनेक प्रकार के चित्र बिचित्र मूलफल उत्पन्नहोतेहैं इस तरह रूप स्वाद संग वार्त्ता करके ऋषिको मोहित व लोभित कर क्रमसे रोमपाद के पास ले आईं जो ऋषि सदाबन में रहतेथे नगरमें कहींनहीं आतेथे अपनामन केवल तप ज्ञानयोग में लगायेथे वह संग कपट वार्त्ताकरके इन्द्रिय विषय के

आधीन होगये इसतरह कुसंगमें इन्द्रियोंकीप्रबलता से जब साधन करनेवालोंके मनमें क्षोभ होजाताहै तब जे विषयी मनुष्य हैं जिनकी विषय भोगहीमें रुचिरहती है सत्संगति गुणको ग्रहणनहींकिया साधनविचारमें दृढ़ नहींहुये वह कुसंगतिमें प्राप्तहोकर किसतरह धर्ममें दृढ़ रहसक्तेहैं व जिनकीधर्म व साधनमें प्रीतिहै उनकी रुचि कुसंगतिमें किसीतरह नहीं होसक्ती एकचित्तमें दोविरुद्ध धर्म होना असंभव है कुसंग के प्रभाव से मिथ्या ज्ञान अर्थात् अविद्या जो जीवके बंधन व दुःखका हेतुहै प्राप्त होतीहै अनित्यमें नित्य अशुचिमें शुचि जोआत्मा नहींहै उसमें आत्मा दुःखमें सुख जो त्यागकी योग्यहै उसको ग्रहण की योग्य मानना अविद्या व मिथ्याज्ञानहै अविद्यासे जिसमें सुख बोध होताहै व अपनी रुचि व इच्छा अनुसार इन्द्रियका विषय है उसमें राग व जो इसकेविरुद्ध है उसमें द्वेषहोता है राग द्वेष संयुक्त शारीरिक वाचिक मानसिक तीनतरह के दोष होतेहैं शरीरसे हिंसा चोरी मैथुन आदि जीव करताहै वचनसे झूठ बोलना दुर्वचन आदि मनसे परद्रोह परधनकी इच्छा करना तृष्णा लोभ आदि होते हैं इत्यादि से पापी अधर्ममें प्रवृत्त होतेहैं अधर्म में प्रवृत्त होनेसे कुयोनि आदिमें उत्पन्न हो दारुण दुःखको प्राप्त होतेहैं सत्संगसे प्रथम अनुचितकर्म में द्वेष व उचित धर्माचरणमें राग होनेसे शरीरसे शुभकर्म दान आदि वचनसे सत्य हितकारी वचनजप उपदेश आदि मनसे दया परकी रक्षाआदि करनेसे यद्यपि

मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती तथापि उत्तमगति होती है तिससे जो अपना हित व भलाई चाहै तो कुसंगति व अधर्म प्रीतिको त्यागकरै जबतक पाप कुसंगति में हृदय से द्वेष व पुण्यकर्म व सत्संग में प्रीति नहीं होती तब तक जानना चाहिये कि हृदय की शुद्धता नहींहै जबतक हृदय की शुद्धता नहीं होती तबतक शुद्ध रूप परमेश्वर का भावहृदय में उदय नहीं होता न ठहरता है न परमेश्वर की प्राप्ति होती है विषयराग अर्थात् विषय की प्रीति से जबतक बैराग्य नहीं होता विषय राग में जो चित्त बंधाहै उसमें उपदेशके बीजका अंकुर उत्पन्न नहीं होता जैसा सांख्य दर्शनमें कहाहै ॥

नमलिनचेतस्युपदेशबीजप्ररोहोऽजवत्॥

अर्थ मलिनचित्तमें उपदेशका बीज राजा अजकी तुल्य उत्पन्न नहीं होता अर्थात् राजा का चित्त स्त्री शोकमें मलीन था इससे वशिष्ठ ऐसे उपदेशक उपदेश किया परन्तु उपदेशके बीजका अंकुर न जमा तथा ॥

नाभासमात्रमपिमलिनदर्पणवत्॥

अर्थ आभास मात्र भी नहीं मलिन दर्पण की तुल्य अर्थात् जैसे मलीन दर्पण में मुंहकी छायाभी नहीं देख परती इसीतरह मलीन पापयुक्त चित्त में यथार्थ ज्ञान

होना तौ असंभवहै नहीं किंचित् आभासमात्रभी ज्ञानका नहीं होता यह सांख्यशास्त्र में कहा है इससे चित्तको विचार साधनसे शुद्धकर सम्पूर्ण दोषोंकी मूल दुष्टजनों की संगति व प्रीतको जो अपना कल्याण चाहै तौ ग्रहण न करे॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेकुसंगदोषविषयवर्णने द्वितीयोऽध्यायः२

अथसत्संगमाहात्म्यफलवर्णनविषय प्रारम्भः॥

दो० सतसंगतिसे लाभहो चित्त शुद्धता ज्ञान।
श्रद्धा संगतिमोक्षप्रद परंतत्त्व विज्ञान॥

बुद्धिमान्को यह निश्चय करना चाहिये किसत्संगतिसे अधिक जीवका हितकारी और कोई पदार्थ नहींहै जो यह कहा जाय कि बुद्धि से विचार व विवेक करनेसे तत्त्वज्ञान लाभ होसक्ताहै तौ बुद्धि इन्द्रियवश व इन्द्रिय विषयआसक्तरहना साधारण प्रत्यक्ष होताहै कोई अनेक सहस्र में एक ऐसा होता है कि जिसका चित्त पूर्व जन्मके संस्कारसे शुद्धताको प्राप्त आपसे विवेक में प्रवृत्त होताहै सत्संगसे मलिनचित्तभी किंचित् रुचिके संयोग से निर्मल होता है व स्वच्छ होकर ज्ञानप्रकाश को लाभकर सत् असत् को लक्ष्यकरताहै फिर श्रद्धा पूर्वक धर्ममें प्रवृत्त परमेश्वर को सगुण कार्य्य ब्रह्मभाव से उपासना करके उत्तमगति ब्रह्मलोक प्राप्ति पर्य्यंत मोक्ष को लाभ करताहै यद्यपि कार्य्यब्रह्मके उपासनासे परं-

मोक्ष नहीं प्राप्त होताहै तथापि परंमोक्ष की समीपता सदृश उत्तमगति व सुख आपेक्षिक मोक्षको प्राप्तहोताहै व अधिक उपदेशमें चित्त लगाने व विचारनेसे सत्संग द्वारा परंमोक्ष फलरूप परमतत्त्व जो आत्मज्ञान अर्थात् आत्माका शुद्ध निर्विकार जानना व चेतन पदार्थभावसे आत्मा व परमात्मा में भेद रहित दृष्टि करना अथवा अति उत्कृष्ट श्रद्धा प्रेमध्यान से ब्रह्ममयभावसे देखना अन्य पदार्थ द्वितीयमें चित्तवृत्तिका न होनाहै वह प्राप्त होताहै तात्पर्य्य यहहै कि सम्पूर्ण शुभगति सुखमोक्ष पर्य्यंत प्राप्त होनेका द्वारा सत्संग है व भवसागर से तरनेके अर्थ अतिउत्तम नौकाहै अपनेआत्माका कल्याण चाहै तो चहै वेदशास्त्रके पढ़नेमें परिश्रम न करै चहै तप आदि न करै केवल सतगुरु की शरणमें आवै व निष्कपट हो गुरु आधीन दीन मान रहित सेवा विनय करके अपनेकल्याण प्राप्तहोने की प्रार्थनाकरै सतगुरुकी बराबर वेदशास्त्र तीर्थ देवता कोई अपने हितकारी नहीं हैं क्योंकि शीघ्र यथार्थ ज्ञान के प्राप्त करनेवाले व हित करनेवाले गुरुके तुल्य यह एकनहीं हैं माता पिता भाई मित्र देवता जितने हितकारी समझे जातेहैं गुरुयथार्थ परमार्थ उपदेशककी अपेक्षा उनका हितकारी समझना सब मिथ्या बुद्धिरूपहै सच्चामित्र हितकारी सब देवताओंसे अधिक कृपा करनेवाला सतगुरु व सतगुरु की संगतिहै अथवा सज्जन महात्माओं की संगति है सत्संगतिसे सतगुरुकी संगति वा सत्पुरुष महात्मा संतों

की संगतिसे अभिप्रायहै जो ज्ञान अनेक साधन व वेद शास्त्रके बहुतकाल पढ़ने व बिचारने अतिपरिश्रमसे भी प्राप्त होना कठिनहै वह सत्संगतिसे संतोंकी कृपा से विना परिश्रम लाभ होताहै जिससे जीव अनेकजन्म के अज्ञान जन्य दुःख संस्कार से छूटता है व संतोंकीकृपा को विचारना चाहिये कि ऐसे दयालु होतेहैं कि श्रद्धा-वान् जिज्ञासु देखकर जो ज्ञान अनेकग्रन्थ शास्त्र वेदका सारांश अति परिश्रमसे लाभकियाहै वह दूसरेको लक्ष्य करातेहैं संतोंकी व गुरुकी कृपामें संदेह नहींहै साधन करनेवाला उपदेश अनुसार साधन में प्रवृत्त न हो तौ उसकी मन्दभाग्यता है जिसपुरुष के अनेक पुण्य स-हाय होतेहैं उसको सत्संग लाभहोताहै व उसको सत्-संगति में रुचि होतीहै जहां तक विचार कियाजाता है सुमति सुयश सुगति उत्तम पदवी जिसको मिलीहै सत्-संगतही के प्रभाव से मिलीहै व कुमति कुगति कुयश नरक को जे प्राप्तहुये हैं कुसंगके प्रभाव से हुयेहैं परंतु कुसंगके विशेष वर्णन का यहां प्रयोजन नहीं है पूर्वही वर्णनहो आयाहै विचार करने वालेको चाहिये किइसके सत्य होनेका निश्चय पूर्ववर्णन व इतिहास तथा प्रत्यक्ष व अनुमानसे आप करलेवै सत्संगति को महिमा प्र-त्यक्ष जिसतरह महात्माओंकी संगतिसे ज्ञान आदि का लाभ होता है सिद्धहोतीहै पूर्व इतिहासों से सत्संगति की महिमा सिद्धहै कि वड़े वड़े पापी व नीच अति उत्तम पदवी को प्राप्तहुयेहैं जैसे वाल्मीकि नारदआदिके इति-

हांस से सत्संगति कामाहात्म्य प्रसिद्ध है वाल्मीकि जो अनेक मनुष्योंके धनको हरते व वधकरतेथे वह ऋषियों के सत्संगके प्रभाव से ज्ञानलाभकर ईश्वर स्मरण उपासनाकर उत्तमगति को प्राप्तहुये तथा नारद दासीके पुत्र संतोंकीसंगति व सेवासे देव ऋषि पदवी को प्राप्त हुये इसीतरह अनेक पापी निकृष्ट उत्कृष्ट दशा व उत्तमगति कोप्राप्त हुये हैं सत्संगतही स्वर्ग अपवर्ग का द्वारा है जेमनुष्य सदा सत्संग में रहते हैं वह सम्पूर्ण अधर्म से बचे रहते हैं क्योंकि सत्संगति के प्रभाव से कुमति वीज हृदयस्थल में नहीं पड़नेपाता जो कदाचित् कहीं किसी संस्कारसे पड़ा व कुछ अंकुर जमा तौ सत्संग में ज्ञान विवेक संयुक्त उपदेश वचन शक्तिसे तुरतही मूल समेत उखड़ जाता है जो इस संसार व परलोक में शुभ गति व भलाई चाहै व अधर्मसे बचा चाहै तौ वुद्धिमान् जबतक पूर्णज्ञान व साधनको न प्राप्तहोवै तबतक सत्संगति में सदा प्रीति व श्रद्धा रक्खै विना सत्संग की नौका चढ़े भवसागर जो अतिदुस्तर है इसके तरने का और कोई उपाय नहीं है॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेसत्संगमाहात्म्यवर्णने तृतीयोऽध्यायः ३॥

अथसंशयपूर्वक धर्मलक्षणपरीक्षा वर्णनविषयप्रारंभः॥

अबयह जानना चाहिये कि धर्मक्या है जिसमें प्रवृत्त

होने का उपदेश किया जाता है व मोक्ष क्या पदार्थ है जिसके अर्थ जीवको मुख्य यत्न करना व साधन करना चाहिये व जीव के होनेका प्रमाण किसतरह होता है और होनेका भी प्रमाण हुआ तो जीवमरने के पश्चात् फिर जन्म लेता है व कर्म अनुसार सुख दुःख को भोग करता है यह किसतरह प्रमाण सिद्ध होताहै तथा परमेश्वरकोई है यह किसतरह सिद्ध होताहै यहां इन सबके विस्तार सहित वर्णन करने में ग्रन्थ बहुत बढ़ैगा व जिज्ञासुओं के समझने में कठिनता होगी इस संक्षेप से जिज्ञासुओं के संशय दूर होनेके अर्थ कि जिससे कुतर्क करनेवाले जे जीवके अस्तित्व अर्थात् होनेको तथा परमेश्वर को नहीं मानते जीवके पुनर्जन्म गमन आगमन को नहीं मानते उनके कुतर्क को सुनकर भ्रम में न पड़ैं सारांश प्रयोजनमात्र वर्णन किया जाताहै जो इससे विशेष देखनाहो तौ इसी प्रयोजन से कि जिसमें भाषा में सब मनुष्य समझसकैं सबके हितके अर्थ मैं सज्जन महात्माओं का कृपापात्र वैशेषिक न्याय पातांजल सांख्य वेदांत शास्त्रोंके भाष्य को भाषामें वर्णन करके पश्चात् इसग्रन्थ को सबके सारांश विषयमें वर्णन करने का प्रारंभ किया है उनभाषा में वर्णन किये हुये शास्त्रों में देखना चाहिये अब धर्म आदिका लक्षण परीक्षा सहित निर्णय कियाजाता है क्योंकि शास्त्र में निर्णय के अर्थ तीनतरह की प्रवृत्ति होती है उद्देशलक्षण परीक्षा नाम करके पदार्थमात्रके कहने को उद्देश कहते हैं यथा

धर्म मोक्ष आत्मा परमात्मा नामकरके कहागया जो उद्दिष्ट है अर्थात् उद्देश किया गयाहै उसके तत्त्व ज्ञानके भ्रमका दूर करनेवाला जो धर्महै वह लक्षणहै जिसका लक्षण कहा गया है वह जैसा लक्षण कहागया उसी तरह है वा नहीं है इसको प्रमाणों से निश्चय करना परीक्षा है अब उद्दिष्ट जोधर्म आदि हैं उनका लक्षण परीक्षा करके निर्णय किया जाताहै मीमांसा दर्शनमें॥

चोदना लक्षणार्थोधर्मः॥

अर्थ जो वेदमें प्रेरणा लक्षण अर्थ अर्थात् विधिवाक्य है वह धर्महै अर्थात् जिस जिसमें वेद प्रवृत्त होनेको कहा है वा उपदेश कियाहै वह धर्म है यह लक्षण कहाहै व इसीसे अधर्मका भी लक्षण सिद्ध होताहै अर्थात् जिसको वेद निषेध किया है वह अधर्म है वैशेषिक दर्शन में धर्मका लक्षण यह कहा है॥

यतोऽभ्युदयनिश्श्रेयस्सिद्धिःसधर्मः॥

अर्थ जिससे स्वर्ग व मोक्षकी सिद्धि होतीहै वह धर्म है अथवा यह अर्थ है कि जिससे अभ्युदयद्वारा अर्थात् तत्त्व ज्ञानद्वारा मोक्ष की सिद्धि होतीहै वह धर्महै (यहां मध्यपद लोपी समास होनेसे द्वारशब्द का लोप होगया है) यह संस्कृत जाननेवालों के अर्थ लिख दिया है भाषा में कुछ प्रयोजन समाससे नहीं है दोनों तरहसे जो मीमांसा में कहा है व जो वैशेषिक में कहा है

धर्मका लक्षण यथार्थ है मीमांसा दर्शन में जो धर्मका लक्षण कहाहै व जो वैशेषिकमें कहाहै दोनों में विरोध नहींहै क्योंकि वेदमें उसीमें प्रवृत्त होनेकोकहा है जिससे स्वर्ग वा मोक्षप्राप्त होताहै स्वर्ग व मोक्ष अदृष्ट पदार्थ हैं इनका प्रमाण जहांतक अनुमान बुद्धि बिचार से हो सकताहै वहांतक अनुमानसे जानाजाताहै उससे विशेष वेद शब्दही से प्रमाण होता है अब यह परीक्षा करना चाहिये कि यह किसतरह प्रमाण होता है कि स्वर्ग व मोक्ष धर्मसे प्राप्त होताहै जो यह कहाजाय कि वेदमें लिखाहै इससे प्रमाण के योग्य हैं तो यही किसतरह निश्चय हो सकता है कि जो वेदमें लिखा है वह सत्य है क्योंकि वेदमें जोलिखाहै वह कहींसत्य कहीं असत्य जानपरता है वेद में लिखा है पुत्रकामोयजेत् अर्थ पुत्र की इच्छा करनेवाला पुत्रके अर्थ यज्ञकरै परन्तु पुत्रके अर्थ यज्ञ करनेपर किसीके पुत्र होता हैं किसी के नहीं होता इत्यादि दृष्ट फलके असत्य होने से अदृष्ट स्वर्ग प्राप्ति आदिफल जो वेदमें कहाहै उनके भी असत्यहोने का अनुमान होताहै उत्तर यहहै कि कर्म वा कर्त्ता वा साधनमें विरुद्ध गुण होनेसे अर्थात् यथोचित न होने से चाहै वह अज्ञानतासे हो चाहै किसी अन्य कारण विशेष से हो फल सिद्ध नहीं होता वेदवाक्य असत्य नहींहै यथा न्यायशास्त्रके द्वितीयाध्याय केप्रथमाह्निक में लिखाहै ॥

नकर्मकर्तृसाधनवैगुण्यात्न्या० अ०२ आ०१ सू० ५७॥

अर्थ जो पूर्वपक्षमें वेदके असत्य होनेमें हेतु वर्णन कियाहै उसके उत्तरमें इससूत्र में कहाहै कि नहीं वेद वाक्य असत्य नहीं है कर्म व कर्ता व साधनके विरुद्ध होनेसे फल सिद्ध नहीं होता अर्थात् क्रियामें भेद हो जाने वा कर्तामें दोप होने वा हविआदिके यथोचित व शुद्ध न होनेसे फलमें भेद होताहै युक्तिअनुमानसे यह सिद्ध होता है कि जो वेदवाक्य असत्य हो तौ उसका फल कभी न होना चाहिये उसी में फलका होना व उसीमें न होना दो विरुद्ध धर्म नहीं हो सकते जो यह कहाजाय कि जिसके पुत्र होनहारहै उसने यज्ञ किया व पुत्र हुआ तौ यह मानलिया जाता है कि यज्ञ करनेसे हुआ जिस के नहीं होना है उसके नहीं होता इससे कर्त्ता कर्मसाधनमें विरुद्ध गुणहोना मानना कल्पनामात्र है इसका उत्तर यह है कि प्रत्यक्ष अर्थात् दृष्ट प्रमाण की असत्यता व उसके असत्यता से अदृष्टके भी असत्य होने का जिसतरह पूर्वपक्ष में अनुमान किया जाताहै इसीतरह दृष्ट प्रमाण के सत्य होनेसे अदृष्ट के सत्य होनेका अनुमान होना उचित है जो यह संदेह हो कि दोनों में समकल्पना होने से सत्य होने का विशेप निश्चय नहीं होता तौ अन्यहेतुओंसे वेदके सत्यहोनेका

निश्चय होताहै यथा न्यायशास्त्र के पूर्वोक्त अध्याय व आह्निक में कहाहै ॥

मन्त्रायुर्वेद प्रामाण्य वच्चतत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात् ॥

अर्थ मंत्र आयुर्वेदके प्रामाण्यके तुल्यआप्तके प्रामाण्य से उसका प्रामाण्य है अर्थात् वेदका प्रामाण्य है तात्पर्य्य यह है कि वेदमें जो मन्त्र कहा है आयुर्वेद में जो औषध बर्णन कियाहै कि इसमें यहगुणहै जिसमंत्र व औषध में जैसा गुण जिस बिधान से लिखा है उस प्रकारसे करने में वही गुण व फल प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै जिसतरह मंत्र व आयुर्वेद बैदकका गुण व फल प्रत्यक्ष सिद्धहोना देखपरताहै इसीतरह अदृष्ट अर्थके सत्यहोने में भी अनुमानकरना योग्यहै क्योंकि आप्त प्रमाणहोने काहेतु दृष्ट व अदृष्ट फल दोनोंमें एकही तुल्यहै अर्थात् जोसाक्षात्धर्मको व अदृष्ट पदार्थकोजानकर भ्रम रहित ज्ञानको प्राप्तसबप्राणियों परदया करके उपदेश करता है कि यह त्याग करने के योग्य है व यह त्याग करने का हेतु है व यह ग्रहण करनेके योग्य है अथवा प्राप्त होने के योग्य है व ग्रहण करने व प्राप्त होने में यह हेतुहै वह वक्ता ईश्वर एकहीहै जिन संसारी जीवों को अपनेसे अदृष्ट व गुप्त गुणधर्म जाननेको सामर्थ्य नहींहै उनको सिवाय उसवस्तुके जाननेवालेके उपदेशके अन्य

कोईद्वारा जाननेका नहींहै इससे ईश्वर वेदद्वारा जोसब पदार्थकेगुण धर्मका यथार्थज्ञाताहै व सत्यस्वरूप है सब जीवोंके कल्याण के अर्थ वेद द्वारा धर्म उपदेश कियाहै जो यहशंकाहो कि ईश्वर इन्द्रिय शरीर रहित किसतरह वेदको कहाहै तो उत्तर यह है कि आदि सृष्टिमें अग्नि वायु सूर्य्य तीन पुरुष उत्पन्न होकर वपक्रिया तपकरने से उनके हृदयमें सम्पूर्ण ज्ञान परमेश्वर की अनुग्रह से उदयहुआ उस ईश्वर अनुग्रहसे जो अनुभव हुआहै उस से उन्होंने ऋग्यजुसाम तीनोंवेदोंको कहाहै अथर्व वेद में इनतीनोंके विषयसे कोई भिन्न विषय विशेष नहींहै जो इनमें वर्णनहै वहीकुछ विशेषता सहित अथर्व मेंभी है इससे तीनहींके अंतर्गत मानकरचौथा मुख्य नहीं गि-नाया इसतरह अग्नि आदिके द्वारा ईश्वर अपने उपदेश रूप वेदको प्रकट कियाहै अग्नि आदिसे ब्रह्मा जी वेद को पढ़ा वा ग्रहण कियाहै व ब्रह्माजीसे सम्पूर्ण ऋषियों को वेदका प्रकाश हुआ है इसका प्रमाण श्वेताश्वतर आदि उपनिषदोंसे होताहै व मनुस्मृतिके प्रथमअध्याय मेंभी अग्नि आदिसे ब्रह्माजीको वेदों का लब्धहोना वा ग्रहण करना सिद्ध होताहै यथा॥

अग्निवायुरविभ्यस्तुत्रयंब्रह्मसना
तनं दुदोहयज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुस्सा
मलक्षणम्॥

अर्थ यज्ञसिद्ध होनेके अर्थ अग्निसे ऋग्वेद वायुसे यजुर्वेद सूर्य से सामवेद सनातनको ब्रह्माजी लेते भये तथा शत पथकांड ११ अ० ५ में लिखाहै॥

तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयोवेदाअजायन्ताग्ने ऋग्वेदोवायोर्यजुर्वेदःसूर्यात्साम वेदः॥

अर्थ उन तपकियेहुयोंसे तीनवेद उत्पन्नहुये अग्नि से ऋग्वेद वायुसे यजुर्वेद सूर्यसे सामवेद कहीं भिन्न भी चौथा अथर्ववेद अंगिरासे होना कहाहै अग्नि आदिके ज्ञानमें प्रेरणा करके इनकेद्वारा परमेश्वरने वेदोंको प्रकाशित कियाहै इससेउपचार अर्थसे ईश्वर वाक्यवेद कहे गयेहैं ईश्वरमें भ्रमअज्ञान न होनेसे वेदकेसत्य होने में संशय नहीं होसकता जो केवल तर्कवादी इसके मानने में संदेह करै तौ पूर्वोक्त हेतुमंत्र औषधमें जोगुण प्रत्यक्ष सत्य देख परता है इससे यहसिद्ध होताहै कि किसी सब पदार्थोंके गुण धर्मोंके ज्ञानसंयुक्त पुरुषका बचन वेदहै व जिसमें वेदोक्त फलमें कुछभेद होता है उसमें अवश्य करके कर्ताके साधन व यथार्थ जानने व जिस्त रह करना चाहिये उसतरह न करने में भेद है क्योंकि जिसमें जो गुणहै उसमेंउस गुणके विरुद्धगुण व धर्म नहीं होसकता बुद्धिमान इसको अच्छी तरह समुझ सकताहै कि एक अवस्थामें बिना अवस्थान्तर व कारण

विशेष भेदहोनेके एकद्रव्यका एकही गुण व धर्म होसकता है एकमें उसी धर्मकाहोना व न होना बिना कोई कारण विशेष भेदके एकही अवस्थामें नहीं होसकता जैसे अग्नि में उष्णता गुणहै तो इस उष्णता गुणमें बिना कोईहेतु व अवस्था भेदके भेद नहीं हो सकता जो कोई औषधि मंत्र आदिकेद्वारा अग्निको हाथमें लेतेहैं व नहीं जरते तो जिस कारणसे उनको उष्णतानहीं जानपरती उसके योगके होनेकेहेतुभेदसे गुण भेद होताहै नहींबिना कोई कारण विशेष द्रव्यके गुण व फल में भेद नहीं होता इसी तरह जबवेदके कहे अनुसार फलहोताहै तब जब उस तरह नहो तब यह अनुमान करना चाहियेकि जो उसमें ऐसाफल होनेका सत्ता न होता तो ऐसाफल कभी न होता जो होताहै तो उसमेंसत्ताहै परंतु जब नहीं होता तबउसका सत्ताहोना असत्य नहींहै हेतु विशेषके भेदसे अर्थात् कर्त्ता के अथवा कर्मके अथवा साधन में विरुद्धगुणहोनेसे फलसिद्ध नहींहोता यह अनुमान करने के योग्यहै व मंत्र आयुर्वेदके अनेक प्रत्यक्ष गुण फल सिद्धहोनेसे अदृष्ट फलकेभी सत्यहोनेका अनुमान होता है जो यहकहा जाय कि नहीं दृष्टही मात्र जो प्रत्यक्ष सिद्धहोवे वही मानना चाहिये अदृष्टको न मानना चाहिये तो एकहीके आप्तवाक्यमें एक अंशमें सत्य मानने व एक अंशमेंसत्य न माननेमें कोई हेतु विशेष अंगीकार करने के योग्य नहीं है इससे मंत्र व आयुर्वेदकी तुल्य आप्तवाक्यके प्रमाणसे अदृष्ट अंशमें भी वेद प्रमाणके

योग्यहै व वेद में कहागया धर्म सत्यहै यह अंगीकार करना चाहिये इसतरह वेदके शब्द प्रमाणसे धर्मसिद्ध होताहै यहां प्रयोजनमात्र शब्दप्रमाणमें वेदप्रमाण के निर्णय को कहाहै प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द सब प्रमाणोंके सत्यहोनेको लक्षण पूर्वक परीक्षा शंकासमाधानविशेष देखाचाहैं तौन्याय दर्शन गोतम सूत्रकेदूसरे अध्यायमें व उसके भाष्यमें देखलेवैं इसतरह वेदके सत्य होनेके प्रमाणसे धर्मके सत्य होनेका प्रमाण होताहै यह मीमांसा दर्शनका धर्मके लक्षण कहनेका अभिप्राय है वैशिषेक दर्शनमें जो धर्मकालक्षण कहाहै कि जिससे स्वर्ग व अपबर्ग अर्थात् मोक्षसिद्ध होताहै वहधर्महै अर्थात् वह परमेस्वर कृतउचित नियम जिससे स्वर्ग व मोक्षकी सिद्धि व प्राप्तिहोतीहै वहधर्महै वहउचित नियमबुद्धिद्वारा भी उचित व अनुचितके विवेकसे तथाअनुमान से उसके प्रवर्त होनेमें न्यायकारी उत्तम विषमता रहित परमेश्वर करके अवश्य स्वर्ग अपवर्ग सुखरूप उत्तम फल नियत किया जाना सिद्ध होताहै जोस्वच्छ बुद्धि कुसंग बिषय अभ्यास दोष मल रहितसे विचार करके देखैं तौ यह ज्ञान विवेकहीसे सिद्ध होजाताहै कि ऐन्द्रिक सुखअनित्यहै जो नाशमानहै उसमें एकदिन दुःखहै इससे जो नित्य पदार्थहै व जो नित्य सुखहै उसके जानने वप्राप्त होनेका बिचार व साधन करना चाहिये तथा विवेक से जो धर्म अहिंसा सत्य चोरी न करना शौच क्रोध न करना क्षमा आदिका उत्तम होना बिना किसी ग्रन्थके

अपेक्षाभी सिद्ध होताहै यहसब कोई बिचारसे जानता
है कि जिस्तरह हमारे देहमें दुःख बोध होताहै इसी
तरह दूसरे जीव चेतनको होताहै इससे हिंसा करना
उचित नहींहै बुद्धिहीअपनेमें उचित अनुचितको निश्च-
य करतीहै इसके विरुद्ध करना जानकर अनुचित में
प्रवर्त होनाहै जबकोई अपनेसे हीन जानकर दूसरेको
दुःख देताहै तबसर्व समर्थईश्वर सम्पूर्ण सृष्टिका कर्त्ता
उसको अवश्य दण्डदेगा इससे हिंसा न करना चाहिये
हिंसा न करना धर्महै तथा बिचारसे यह सिद्ध होता
है कि जिसतरह अपनेको कोई जिस में अपना हित व
प्रयोजन न हो उसमें किसीबात व विषयका विश्वास
करावे औरअंतमें वह असत्य होतौ उस असत्यमेंअपने
को दुःख व क्रोध होताहै व फिर सत्य बातमेंभी उस
असत्य कहनेवालेका बिश्वास नहींहोता जो यह संशय
हो कि कहीं सत्यही कहनेमें हृदयमें खेद होताहै तो
यह बिचारना चाहिये कि जब अधर्म व अनुचित कर्म
करताहै व कहताहै व छल कपट भय लज्जाको बातहै
उसी के करने व कहने वालेको दुःख व क्रोध होताहै
यह दुःख मानना व क्रोध करना उसका यथार्थ नहीं
है केवल अज्ञान बशसेहै जिसके सुननेसे उसको क्रोध
व लज्जा व दुःख होताहै व सुनना व कहना अनुचित
समुझताहै उसमें प्रबर्त होनेको क्यों अनुचित नहीं समु
झता उसमें प्रवर्तही न होनाथा न ऐसी बार्ता करना
था कि जिसके सुनने व कहनेसे खेद होताहै व विशेष

करके सत्यमें यह विचारने के योग्यहै कि अनेकअधर्म कर्म असत्यके द्वारा होतेहैं कोई अधर्म विना असत्यता के सहाय नहीं हो सकता क्योंकि चोरीपर स्त्री गमन आदि अनुचित कर्ममें सत्यबोलनेसे दण्ड क्लेश निन्दा आदिका भय होताहै इससे अधर्ममें प्रवृत्त होनेवाला अवश्य असत्य कहैगा जितने अधर्म कर्महैं सबकामूल कारण असत्यहै असत्यको बराबर और कोई पापनहीं है व एक सत्य बोलनेसे अनेक अधर्म का नाश होताहै जो सत्य बोलनेका प्रण करैगा वह चोरीपरस्त्री गमन हत्या पर निन्दा आदि अनुचितमात्र सत्य भंग होने के भयसे नहीं करसकता इससे सत्य सब धर्मका मूल है व बिना सत्य हृदय होनेके सत्यरूप परमेश्वर का किसी तरह ज्ञान नहीं होसकता जिसको असत्यता प्रियहै उसको ईश्वरकी प्राप्ति होना असम्भवहै इससे सत्यको ग्रहण करना उचितहै तथा यह समझनाचाहि-ये कि जिस्तरह अपने धनके हानिमें अपने को दुःख होताहै इसीतरह दूसरेको उसके धनहानि होनेमें दुःख होना अनुमानसे सिद्धहै इससे चोरी आदिसे परकी हानि करना उचित नहींहै शौचसे शरीर व चित्त शुद्ध व प्रसन्न रहताहै क्रोध होनेसे चित्तमें दुःख अशान्तता को प्राप्ति होतीहै इससे क्रोध त्यागको योग्यहै व क्षमा के साधनसे चित्तशान्त होताहै शान्ततासे सुख होताहै इस्तरह अपनेही विचारसे उचित अनुचित का बोध होताहै जो विचार अनुमान वेद प्रमाणसे उचित सिद्ध

होताहै वह धर्महै जो अनुचित व निषेध संयुक्त सिद्ध
होताहै वह अधर्महै जो उचितहै वही उत्तमहै उत्तमका
फलभी स्वर्ग आदि सुख उत्तम अनुमानसे सिद्ध होता
है व जो अनुचित निकृष्ट निन्दितहै निकृष्ट का फलभी
दुःख रूप होना अनुमान किया जाताहै अन्यहेतु धर्म
अधर्म में यहभीहै कि स्वर्ग अपवर्गतो अदृष्ट फलहैं.
धर्ममें प्रवर्त्त व साधन करनेवालेको इसीशरीरमें अपूर्व
शक्ति अनुभव सुख फल विशेष जो विना साधन वालों
को नहीं होता प्राप्त होताहै इसको साधन करने वाले
जिसको कुछभी विशेषता प्राप्तिहै वही निश्चय करसक-
तेहैं इस दृष्ट फलके होनेसे अदृष्ट फल स्वर्ग अपवर्गके
सत्य होनेमें निश्चय होताहै इससे धर्म व धर्मका फल
स्वर्ग अपवर्ग वेदवाक्य व अनुमान प्रमाणसे सिद्धहै.
मोक्षको जो धर्मसे सिद्धहोना कहाहै इसका अभिप्राय
यहहै कि मुख्य भावसे किसीकर्म व धर्मका फलमोक्ष
नहींहै मोक्ष केवल ज्ञान व परमेश्वरमें चित्तके अति ए-
काग्रता होने से समाधि करके आत्मा परमात्माके ऐ-
क्यता भावहोनेका फलहै परन्तु धर्म करके प्रथम चित्त
शुद्ध होताहै शुद्ध चित्तमें ज्ञान विवेक विराग परमेश्वरका
प्रेम ध्यान होताहै इससे उपयोगी आदि कारण होनेसे
उपचारअर्थ करके धर्ममोक्षका हेतुहै धर्म व कर्मका मु-
ख्यफलमोक्ष नहींहै क्योंकि सम्पूर्ण दुःखसे रहित होना
अत्यंतनित्य सुख होनेको मोक्ष शास्त्रमें कहाहै कर्म धर्म
आचरण सब अनित्यहैं अनित्य का नित्य फलमोक्ष

होना असंभवहै नित्य सत्य आनन्दस्वरूप परमात्मा के ज्ञान व प्रेम समाधिहोसे परमात्माके अनुग्रह नियम विशेषसे मोक्ष होनेका प्रमाण होताहै स्वर्गआदि सुख यज्ञ आदि कर्म व धर्म आचरणके मुख्य फलहैं अब किस्तरह धर्म द्वारा परमेश्वर ध्यान से स्वर्ग अपबर्ग को सिद्धि होतीहै व धर्मके अंग क्याहैं इसका आगे वरणन किया जायगा॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालु निर्मितेधर्मपरीक्षाव्याख्यानेचतुर्थो ऽध्याय:समाप्त: ४॥

अथात्मलक्षणपरीक्षात्म नित्यत्व प्रेत्यभाव वर्णनप्रारंभः॥

धर्मके अंग व साधन वरणन करनेके पूर्वही यह बरणन होना चाहिये कि धर्म प्रमाण सिद्ध है तौ भी प्रथम यह परीक्षा करना उचित है कि आत्मा कोई पदार्थ इन्द्रिय व शरीरसे भिन्न है व नहीं है व हैतौ उसका क्या लक्षण है मरणे के पश्चात् रहताहै व नहीं जीवका प्रेत्यभाव अर्थात् पुनर्जन्म होताहै व नहींक्योंकि जो यह सिद्धहोवै कि जीव कोईपदार्थहै व मरनेकेपीछे रहताहै व कर्म अनुसार फिर उत्तम व निकृष्ट योनिमें उत्पन्न हो धर्म अधर्म अनुसार सुख व क्लेश को प्राप्त होताहै तौधर्म योग साधन परिश्रम करना उचित है व जो मरणे के पीछे जीवका रहना सिद्ध नहो तौ धर्म

साधन में वृथा परिश्रम करना शरीर व इन्द्रिय जन्य मैथुन आदि सुख में हानि करना है उत्तर यह है कि आत्मा इन्द्रियोंसे व शरीरसे भिन्न चेतनहै व मरणे के पश्चात् फिर उत्पन्न होता है आत्मा अर्थात् जीव नहीं मरता केवल शरीर त्याग करता है कर्म अनुसार इस लोक व अन्य लोक में दुःख सुख भोग करता है अब लक्षण पूर्वक जीवात्मा का इन्द्रिय व शरीरसे भिन्न होने आदिकी परीक्षा कीजाती है वैशेषिक दर्शन में आत्माका यह लक्षण वर्णन किया है॥

प्राणापाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तरविकाराःसुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नाश्चात्मनोलिङ्गानि

अर्थ बाहर से वायुको भीतर लेना भीतरसे वायुको निकालना आंख को पलकोंसे बन्द करना व खोलना प्राणका धारण करना ज्ञान होना अपनी इच्छासे गमन करना इन्द्रियोंको विषयमें चलाना उनसे विषयों को ग्रहण करना अन्तर विकार क्षुधा तृषा ज्वर पीड़ा आदि होना सुख दुःख इच्छा द्वेष होना और प्रयत्न करना ये सब आत्मा केलिंग अर्थात् आत्माके कर्म और गुणके चिह्न हैं क्योंकि यह चेतनही आत्मा के संयोग से व चेतनही में होसक्ते हैं जड़में नहीं होसक्ते न्याय दर्शन में प्राण अपान आदि अर्थात् श्वास लेना

व निकालना आदि जो शरीर व वायु व आत्मा तीनोंके सम्बंधसे होते हैं केवल आत्मा के गुण विशेष नहीं हैं छोड़कर संक्षेप से आत्माका विशेष लक्षण यह वरणन किया है ॥

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनोलिंगमिति ॥

अर्थ इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञानोंका होना आत्मा के होनेका चिह्नहै यहआत्माका लक्षण न्याय शास्त्र में कहाहै अभिप्राय यह है कि इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञान जिसमें व जिससे होते हैं वह आत्मा है क्योंकि इच्छा आदिकरना व होना चेतन आत्मा में संभव है जड़ शरीर व इन्द्रिय के धर्म इच्छा आदिनहीं होसक्के अब इस लक्षण संयुक्त आत्मा के इन्द्रिय व शरीर से भिन्न चेतन होने में क्या हेतु व प्रमाण है यह बर्णन किया जाता है प्रथम दर्शन व स्पर्शन से एकही अर्थ ग्रहण होने के हेतु से आत्मा इन्द्रिय व शरीरसे भिन्न है यह सिद्ध होता है अभिप्राय यह है कि किसी अर्थ का जिसका ज्ञान देखने से हुआ था स्पर्श से जब उसीका ज्ञान होता है तब ज्ञानने वाला यह कहता है कि जो मैं नेत्र से देखाथा वही त्वच से स्पर्श करताहूं अथवा जोस्पर्श किया था वही वस्तु है जो अब आंख से देखताहूं इत्यादि नेत्र व त्वच यह दो

इन्द्रिय भिन्न हैं भिन्न विषयको ग्रहणकरते हैं नेत्रका विषय रूप त्वच से ग्रहण नहीं किया जाता घ्राणका विषय गंध त्वच व नेत्र करके ग्रहण नहीं किया जाता इत्यादि एक इन्द्रियके जानेहुये विषयको अपने२ भिन्न मात्र ग्रहण करनेके सामर्थ्यसे दूसरे इन्द्रियसे स्मरण किया जाना असंभवहै जो यह कहा जाय कि त्वचसब इन्द्रियोंमें सामान्यहै तौ त्वचके सामान्य होनेसे एक इन्द्रियके विषयका ज्ञान दूसरे इन्द्रियको नहीं होता यह प्रत्यक्षहै जो एक दूसरेके विषयका ज्ञान एकदूसरे को होता तौ नासिकासे स्वाद जिह्वासे गंध आदिका ग्रहण होता स्पर्श मात्रका होना यद्यपि सब इन्द्रियोंमें त्वचके सामान्य होनेसे बोध होताहै परन्तु रूप गंध शब्द आदि विना त्वच संयोग दूरहीसे नेत्रआदि करके ग्रहण कियेजातेहैं इससे भिन्न विषयहैं दूसरे इन्द्रियके विषयके ग्रहण व स्मरणमें अन्य इन्द्रिय समर्थ न होने से जो एक इन्द्रियके विषय द्वारा किसी पदार्थको जान कर फिर अन्य इन्द्रिय द्वारा उसी पदार्थको स्मरणसे जानताहै वह एक दो व अधिक इन्द्रियोंमें समानज्ञाता व कर्ता इन्द्रियोंसे भिन्न आत्माहै यह अनुमान होताहै अब यह शंकाहै कि शरीर इन्द्रिय संघातसे भिन्न चेतन नहींहै क्योंकि इन्द्रियोंके सत् होनेमें विषयोंका

९ होताहै इन्द्रियोंके सत् न होनेमें अर्थात् दोष संयुक्त व नाश होनेमें विषयोंका ग्रहण नहीं होता जैसे अंधेको रूपकाज्ञान नहीं होता अथवा जिसके नेत्रों में

मोतियाविन्दकादोषहोताहै यद्यपिदेखनेका कर्णनेत्रगोल कबनेरहतेहैं परन्तु इन्द्रियके सतून होनेसे रूपका ज्ञान नहींहोता कर्ण इन्द्रियकेसतुनहोनेसे शब्दनहीं सुनपरता जिसके होने में जोहोताहै नहोनेमें नहींहोता उसीकावह गुण व धर्मजानाजाताहै इन्द्रियकेहोनेमें विषयका ग्रहण होताहै न होनेमेंनहींहोता इससे इन्द्रियही विषयग्रहण कर्त्ताहैं अर्थात् नेत्रही रूपको देखताकर्ण शब्दकोसुनता है इत्यादि इन्द्रियही अपने अपने विषय ग्रहण करनेमें चेतनहैं जब इन्द्रियके होनेसे विषयका ग्रहण होताहै न होनेसे नहींहोता तब इन्द्रियसे भिन्न अन्यचेतनकल्पना करनेसे क्या प्रयोजनहै क्योंकि संदेह युक्त कल्पना मात्रसे अन्य चेतनका माननाहै निश्चय कुछ नहींहै उत्तर यहहै कियह प्रतिषेध युक्त नहींहै जोएकही इन्द्रिय सब विषयका ग्रहण करने वाला चेतन होता तो अन्य चेतनका अनुमान नहोसका परन्तु इसहेतुसे कि इन्द्रिय व्यवस्थित विषयहै अपनेही अपने विषयमात्रको ग्रहण करने में समर्थहैं तिससे इन्द्रियोंसे भिन्नअन्य चेतनसब विषयों का ग्रहण करने वाला अनुमान किया जाता है क्योंकि इन्द्रियके नाशहो जानेपर भी उसके विषयका स्मरण होता है यथाचक्षु इन्द्रिय के नाशहो जाने पर रूपका स्मरण होता है यद्यपि चक्षु कर्णके न होने से वर्तमान रूप शब्दका ज्ञान नहीं होता परन्तु पूर्वके स्मरण से यह अनुमान सिद्ध होताहै कि नेत्रके ननष्टह जानेपर अन्य इन्द्रिय रूप ग्रहण करनेमें समर्थ नहींहैं

जो चक्षु इन्द्रिय रूप ग्रहण कर्त्ता रहै उसका नाश हो गया उसके नाश होनेके साथ उसके विषय का ज्ञान भी नाशहो जाना चाहिये अन्यके जाने हुये पदार्थका स्मरण अन्यको नहीं होता परन्तु रूप ग्रहण करने वाले इन्द्रियके नाश होनेपर भी पूर्व प्रत्यक्ष रूपके स्मरण से इन्द्रियसे भिन्न चेतन होने का अनुमान होताहै अथवा अर्थ विशेषके दूरसे गंधमात्र के ज्ञानसे विना उसके देखने व भोजनके उसके रूप व रस का स्मरण होता है घ्राण इन्द्रिय में रूप व रस ग्रहण करनेकी शक्ति नहीं है कि अपने पूर्वज्ञान से स्मरण करे जिनचक्षु व रसना इन्द्रियको रूप व रस ग्रहण करनेकी शक्ति है उनको कुछ प्रत्यक्ष नहीं है क्योंकि कुछ प्रत्यक्ष होने से अप्रत्यक्ष का जिसका उसके साथ सम्बंध है उसका ज्ञान स्मृति द्वारा होताहै गंधजो प्रत्यक्ष हुवा है वह घ्राणको प्रत्यक्ष हुवा है घ्राणके प्रत्यक्षसे चक्षु व त्वच इन्द्रियको अनुमान पूर्व कहेहुये हेतुसे होना संभव नहींहै तिससे गंधमात्रसे अन्य इन्द्रिय के विषयको जो स्मरण करता है वह सर्व इन्द्रिय व्यापक चेतन इन्द्रियों से व्यतिरिक्त है देह आदि का संघात मात्रही नहीं है अर्थात् देह इन्द्रिय प्राण संघात मात्रही नहीं है तथा एक इन्द्रिय के विषय प्रत्यक्ष होनेसे अन्य इन्द्रियमें उस इन्द्रिय के विषय स्मरणसे विकार होता है जैसे किसी स्वादिष्ट पदार्थ के गन्धमात्र से जिसको उसके स्वादमें अति अभिलाषा है स्वाद के स्मरणसे उसके रसन इन्द्रिय

में जल प्राप्ति विकार होताहै इसी तरह रूप सौंदर्य्य आदिसे अन्य इन्द्रियोंमें विकार होता है अन्यइन्द्रिय के ज्ञानेहुये अर्थको अन्य इन्द्रियसे स्मरणहोना संभव नहींहै तिससे चेतन पुरुष जो अन्य इन्द्रियके बिपयके प्रत्यक्ष करनेसे उसका जो दूसरे इन्द्रिय के साथ सम्बंधहै उसको स्मरण करताहै उससे अन्य इन्द्रिय में विकार होताहै इन्द्रियों से भिन्नहै यद्यपि स्मरण के बिषय अनेकहैं पूर्वहो के स्मरणसे सुखहेतुमें इच्छा दुःख हेतु पदार्थमें द्वेष व ग्रहण व त्याग में यत्न व अनुमान द्वारा पदार्थ ज्ञानहोताहै इन लक्षणों से चेतन आत्माका इन्द्रियों से भिन्न होने मात्रके प्रमाण से संक्षेप प्रयोजन मात्र बरणन किया है अब यह शंका है कि नहीं देह आदिके संघात से व्यतिरिक्त आत्मा नहींहै जो दर्शन स्पर्शनआदि भिन्नइन्द्रियों के बिषयसे एक अर्थ ग्रहण होना आदि जे आत्माके प्रतिपादन के हेतुहैं इन सबका मनमें होना संभवहै तिससे शरीर इन्द्रिय मन बुद्धि संघातही जन्यचेतन शक्तिआत्मा शब्द वाच्यहै उत्तर यहहै कि मन ज्ञाता चेतन पुरुष आत्मा का ज्ञान साधन करण संभव होनेसे आत्माका निषेध नहीं होसकता अर्थात् आत्मा चक्षु करण करके वा चक्षु करण द्वारा देखताहै घ्राण करण करके सूंघताहै तथा रसन आदिमें जानना चाहिये परन्तु चक्षुआदि आत्मा नहींहैं आत्माके ज्ञान साधनइन्द्रियहैं इसीतरह अंतःकरण इन्द्रिय सुख आदि जाननेका करण मनहै मन-

हीका आत्माहोना सिद्धनहीं होता जो जाननेवाले चेत-
नको यह कहाजावें कि उसका आत्मा नाम नहींहै मन
नामहै तौ अर्थभेदनहीं होता केवलनामभेद होसकताहै
इसी तरह जो यह कहाजावे कि मनका मननाम नहीं
है मति साधन नामहै इसतरह खण्डन करने में सब
इन्द्रियोंका लोप व सबके नये नाम होजायंगे इससे
यह जानना चाहिये कि केवल यह नियम मात्रहै कि
जीवको करण विशेषद्वारा पदार्थ बिशेष का ज्ञानहोता
है इसनियमसे मनहीका आत्माहोना व आत्माका प्रति-
षेध नहीं होसकता रूपआदिसे सुख आदि विषयांतर
है जिसतरह चक्षु से गंध का ग्रहण व बोध नहीं होता
रूप मात्रका होताहै गंधके ग्रहणको दूसरा करण घ्राण
है चक्षु घ्राण दोनोंसे रसका बोध नहींहोता रस ग्रहण
कर्त्ता रसना इन्द्रिय भिन्नहै इसी तरह शेषमें जानना
चाहिये चक्षु आदि किसी वाह्य इन्द्रिय से सुख आदि-
का ग्रहण नहींहोता सुख दुःख ग्रहण करनेका मुख्य
करणमनहै व सबइन्द्रियोंके बिषयकाज्ञानभी मनसंयोग
सहित होताहै अबयह संशयहै कि सब इन्द्रियोंके विष
यका ज्ञानभी मनके संयोग सहित होताहै व सुख दुःख
आदिका ज्ञान मनसे होताहै तौ मनसे कोई आत्मा
भिन्नहै यह किसतरह प्रमाण होता है व सुख दुःख भी
शरीर त्वच इन्द्रिय आदिद्वारा बोधहोताहै मनही केवल
सुख दुःख आदिका करण किसतरहसिद्ध होताहै उत्तर
यहहै कि न्यायदर्शनमें मनकालक्षण यहवरणनकियाहै॥

युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम् ॥

अर्थ अनेकका ज्ञान एकसाथ न होना मनका लिंगहै अर्थात् मन ऐसा पदार्थहै कि जब वह किसी पदार्थ में व्यासक्त होता है तब चेतन आत्मा अन्य पदार्थ को नहीं जानता व मन एकही एक पदार्थको ग्रहण करताहै एकसाथ अनेकको ग्रहणनहीं करता परन्तु मनमें अति बेग अर्थात् शीघ्रगतिहै इससे साधारणमें एक एकको क्रमसे मन ग्रहण करताहै यह जाना नहींजाता सूक्ष्म दृष्टि व बिचारसे बोध होसकता है परन्तु जब किसी पदार्थ में आसक्त व लग्न होकर स्थिर होताहै तब प्रत्यक्ष बोध होता है कि उस समय अन्यबिषय व पदार्थ का ग्रहण नहींहोता एकही ज्ञान ग्रहण करनेसे मनके अणुहोने अर्थात् सूक्ष्म होनेका प्रमाण होता है ऐसा जो पदार्थहै कि जिसके एक विषयमें लग्न होने से चेतन उसीके ज्ञानको लाभ करताहै अनेक ज्ञानको ग्रहण नहीं करता व अणु रूप है वह मन अन्तरका इन्द्रियहै जो मन अणु न होता तो व्यापक होनेसे एक-ही साथ सबइन्द्रियोंके विषयको अनेक ज्ञानकोधारण व ग्रहण करता अणु होनेके कारणसे जिस इन्द्रियके साथ मनका सन्निकर्ष होताहै उसके बिपयको ग्रहण करताहै व जिस इन्द्रियके साथ मनका संनिकर्ष व

संयोग नहींहोता उसके विषयका ज्ञाननहींहोता चेत
नआत्मा विभुहै अर्थात् व्यापक है सब इन्द्रिय व शरीर
में उसका सत्तारहताहै जो सब इन्द्रिय व शरीरमें आ-
त्माका सत्ता नहो तौ जब एक विषयमें मन व्यासक्तहो
स्थिरहोजावै तोउसीमें आसक्तरहै अन्य विषयको ग्रहण
न करसकै क्योंकि सूक्ष्म पदार्थ जो एक किसी सूक्ष्म
देशमें प्राप्तहोताहै व अनेक व अधिक देश में नहीं
होसकता व्यापक चेतन अन्य पदार्थ की इच्छा करके
आसक्त मनकोपदार्थ विशेषसे निवृत्त करके अन्यपदार्थ
व अन्यदेशमें प्रेरण व धारण करताहै जो यहशंका हो
कि विना मनके संयोग ज्ञान नहीं होता जब मनका
संयोग नहींहै तौ पहिले विनामनके संयोग जो चेतन
इच्छा करके अथवा विषय विशेष व शरीरके संयोग
होनेमें मनको जिसमें मन आसक्तहै उससे निवृत्त करके
अन्य विषय विशेषमें प्रवर्त करता है तौ मनको सुख
आदि ज्ञानका करण कहना मिथ्या है इसका उत्तर
यह है कि इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञान यह चेतन
आत्माके गुणहैं मनमें इच्छा आदि गुणनहीं हैं परन्तु
जिसतरह चक्षु आदि वाह्य इन्द्रिय अचेतनहैं रूपआदि
का ज्ञान उनमें नहींहै परन्तु रूप आदिके जानने के
करण हैं रूप आदिका ज्ञान चेतन आत्माको जो इन्द्रि-
योंसे भिन्नहै उसको होताहै जब किसी पुरुषका मन
गान सुनने में लगा है वह यह सुनकर कि यह अच्छा
अपूर्व बिचित्र पदार्थ है व विना चक्षु करण के उसको

नहीं देख सकता तुरतही इच्छाके साथ मनको गानसे आकर्षणकरके मुखफेर चक्षु इन्द्रियको अतिशीघ्र प्रेरणा करके उसके रूपके ज्ञानको लाभ करता है इसीतरह प्रेरण व धारण में समर्थ चेतन यद्यपि बिनामन करण के सुख आदिके बोधको नहीं प्राप्त होताहै परन्तुइच्छा ज्ञानसे मन आदि इन्द्रियोंके धारण व प्रेरण करके अनेक पदार्थोंको क्रमसे जानताहै उक्त हेतुओंसे मनके अणु होने व आत्मा के व्यापक होनेका अनुमान होता है यद्यपि अज्ञान दशा व साधन हीन होने में मन आधीन चेतन आत्माका होना बोधहोताहै परन्तु यथार्थ बोधसे आत्मा करिकै प्रेरित होने व धारण किये जानेसे व क्रियामें मन इन्द्रियका आत्माके आधीनहोना विदित होनेसे आत्मा मनसे भी व्यतिरिक्त व पृथकहै यह सिद्ध होताहै यह तो अनुमान से सिद्ध होताहै व शब्द प्रमाण यहहै कि न्याय दर्शन गौतम सूत्रके तीसरे अध्यायके द्वितीय आह्निकमें बीसवें सूत्रमें यह वर्णन कियाहै युगपज्ज्ञेयानुप लब्धेश्चनमनसः अर्थ एकसाथ अनेकज्ञेय पदार्थकी उपलब्धि न होनेसे ज्ञान मनका गुण नहींहै अर्थात् अनेक ज्ञेयको एक साथ ग्रहण न करना किन्तु क्रमसे ग्रहण करना यह मनका लिङ्गहै व आत्मा अपने गुण ज्ञान करिकै अनेकको भी एक साथ जानताहै इससे ज्ञान मनका गुण नहींहै व इसी सूत्रके भाष्यमें वात्स्यायन ऋषि यह वर्णन करिकै कि अज्ञानी पुरुष अयोगिओंको बिनामनके व अनेकपदार्थ

का एक साथ ज्ञान नहीं होता योगीजन ऋद्धि प्रकटहो
नेमें अनेक शरीर इन्द्रियों संयुक्त अपने योग प्रभावसे
उत्पन्न करिकै एक साथ अनेक पदार्थके ज्ञानको लाभ
करतेहैं यह वाक्य कहाहै तच्चैतद्विभौज्ञातर्य्युपपद्यते
नाणौ मनसीति अर्थ ऐसा ज्ञान आत्माके व्यापक व
चेतन होनेसे आत्मामें होना संभव है सूक्ष्म अणुरूप
मनमें होना संभव नहीं है पूर्वोक्त हेतु व प्रमाण से व
आप्त वाक्यसे भी आत्मा मनसे भिन्नहै व अनेक में
ज्ञान लाभ करनेसे ज्ञान आत्माका गुणहै मनकानहीं
है यह सिद्ध होताहै जब मनआदि सब इन्द्रिय व उनके
अर्थोंसे आत्मा भिन्न है यह सिद्ध होता है तब शरीरसे
भिन्नहै यह सिद्धहै क्योंकि चेष्टा व इन्द्रिय व अर्थोंका
आश्रयही शरीर है इससे अधिक कुछ नहीं है तिससे
जीव चेतन स्वरूप इन्द्रिय शरीरसे व्यतिरिक्त है यह
सिद्धहै अब यह जानना चाहिये कि आत्मानित्य है व
अनित्यहै मरनेमें शरीरकी तुल्य नष्टहोजाताहै फिरनहीं
रहता न कर्म अनुसार उत्पन्न होताहै अथवा नाशनहीं
होता व कर्म अनुसार फिर जन्मान्तर व भोगको प्राप्त
होताहै उत्तर जीव नित्यहै शरीरके साथ नाशनहीं होता
कर्म अनुसार फिर उत्पन्न होताहै सुखदुःख भोगकरता
है अब इसका परीक्षा करके निर्णय किया जाताहै किस
हेतु व प्रमाणसे नित्यहोना व फिर उत्पन्न होना सुख
दुःख भोग करना सिद्ध होताहै प्रथम नित्य होना नाश
न होना व फिर उत्पन्न होना उत्पन्न बालक के हर्ष

भय शोक उत्पन्न होनेसे अनुमानहोताहै क्योंकि अक-
स्मात् हर्ष भयशोक बिना हर्ष भय शोक हेतुवाले पदा-
र्थोंके स्मरणके नहींहोता उत्पन्नके पूर्वजन्मके स्मरण
सम्बन्धहीसे हर्षभय शोकहोनेका अनुमानहोताहै क्यों-
कि स्मरण बिना पूर्व प्रत्यक्ष व अभ्यासके संभव नहीं
होता पूर्वके स्मरणसे हर्ष भय शोकको प्राप्तहो उत्पन्न
बालक कहीं मुसक्याता है कहीं भय करकेमुखकी आ-
कृति बिगाड़ताहै कहीं उदासीन होताहै जो यह कहा
जावै कि जिसतरह अनित्य कमलआदिमें प्रफुल्लितहोने
कुम्हिलाने व सिकोड़नेका बिकार होता है इसीतरह
अनित्य आत्मामें हर्ष भय शोक होनेका मुसक्यानेआदि
काबिकारहै तौ उत्तरयहहै कि पंचभूतात्माकमलआदि
के बिकार उष्णता शीतवर्षा निमित्तसेहोतेहैं पूर्व स्मर-
णकीअपेक्षानहीं रखते चेतन मनुष्यमें प्रसन्नता व उदा-
सीनता सुख दुःखसेहोना प्रत्यक्षहोताहै उत्पन्न बाल-
कमें तुल्य उष्णता आदिबिनाउष्णताआदिमेंभेद होनेके
हर्षबिकार व क्षणमात्रमेंशोक व फिर हर्षहोताहै कमल
आदि उष्णतासे कुम्हिलाकर फिर प्रफुल्लित नहीं होते
इससे उत्पन्न बालक में कमल आदिको तुल्य बिकार
नहींहै स्मरण निमित्तसे हर्ष आदिका होना अनुमान
किया जाताहै तथा उत्पन्नमात्र बत्सदूधपान करनेकी
अभिलाषा करके आपसे चलकर स्तनमें मुख लगाकर
पान करनेमें प्रवर्त्त होताहै यह बिना पूर्व अहार व पा-
नकेअभ्यासकेस्मरणके संभव नहींहोता इससे पूर्वस्मर-

णकाअनुमान होताहै क्योंकि जवशरीरिओंकोक्षुधा तृष
होतीहै तब अहारके व पानके योग्य पदार्थों का स्मरण
करतेहैं उत्पन्नमात्र जो इसजन्ममें कुछनहीं जानता न
अभ्यास किया उसका स्तनमें आपसे पान करनेमें प्रवर्त्त
होनादेखनेसे यहअनुमान होताहै कि पूर्व शरीर त्याग
करकेइस शरीर में प्राप्तहुआ आत्मा क्षुधितहोकर पूर्व
अभ्यासकियेहुये आहारके स्मरणसे स्तनकी अभिलाषा
करताहैइससे देहसे आत्मा नित्यहै व शरीरत्यागकरके
फिर उत्पन्न होताहै जो यह कहाजावैकि उत्पन्नबालक
आपसे क्यों स्तनमें नहींप्राप्तहोता तो ईश्वर नियमआ-
धीन शरीरमें शक्ति न होनेसे नहींप्राप्तहोता परन्तुस्तन
को पाकर तुरतही पान करनेमें प्रवर्त्त होता है जो यह
संशय होकि जिसतरह लोहा आयस्कांतमें आपसेगमन
करता है इसीतरह विना पूर्व स्मरण उत्पन्न बत्सका
गमन करनाहै तो यह संशययुक्त नहीं है जो लोहेकी
गमनकी तुल्यहोतो अन्यकिसी अंगमेंलगै स्तनमें जिस-
में दुग्ध होताहै व पान करने से क्षुधा निवृत्ति होतीहै
उसीमें जाकर पान करनेमें प्रवर्त्त होनेसे विनापूर्वस्मरण
संभव नहींहोता तथाराग सहित जन्मदेखने से आत्मा
के शरीरकी तुल्य नाश न होने व फिर उत्पन्न होनेका
अनुमानहोताहै इसजन्ममें जो भिन्न पदार्थों में शरीर
धारियोंको राग होताहै इससे यह अनुमानहोताहै कि
पूर्वजन्मके अभ्यास संस्कारसे होताहै जिसकाजैसा अ-
भ्यास व संकल्प संस्कार सम्बंधहै उसको उसमें राग

होताहै अर्थात् प्रीति होतीहै व उसका चिंतन होता है
जो यह संदेह हो कि जिसतरह भिन्न पुष्प वृक्ष आदि
पदार्थ भिन्न भिन्न गंधरूप गुण सहितही उत्पन्न
होतेहैं इसीतरह आत्मामें रागहोना गुणहै तो जिस
वस्तु का स्वाद व गुण पहिले से जाना होताहै उसको
देखकर व जानकर स्मरण द्वारा उसमें संकल्प होताहै
संकल्प निमित्तसे उसमें राग होता है विनापूर्व अनुभूत
विषयोंके स्मरण व संकल्प नहींहोता बिना संकल्पनि-
मित्तरागनहींहोता उत्पन्न प्राणियोंमें रागकाहोनापाया
जाताहै जाति विशेष में राग विशेष होना ज्ञातहोता है
यथा चींटीका मिठाईमें भ्रमरका पुष्पमें मीनका जलमें
इत्यादि किसीएक विषय विशेषका राग प्रत्येक उत्पन्न
में होनाजाना जाताहै व राग पूर्व अनुभूत विषयकेचिंत
न व अभ्यासस होताहै तिससे पूर्वजन्मके विषय अनुभूव
व पूर्वजन्मके संकल्प संस्कार अनुसार रागहोने का
अनुमान होताहै व इसीसे वेदमें जो कहाहै ॥

यथाक्रतुरस्मिन्लोकेपुरुषोभवति
तथेतःप्रेत्यभवति ॥

अर्थजिसतरह संकल्प व ध्यान इसलोकमें पुरुषकरता
है उसीतरह मरनेके पश्चात् होताहै व स्मृतिमेंभी कहा
है कि जिसतरह जीवके हृदयका भाव होताहै व मरण
समयमें जैसा मनमें संकल्प होताहै उसी तरह की गति

होतीहै यहसत्य होना निश्चय किया जाताहै व यह अनुमान होताहै कि जल मिठाई अन्न आदिमें जिसकी रुचि मरण समयमें व मनकी चंचलता व कर्म संस्कार से जैसा संकल्प होताहै उसीतरहकी योनिमें जन्महोता है कि जिससे उसीवस्तुमें रागहोताहै पूर्व संस्कार व संकल्प शरीर धारियों के राग होनेसे अनुमान सिद्ध होताहैइसमें संशयनहींहैजड़ द्रव्य पदार्थ पुष्प आदिमें संकल्प निमित्त गुणनहीं होते इससे यह दृष्टांत अयुक्तहै तथा एकही जातिमें शीलक्रोध गुण विशेषहोने व नहोने से व मनुष्य जातिमें किसी विशेष मनुष्योंमें आपसेधर्म विशेषरुचि उत्कृष्ट बुद्धि तथा आपसे कोई विशेष गुण व धर्म व वर्त्तमान संस्कार व संग अभ्यास से विचित्र व विलक्षण प्रकट होने से पूर्वजन्म अभ्यास व संस्कार निमित्तसे होना अनुमानसे सिद्धहोताहै क्योंकि जबउसी तरहका गुण व धर्मअन्यको बहुत अभ्यास सब परिश्रम सेभी होना कठिन देखपरताहै उसके साधारण प्राप्त होनेमें व इस जन्ममें अभ्यास व परिश्रम न होनेसे पूर्व जन्मके अभ्यासका अनुमान होताहै तथा किसीको उत्पन्न होतेही सुख व किसीको दुःख किसीको रोगी किसीको निरोग किसीको धनवान किसीको दरिद्रीदेख नेसे पूर्व जन्मके धर्म अधर्म संस्कार का अनुमान होता हैक्योंकि जिनको उत्पन्न होतेही सुखहोताहै उनको इस जन्ममें कोई सुखका कारणहोना व जिनको उत्पन्न होते हीसे दुःखरोग पीड़ाहोना देखाजाताहै उनकेइसजन्ममें

कोई दुःखका कारण होना जानानहीं जाता इससे पूर्व जन्मके संस्कार से कर्मफल होना सिद्ध होताहै व जो पहिले सुख अवस्थामें होकरफिर दुःखको प्राप्तहोते हैं वहअपनेपुरायको भोगकरके पुरयक्षीणहोनेपर पापकर्म फलभोग समयमें क्लेशकोप्राप्तहोतेहैं व जोप्रथम दुःख भोगकरके सुखकोप्राप्त होतेहैं उनकोइसकेविपरीत जानना चाहियेजो इस जन्ममें विषय सुखकोप्राप्तहोते हैं यथाजोराजाके कुलमें उत्पन्नहुआ वरोग रहितहुआ तौ उसकोविषय सुखउत्पन्न होतेही प्राप्तहोताहै यहप्रत्यक्ष सिद्धहै जो उसको सुख न होने होता तौदरिद्रीक्लेशितके गृहमें उत्पन्न होता व रोग आदिसे पीड़ित होता शीत गरमी नाना क्लेशसे दुःखभोग करता तथा इसके विरुद्ध जानना चाहिये परन्तु इस जन्ममें होते हुयेको सुख व दुःखके कारण न होनेसे पूर्व जन्मके पुरय व पापका निश्चय होताहै इसमें कोई यह कुतर्क करतेहैं कि यह निश्चय किसतरह होता है कि जो राजा के व धनवान व धर्मवान उत्तमकेगृहमें उत्पन्न हुआ वह धर्मकरकेहुआ है व जो अतिदुःखी निकृष्टके गृहमें उत्पन्न हुआ वह अधर्म करके उत्पन्न हुआहै यह कौन देखने गयाहै व यहभी कहींकहींदेखा जाताहै कि धनी निर्धन व निर्धन धनवान सुखी दुःखी वदुःखी सुखीहोजाते हैं इससे यह अनुमान यथार्थ नहींहै उत्तर यह है कि वेद शास्त्र से यह प्रमाण सिद्धहै कि धर्म से उत्तम गति व [illegible] से दुर्गति व दुःख प्राप्तहोता है आप्त वाक्यस[illegible]

व प्रमाणके योग्यहै व तर्क के उत्तरके अर्थ अनुमानसे भी सिद्ध होताहै वह वरणन किया जाताहै प्रथम यह विचारना चाहिये कि अपनेही बिवेक से उचित व अनुचित होनेका ज्ञानप्राप्त होताहै जो उचित बोध होताहै व विचारसे यथार्थ निर्दोष पाया जाताहै वहीधर्म है व जो अनुचित बोध होताहै वह अधर्म है व यहां भी इसी जन्ममें यह प्रत्यक्ष प्रमाण होताहै कि धर्म साधन बिशेषसे प्रतिष्ठा बुद्धिकी वृद्धि तप व योगाभ्यास से शक्ति अनुभव परोक्ष ज्ञानआदि प्राप्तिका फलहोताहै अधर्म्मकाफल निन्दाभयशोक लज्जा ग्लानि व अपनेही विचारकरनेसे पश्चात्ताप होताहै जो यह प्रश्नहोकि किसतरह अपने ही बिवेकसे धर्म अधर्म का ज्ञान होताहै तौ यह बिवेकसे सिद्ध होताहै जैसा पूर्वही कहागयाहै कि सत्य बोलना परस्त्रीगमन न करना चोरी न करना हिंसा न करना आदि व इन उत्तम धर्म साधन समेत परमेश्वर सर्वशक्तिमान् आनन्द ज्ञान स्वरूप की उपासना करना उचितहै व इससे उत्तम फल होताहै किसहेतुसे इनका उचित होना व इनका उत्तम फल होना सिद्ध होताहै अब फिर संक्षेपसे कहाजाता है हेतु यहहै कि सत्य बोलनेसे साधारण विश्वासहोताहै छल कपट अन्याय आदि जिससे मनुष्य विश्वासघात आदिसे अनेक शोकको प्राप्त होतेहैं सब दूरहोतेहैं विश्वासहोने से एक दूसरेमें परस्पर प्रीतिको आधिक्यता एकदूसरे की सहायताका निश्चयउपयोग व सुखकी प्राप्तिहोताहै

और जो विवेकसे अधर्म जाने जातेहैं वह सब बिना असत्यताके मेलके नहीं होते सत्य से वह सब नाश होतेहैं इससे सत्य अति उत्तम धर्म है व साधारण प्रत्यक्षमें सत्यका ऐसा उत्तम फल है तो अदृष्ट फल जो शास्त्र में सत्य साधनका है अवश्य उत्तम होगा असत्य उसके विरुद्ध अधर्म व निकृष्ट फल दुःख फलरूप सिद्ध होताहै परस्त्री गमन न करना धर्महै क्योंकि जिसतरह अपनीस्त्रीमें दूसरेके गमनकरनेमें अपनेको दुःख चित्तमेंप्राप्तहोताहै गमन करने वालेकी वध की इच्छा होतीहैइसीतरह दूसरेकोशोक व क्रोधहोगाइसतरहएक दूसरेसे भय शोक प्राप्तहोगा इससे अनुचित अधर्म है न करनेसे इनसबदोषोंको निवृत्तिहोतीहै इससे नकरना धर्म है जिसतरह अपना धन व द्रव्य कोई चोरा लेताहै उससे अपने को दुःख होताहै व जिसतरह अपने को कोई घात व वधकरे उसमें दुःख क्लेशहोना बोधहोताहै इसीतरह दूसरे मनुष्य व जीवको होताहै इससे चोरी हिंसान करना धर्महै व उक्त दोषोंसे करना अधर्म है जो यह समुझा जावै कि चोरी आदि अनुचित कर्मके गुप्तरहने से उक्तदोषन होंगे पर स्त्री गमन व चोरीसे जिसका धनहै उसको क्लेशहोगा अपने को तौ सुख लाभहै इसका उत्तर यह है कि यद्यपि अज्ञान बशसे अधर्म में लाभ बोध होताहै व मनुष्यके दण्डसे गुप्त रहने में बच सकताहै परन्तु जब तुमको अधर्म होनेका अपने ही विवेक से निश्चय होताहै व तुम विचार के

विरुद्ध करते होतो उसका दण्ड सर्व साक्षी समर्थ ईश्वर नियम से तुम को अवश्य प्राप्त होगा यह अनुमान से सिद्ध होताहै इसीतरह सब धर्म अधर्मके विचार नेमें अपने ही विवेक से उचितअनुचित होनेका बोध होताहै व यहभी अनुमान सिद्ध होताहै कि सर्वज्ञ न्यायकारी पक्षपात हेतुरहित पमेश्वर धर्मका फल सुख व उत्कृष्टता व अधर्मकाफलदुःख व दुर्गतिदेताहै व यहीनियम होनासंभवहै प्रत्यक्षमें धर्मसाधनफल उत्तमलाभ होने से व अधर्मका फलनिकृष्टलाभ होनेसे जन्मान्तरमें वेद शास्त्र वचन अनुसारधर्मअधर्मविशिष्ट उत्तम व निकृष्ट फललाभहोनेके निश्चयहोने कानुमानहोताहैजोकोई धर्म अथवा अधर्म जोशास्त्रमें कहाहै तर्कसे उसके धर्म अधर्महोनेकाहेतु न जानाजाय तौभी इसहेतु से कि जब अनेक धर्म अधर्मके अंग जो शास्त्र में कहाहै तर्क करके विचारसे भी यथार्थ सिद्ध होते हैं तवशेपके भी यथार्थ होनेका अनुमान होता है जिससे प्रत्यक्ष पूर्वक पूर्वजन्म के धर्म अनुसार सुख व उत्तम स्थान मनुष्य योनि में उत्तम गृहमें जन्म होना व अधर्मसे दुःख व निकृष्टस्थान व निकृष्ट योनिमें जन्म होना अनुमान द्वारा सिद्धहोता है अधर्मसे उत्तमफल व धर्मसे निकृष्टफल नियम होना सर्वज्ञ सम्पूर्ण सृष्टिकी उत्पत्ति स्थिति लयकर्त्ता व कर्म फल नियम कर्त्ता परमेश्वरसे अयोग्य होना संभव नहीं होता इसतरह प्रमाण सिद्धहोने से यहतर्क करना कि धर्मसे सुख व उत्तम अवस्थाको इसजन्ममें प्राप्तहुआहै

यह कौन जानता है अयुक्त व कुतर्क मात्र है जो यह कहाहै कि धनवान निर्धन व सुखी दुःखी व दुःखी सुखी एकही शरीर में कालान्तर में होते हैं तव जब जीवका प्रेत्यभाव व कर्म अनुसार जन्मान्तर में फलहोना अनुमान व शब्द प्रमाणसे सिद्ध होता है तव अनुमान से यह भी निश्चय होता है कि ईश्वर कर्म व कालक्रम अनुसार पुण्य व पापका सुख दुःख फल देताहै क्रम अ-अनुसार पुण्यफल भोगसे जो प्रथम सुख भोग करता है पुण्य क्षीण होनेके पश्चात् पापफल भोग समय में दुःखको प्राप्तहोताहै व जन्मान्तरके धर्म अधर्म भोगसंस्कार क्रमसे जिसको प्रथमपाप फलभोगमें दुःखहोताहै पापक्षीण होनेके पश्चात् पुण्यफल भोग समय में सुख लाभ करता है न्यायदर्शन व अन्यग्रन्थ शास्त्र अनुसार उक्तहेतु अनुमान से जीव आत्माका इन्द्रिय शरीर से व्यतिरिक्त चेतन होना मरने के पश्चात् फिर जन्महोना धर्म अधर्म अनुसार उत्कृष्ट निकृष्ट गति प्राप्तहोना सुख दुःख लाभ करना सिद्धहै अब यह प्रश्नहो सकता है कि ईश्वर कोई फलदाता व ऐसानियम कर्त्ता है यही किसतरह सिद्धहोता है क्योंकि बहुतेरे यथार्थ बोधरहित ईश्वरही को नहीं मानते तर्क करके यह प्रश्नकरते हैं कि जो ब्रह्म व ईश्वरको सृष्टिका उत्पन्न करने वाला व धर्म अधर्म का फल देनेवाला कहा है यह किसतरह प्रमाण होता है व धर्म साधन सहित जो ब्रह्मकी उपासना कहाहै ईश्वरके उपासना से क्या फलहै इससे

ईश्वर प्रतिपादन व उसके उपासनाके फलको बरणन करते हैं ॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेआत्मापरीक्षानित्यत्वप्रीत्यभाव: कर्मानुसारफलभोगवर्णनेपंचमोऽध्याय: ५ ॥

अथब्रह्मलक्षणपरीक्षावर्णनविषय: प्रारंभ: ॥

यह जानना चाहिये कि जिसपरमात्माब्रह्मके उपासना व ज्ञानसे जीव सम्पूर्ण क्लेशसे रहित हो मुक्तिको प्राप्त होताहै वह प्रमाणसे सिद्धहोताहै व नहीं व जो सिद्ध होताहै तो क्या लक्षणहै वकिसतरह सिद्ध होता है तथा ब्रह्मके ज्ञान व उपासनासे मोक्ष प्राप्तहोताहै इस्में क्याहेतुव प्रमाणहै जगत् का उत्पन्न करनेवाला सर्वशक्ति मान् स्वतंत्र व्यापक चेतन सर्बज्ञ नित्यशुद्ध आनन्द स्वरूपब्रह्महै यहलक्षणशब्द अनुमानप्रमाणसे सिद्धहोताहै श्रुतिमें कहाहै ॥

यतोवाइमानिभूतानिजायन्तेयेनजातानिजीवन्तियंप्रयत्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञास्वसतद्ब्रह्म ॥

अर्थजिससे निश्चयकरके यहसब भूतउत्पन्नहोतेहैं व जिससे उत्पन्नहुये जीतेहैं जिस में जातेहैं व प्रवेश करते अर्थात् लय होतेहैं उसकी जिज्ञासा करो वह ब्रह्महै तथा ॥

नित्यसर्वज्ञसर्वगतोनित्यतृप्तोनित्य शुद्धमुक्तस्वभावोविज्ञानमानन्दं ब्रह्म॥

अर्थ नित्य सर्वज्ञ सर्व व्यापक नित्यतृप्त शुद्ध बुद्धमुक्त स्वभाव विज्ञान आनन्दरूप ब्रह्महै यद्यपि इसश्रुति में सर्व शक्तिमान स्वतंत्र शब्द नहीं कहा परन्तु मुक्त कहने से सर्व शक्तिमान व स्वतंत्र होना सिद्ध है क्योंकि जो कुछभी शक्तिहीन व पराधीन है वह बंधनमें है मुक्तनहीं हो सकता जो सर्व शक्तिमान स्वतंत्र है वही मुक्त है इससे श्रुतियोंसे व सर्व शक्तिमान स्वतंत्र व्यापक चेतन आदि गुण संयुक्त ब्रह्महै व और भी श्रुतिहै परन्तु यहां संक्षेप से वर्णन किया है अनुमानसे भी जिसतरह ब्रह्म जगत्के जन्म स्थिति लयका कारण होना व सर्वशक्तिमानहोना आदि लक्षण संयुक्त सिद्ध होता है निश्चय होनेके अर्थ वर्णन किया जाता है यह प्रत्यक्ष है कि कार्य कर्म अनित्य व उत्पन्न होते हैं व कार्य विनाकारण व कर्म विन कर्त्ता नहीं होता जगत् के अवयव अंशरूप अनेक कार्योंके जन्मनाश देखनेसे जगत्के कार्य व कर्मरूप व उत्पन्नहोने के अनुमान होनेसे इसकार्य कर्मरूप जगत् का कोई कारण व कर्त्ता अवश्य है यह अनुमान होता है जो इसका कारण व कर्त्ता है वहपरमात्मा ब्रह्म जगत् का उत्पन्न करनेवाला है अब यह

शंकाहै कि पूर्व प्रत्यक्ष सम्बंध के ज्ञानसे कुछ प्रत्यक्ष होनेसे अप्रत्यक्षका जो प्रत्यक्षके साथ सम्बद्धहै सम्बंध स्मरणसे ज्ञान होना अनुमान है इन्द्रिय विषय पदार्थ प्रत्यक्ष होताहै ब्रह्म इन्द्रिय ग्र ह्य पदार्थ नहीं है कि जो प्रत्यक्षहो व उसके सम्बन्ध किसी पदार्थ के साथ प्रत्यक्ष जाना जावै जो कहीं प्रत्यक्ष नहीं है उसका अनुमान असंभव है जैसे धूम व अग्नि के सम्बन्ध का ज्ञान पूर्वही प्रत्यक्ष होने से धूमके भ्रांति रहित प्रत्यक्ष होनेमात्रसे अप्रत्यक्ष अग्निका अनुमान होताहै व जिसको पूर्व प्रत्यक्षसे धूम अग्निके सम्बन्धका ज्ञान न हो वह धूमको देखकर अग्निका अनुमान नहीं करसक्ता इसीतरह परमात्मा ब्रह्म व जगत् का सम्बन्ध पूर्व प्रत्यक्ष न होनेसे अनुमान नहीं होसक्ता कार्य्यमात्र होना इस जगत् ग्रहण होताहै इससे यह निश्चय नहीं होता कि ब्रह्मही कारण है व ब्रह्मके साथ सम्बन्धहै अथवा अन्य कोई कारणहै उत्तर यहहै कि कार्य्य व कर्मरूप जगत्का होना पूर्वोक्त हेतुसे ग्रहण कियाजाताहै कार्य होनेसे यहभी अनुमान होताहै कि इसका कोई कारण व कर्त्ताहै अब केवल यहनिश्चय होना कि वह कारण व कर्त्ता ब्रह्महै वा कोई अन्यहै जो कोई इस विचित्र असंख्य कार्य्य संयोग गुण नियम संयुक्त जगत्का कारण व कर्त्ताहै उसके सर्वशक्तिमान स्वतंत्र सर्वज्ञ चेतन व्यापक नित्य आनन्द शुद्ध स्वरूप होनेका भी अनुमान होताहै क्योंकि जो कोई शक्ति हीनहै वही पराधीन है

पराधीन शक्ति हीनसे ऐसा जगत् जिसमें अनेक नियम बिचित्रता कार्य्य संयोग गुण सम्बन्धहै उसका उत्पन्न होना असंभवहै तथा विना चेतन सर्वज्ञ असंख्य गुण नियम सम्बन्ध सहित कार्य्यका होना संभव नहीं है जिसके कुछ खेद होताहै वह पापसे अंतःकरण मलिन होताहै उसकी बुद्धिमें भ्रम व अज्ञानता होती है भ्रम व अज्ञान संयुक्तसे ऐसेगुण नियम सहित कार्य होना तथा कारण का अनित्यहोना अनुमानसे सिद्धनहीं होता विनाकुछ नित्य कारण के कार्य के होनेका अर्थात् स्थूलरूप प्रकट होनेका प्रमाणसे सिद्ध नहीं होता व अणुस्वरूप एक देशीय कारण से सर्वकार्य नियम अनन्त विस्तार का होना अनुमानसे स्वीकार नहीं हो सकता तिससे कोई कारण वा कर्त्ता सर्व शक्तिमान स्वतंत्र व्यापक सर्वज्ञ चेतन नित्य शुद्ध आनन्द स्वरूप है यही लक्षण ब्रह्मका श्रुतिसे जैसा पूर्वही कहागया है निश्चित व प्रमाण सिद्ध होताहै तिससे जगत्का उत्पन्न करनेवाला परमात्मा ब्रह्म है सांख्यमत वाले यह अनुमान करतेहैं कि प्रकृतिही जगत्का कारण है प्रकृतिहीसे जगत् उत्पन्न होताहै व इसतरह प्रकृतिके कार्य संख्या व क्रमको वर्णन करते हैं॥

सत्वरजस्तमसांसाम्यावस्थाप्रकृतिःप्र

कृतेर्महान्महतोहंकारोहङ्कारात्पंचत

न्मात्राण्युभयमिन्द्रियं तन्मात्रेभ्यः स्थूलभूतानि पुरुष इति पंचविंशतिर्गणाः ॥

अर्थ सत्व रजतमगुणों की सम अवस्था प्रकृति है प्रकृति से सृष्टि समय में गुणोंके क्षोभसे महत्तत्व कार्य होताहै महत्तत्वसे अहंकारकार्य अहंकारसे पांचतन्मात्रा अर्थात् अहंकारकेमात्रा शब्द स्पर्शरूपरसगंध वइन्द्रिय कार्य होतेहैं इन्द्रियोंके दोभेदहैं वाह्य इन्द्रिय व अंतर इन्द्रिय वाह्यइन्द्रिय पांच ज्ञानइन्द्रियचक्षुकर्ण नासिका रसना त्वच व पांच कर्म इन्द्रिय हस्त पाद पायु उपस्थ वाक् यह दश इन्द्रिय हैं व अंतर इन्द्रिय इन्द्रिय ग्यारहवां मनहै अहंकार के मात्रोंसे पांच स्थूल भूत आकाश वायु अग्नि जल पृथिवी कार्यहोते हैं व इन सबकार्यों से भिन्न पुरुष है यह पचीस गण हैं इन पचीस तत्वोंसे सांख्य शास्त्रमें सम्पूर्ण सृष्टिकी उत्पत्ति लिखा है इनसब को विस्तार से सांख्य में वर्णन किया है प्रकृति यद्यपि जड़ है परन्तु पुरुष चेतन के आभास व सन्निधि होनेसे उसमें चेतनता शक्तिहोतीहै व सृष्टि को उत्पन्न करती है यह मानतेहैं परन्तु यह युक्तनहीं है क्योंकि इसजगत्में चेतन कृत नियम संयुक्त कार्य देखे जातेहैं ज्ञान रहित जड़ प्रकृतिसे यथोचित नियम संयुक्त कार्य होना संभव नहींहै परमाणु वा कोई जड़

कारण से नियम संयुक्त कार्य होने का अनुमान नहीं होता बिना चेतन के इच्छा पूर्वक प्रवृत्त होनेके नियम व यथा उचित रचना होना संभव नहींहै नियम संयुक्त यथा उचित रचना प्रत्येक कार्यमें बिचारने से सिद्ध होती है शरीर मात्रमें विचारने से यह जाना जाता है कि जिस अंगमें जैसा जहां उचितथा उसीतरह ज्ञान-वान् कर्त्ता करके रचना की गईहै विचारकरना चाहिये कि जो नेत्र कोमल इन्द्रियमें पलकें न होतीं तौ आंधी वायुसे धूलि तृण आदिसे नेत्र व दृष्टिकी वहुत जल्दी हानि होती अंगुलियोंमें जो जोड़न होते तौ सीधी रहतीं उनकेबिना झुकने के किसी वस्तुका ग्रहणकरना उठाना भोजन आदि कुछन होसकता पदोंमें जोअस्थि कठोर न होते तौ देह भरकाबोझ खड़े होनेमें न संभल-ता व जो बीचमें जोडन होता तौ कोई पदसे बैठ न सकता जिह्वामें जो केवल मांसनहोता अस्थिहोता तौ नानाप्रकार के अक्षरों का उच्चार विना कोमलता व शीघ्रता दंत तालु आदिमें चलनेके न होता न बार्त्ताकी शक्तिहोती न जलपान करते वनता अन्नतृण आदि के उत्पत्ति के अर्थ जलवृष्टि न होती तौ मनुष्य पशु सब क्षुधासे मरजाते और किसीयत्नसे सम्पूर्ण पृथ्वी में अन्नतृण की उत्पत्ति न हो सकती इत्यादि जहांतक विचार करै नियम संयुक्त यथोचित कार्यके देखने से यह अनुमान होताहै किसी चेतन ज्ञानमान शक्तिमान कर्त्ता का कर्महै जड़से यथोचित नियम संयुक्त कार्य व

कर्म का होना संभव नहीं है नियम संयुक्त यथोचित कार्य व कर्मका होना प्रत्यक्ष चेतनसे होनेका प्रमाण होताहै तिससे प्रत्यक्ष पूर्वक नियम संयुक्त यथोचित जगत् कार्य देखने से कारण व कर्त्ताका चेतन होना सिद्धहोता है जड़ प्रकृति व वायुआदिके जड़ परमाणुओं से विचित्र व नियम संयुक्त सृष्टिका होना बिना चेतनके असम्भव व अयुक्त है नियम इच्छा व ज्ञान पूर्वक होताहै जड़में इच्छा व ज्ञानका अभाव है जो चेतन सर्वज्ञ शक्तिमान जगत् का कारण व कर्त्ताहै वही परमात्मा ब्रह्महै जो यह कहाजावै कि प्रकृति यद्यपि जड़है परन्तु चेतन पुरुषके आभाससे व सन्निधिके प्राप्त होनेसे उसमें चेतनता शक्ति होतीहै तौ चेतनके सन्निधि व संयोग होनेमें भी कोई हेतु व इच्छा चाहिये जड़का अपनी इच्छासे संयोग के अर्थ चेतन के निकट जाना संभव नहीं होता मृत्तिका रथ आदि का आपसे कुम्हार व घोड़ा आदि चेतन के निकट घट आदि व चलने आदि कार्य के अर्थ प्रवृत्त होना प्रत्यक्ष नहीं होता इत्यादि प्रत्यक्ष बिरुद्ध अनुमानहोना संभवनहींहै तिससे चेतन ब्रह्म इच्छा करके जगत्को उत्पन्न कियाहै यह अनुमान किया जाताहै व जोयह संशयहो कि जिसतरह आयस्कांत मणिमें लोहा सन्निधि मात्रसे विना इच्छा के प्रवृत्त होताहै इसीतरह प्रकृति पुरुषके सन्निधि मात्रसे प्रवृत्त होतीहै तौ जड़ प्रकृतिका आपसे सन्निधिको प्राप्तहोनाहो बिनाइच्छा व नियम असंभवहै व

नियम रहित होनेमें फिर वियोगसे प्रलय व संयोगसे उत्पत्ति संभव नहींहै व नियम विना चेतन नहीं होता तिससे चेतन जगत् का कारण है शब्दसेभी चेतनब्रह्म का इच्छाकरके जगत्का उत्पन्न करना सिद्ध होताहै श्रुतिमें कहाहै ॥

तदैक्षतबहुस्यांप्रजायेयततेजोसृजत् इत्यादि ॥

अर्थ उसने इच्छा किया किमैंबहुत होऊं उत्पन्नहोऊं उसने तेजको उत्पन्न किया इत्यादि श्रुति व अनुमान प्रमाणसे चेतन ब्रह्म जगत् का कारणहोना सिद्ध होताहै तिससे प्रकृति को जगतका कारण मानना युक्त व प्रमाण के योग्य नहींहै अत्र यह जानना चाहिये कि इस श्रुतिमें बहुतहोऊं उत्पन्नहोऊं कहाहै इससे बहुतेरे विना विचार यह कहते हैं कि ब्रह्मही मिट्टी पत्थर उत्कृष्ट निकृष्ट पदार्थ होगया है यह अर्थ सर्वथा युक्तिहेतु प्रमाण विरुद्ध ग्रहण के योग्य नहीं है इसश्रुतिमें शक्ति व शक्तिमानका अभेदान्वित पक्षलेकें सृष्टि उत्पत्ति प्रतिपादन कियाहै तात्पर्य यहहै कि परमेश्वरके प्रतिपादन स्वतंत्र जगत् के कारण होनेमें यह श्रुति है इससे जैसे राजा आदि प्रजाजन सेना आदि अनेक प्रकारकी वाह्य सामग्रीसे सिद्ध होताहै अर्थात् वाह्य सामग्री के विना राजत्व सिद्ध नहीं होसकता सब वाह्य सामग्री सहितही

राजा कहाता है इसीतरह कार्य कारणरूप जगत् सब ईश्वर शक्तिरूप ईश्वरकी विभूति है उसके अध्यक्ष होनेहीसे परमेश्वर कहाता है कारण अवस्था में अव्यक्त परमाणु आदि ईश्वर शक्ति अतिसूक्ष्म होनेसे बहुतशब्द की प्रवृत्ति नहीं होती किन्तु एकाकार प्रतीतियोग्यहोता है इसलिये कहाहै कि मैं अपनी शक्तिके सहित कार्यरूप बहुतहोऊं उत्पन्नहोऊं अर्थात् सामर्थ्यद्वारा अनेक प्रकार होकर प्रकटहोऊं यथा लोकमें जो राजा किसीराज्य प्रबंध व शत्रुयुद्ध आदिमें यह इच्छा करता है वा कहता है कि मैं ऐसाकरूं तौ आपनहींभी करता तौ इसका तात्पर्य यह समझा जाताहै कि अपने मुख्य भृत्य प्रधान आदिद्वारा करने का अभिप्राय है इसीतरह यहां अपने को वा अपनी शक्तिको अभेद सदृश मानकर शक्तिद्वारा अनेक कार्यरूप सहित बहुतहोना व उत्पन्नहोना कहा है अब यह शंकाहै जैसा कि सांख्यमें कहाहै कि जो ईश्वरवाब्रह्मनित्यमुक्तआप्तकामहै उसका सृष्टिके उत्पन्न करनेमेंकोई प्रयोजननहींहै व विनाप्रयोजन प्रवृत्ति नहीं होती इससे प्रयोजन न होनेसे परमात्मा ब्रह्म जगत् का उत्पन्नकर्त्ता संभव नहीं होता जो यहकहा जावै कि अपने उपकारके अर्थ परमेश्वर सृष्टिकिया तौ आप्तकाम नित्य मुक्त नहींहै लौकिक ईश्वरोंकी तुल्य वहभीहै व ब्रह्मको मुक्त मानने वा बद्ध मानने में दोनों तरह सृष्टिका कारण होना प्रमाण नहीं होता क्योंकि मुक्त होनेमें अभिमान व राग आदिके अभाव होनेसे ईश्वरका सृष्टि में

प्रवर्तहोना संभव नहींहोता व बद्धहोनेमें मूढ़ व अज्ञा-
नहोने से ऐसी विचित्र नियम संयुक्त सृष्टिको नहीं कर-
सक्ता यह सृष्टि किसी सर्वज्ञ शक्तिमान्‌का कार्य है यह
अनुमान होताहै तिससे दोनोंतरह सृष्टिका कारण व
कर्त्ता ईश्वरके होनेका अनुमान नहीं होता जो यहकहा
जावै कि श्रुतियोंमें क्यों ईश्वरका प्रतिपादन किया है
तौ कोई श्रुति मुक्त आत्माओंकी प्रशंसाको वर्णन कि-
याहै व जो इच्छा पूर्वक सृष्टि का नित्य ईश्वरसे होना
कहा है वह सिद्ध पुरुष ब्रह्मा विष्णुआदि जे अभि-
मान संयुक्त हैं उनसे होना वर्णन किया है व उनके
आदि मान होनेसे गौण नित्यत्व केवल प्रशंसा व
उपासना विधिके अर्थ कहाहै उत्तर यहहै कि सांख्य
का यह अभिप्राय नहींहै कि ईश्वर नहींहै केवल मुक्ति
के इच्छा करनेवालोंके शांत निष्क्रियारूप भावना के
अर्थ संसार के उत्पत्ति कर्त्ता ईश्वरके होनेका प्रतिषेध
कियाहै कि ईश्वर जगत्‌का उत्पत्ति कर्त्ता सिद्ध नहीं
होता क्योंकि जैसी भावना व उपासना कीजातीहै उसी
तरहका फल प्राप्त होताहै चेतन नित्यमुक्त आत्मा जि-
सके सन्निधिमात्रसे प्रकृति जगत् उत्पन्न करती है इस
लक्षणसे आत्मा ईश्वरको अंगीकार कियाहै यह ग्रहण
करनेके योग्यहै जो यह कहाजावै कि ईश्वरका अभाव
है यह सांख्यआचार्य्यके कहनेका अभिप्रायहै तौ ऐसा
मानना यथार्थ नहींहै क्योंकि सांख्य दर्शनके सूत्र में
अभाव शब्द नहीं है॥

ईश्वरासिद्धेः ॥

अर्थ ईश्वर सिद्ध न होने से अर्थात् जगत् का कर्त्ता व उपादान कारण सिद्ध न होने से यह सूत्रमें कहाहै जो अभाव कहनेका अभिप्राय होता तौ ईश्वर अभाव होनेसे यही सूत्रमें कहाजाता जो अभावही कहने का अभिप्राय मानाजाय कि बद्ध व मुक्त दोनों तरह हों में ईश्वर सृष्टिकर्त्ता नहीं होसक्ता तौ सांख्य के आचार्य का यह कहनाभी यथार्थ नहींहै कि ईश्वर प्रतिपादक श्रुतियोंमें मुक्त आत्माओंकी प्रशंसा व सिद्धोंकी उपासना का वर्णनहै व सिद्धोंको जगत् उत्पत्ति करनेमें सामर्थ्यहोतीहै जो सिद्ध पुरुषही सृष्टिकर्त्ता ईश्वर सिद्धहोते हैं तौ सांख्यही के मतसे सिद्धोंसे सृष्टि उत्पन्न होनेका प्रमाण नहीं होसक्ता जिसतरह ईश्वरके मुक्तहोने व बद्ध होने में दोनों तरहसे राग रहितहोने अथवा अज्ञानसे सृष्टिका उत्पन्नहोना संभव नहीं होता इसीतरह सिद्धों को मुक्त व बद्ध दोमें एक मानना चाहिये क्योंकि वही मुक्त वही बद्धमानना असंभवहै दोमेंएकमाननेसे सिद्धों से सृष्टिका होना रागरहित होने अथवा पराधीनअज्ञानहोनेसे प्रमाण नहीं होता व प्रकृति जड़का स्वतंत्र आपसे सृष्टिके अर्थ प्रवर्त्त होना व चेतनके सन्निधिमें प्राप्तहोना तथा जो परमाणु आदि जड़को विना चेतन अधिष्ठाता आपसेसृष्टिके अर्थ प्रवर्त्त होना मानतेहैं यह सब असंभव व अयुक्तहै तिससे श्रुतिप्रमाणसे व अन

मानसे सर्व शक्तिमान् ईश्वरही सृष्टिका उत्पन्न कर्ता
है व सर्वसिद्ध ईश्वर व लौकिक ईश्वरोंकी अपेक्षा सब
से उत्कृष्टता संयुक्त जो है वही मुख्य ईश्वर शब्द व
परमेश्वर शब्दसे वाच्य होताहै यह प्रमाणहोताहै अन्य-
था मानना भ्रममात्रहै अब जो यह शंकाहै कि मुक्त व
आप्तकाम ईश्वरमें राग व प्रयोजन न होनेके अनुमान
से सृष्टिके उत्पत्तिकर्त्ता होनेका अनुमान नहीं होता यह
सत्यहै परन्तु जो आत्मज्ञानी योगीकर्म करताहै व कर्म
फलकी इच्छा नहीं करता व ज्ञानसे अपने को निर्लिप्त
जानताहै प्रिय अप्रियके प्राप्तहोनेमें हर्ष शोक नहीं क-
रता वह जीवन्मुक्त व जलमें जैसे कमल रहताहै जल
छूनहीं जाता इसीतरह उसको कर्मसे बंधन नहींहोता
यह श्रुति स्मृतिमें कहाहै व प्रत्यक्षमें भी जिसमें अति-
राग व स्नेह होताहै उसीमें फिरज्ञान कारण विशेषसे
विराग होनेसे राग जातारहता है व उसके त्याग में
शोक नहीं होता व जिसमें कुछ राग नहीं हो उस में
कारण विशेषसे राग व जिसमें राग होताहै उसमें द्वेष
होताहै अर्थात् रागद्वेष बंध यह अज्ञान होनेसे व परा-
धीन होनेसे होतेहैं ईश्वर जोसर्वज्ञ स्वतंत्रहै उसके प्र-
वर्त होनेमेंभी उसको राग व बंधनहो होसक्ता जो यह
कहाजावे कि यद्यपि बंधनहो व स्वतंत्रहोना अंगीकार
कियाजावे तथापि बिनाप्रयोजन प्रवर्त्त होना संभव नहीं
है प्रयोजन क्याहै तो ईश्वरका किसी अपने उपकारके
अर्थ सृष्टिकी रचना करनेका अनुमान नहीं होता जिस

से उस के आप्तकाम होनेमें भेद व दोष होना अंगी-
कार किया जाय ईश्वर जीवोंकेकर्म व संकल्प अनुसार
जीवोंके कर्म व संकल्प फल प्राप्ति व भोगके अर्थसृष्टि
उत्पन्न कियाहै जो यह संशयहो कि ईश्वर किसी को
अन्य योनिकी अपेक्षा अति सुखीकिया जैसे देवता आ-
दिको व किसीको अतिदुःखी जैसे पशु कृमि आदि
किसीको सुख दुःख भोगके मध्य दशामें निर्माणकिया
जैसे मनुष्यआदि विषम सृष्टिके उत्पन्न करनेसे ईश्वर
में रागद्वेषकी प्राप्ति जानीजाती है तथा संघारने व
निन्दित कर्म करनेवाले जीवोंके उत्पन्न करनेसे विषमता
व निर्घृणता दोष ईश्वरमें होनेका प्रसंग होताहै उत्तर
यहहै कि वैषम्य नैर्घृण्य दोष होनेका ईश्वर में प्रसंग
नहीं होता क्योंकि ईश्वर प्राणियोंके उत्तम मध्यम नि-
कृष्ट संकल्प व पुण्य पापसे उत्तम मध्यम निकृष्ट योनि
में कर्मफल भोगके अर्थ सृष्टिकियाहै ईश्वर केवल जीवों
के कर्म के फल देनेका नियम सृष्टि द्वाराकिया है इस
से ईश्वरमें दोष प्राप्त होनेका प्रसंग नहीं हो सक्ता
जैसे मेघ वर्षा करके केवल उत्पन्नकरने के सब धान्य
व तृणमें कारण होतेहैं परन्तु वह अपने अपने बीज
अनुसार नामरूप नाना प्रकारसे उत्पन्न होते हैं इसी
तरह ईश्वरदेव मनुष्यआदि सबमें वैषम्य नैर्घृण्य दोष
रहित उत्पन्न करनेका कारणहै परन्तु प्राणियोंके धर्म
अधर्म कर्म अनुसार उत्कृष्ट निकृष्ट योनिमें उत्पन्न कर-
ताहै व सुख दुःखको प्राप्त करता है कर्म को अपेक्षा

ईश्वरका उत्तम मध्यम निकृष्ट योनिमें सृष्टिका निर्माण करना अनुमानसे जैसा कि कहागया है सिद्धहोता है व श्रुतिमें भी कहाहै ॥

पुण्योवैपुण्येनकर्मणाभवतिपाप पापेन॥

अर्थ पुण्य अर्थात् उत्तमपुण्य कर्मसे होताहै पाप अर्थात् निकृष्ट पापकर्मसे होताहै तिससे प्राणियोंकेकर्म अनुसार ईश्वरका सृष्टिका कारणहोना निश्चयहोता है अब यह शंकाहै कि सृष्टि उत्पन्नहोनेके पश्चात् शरीरसे कर्म व कर्मकी अपेक्षा शरीर होना एक एक के आश्रयहोना संभव होताहै सृष्टिसे पहिले कर्मके अभाव होनेसे कर्मकी अपेक्षा ईश्वरको सृष्टिमें प्रवर्त्त होने का प्रमाण नहीं होता कर्मके अभावसे आदिमें एक तरह की सृष्टिहोना चाहिये उत्तर यहहै कि यह दोष नहीं होसक्ता क्योंकि कर्म संबन्ध व संसार अनादिहै तिससे विषम सृष्टिके कारण होनेसे ईश्वरमें दोष होनेकाप्रसंग ग्रहणके योग्य नहीं होसक्ता जो यह संदेह है कि बिना शरीर कर्म नहीं होता व शरीर होनेके पश्चात् होनेसे कर्मके अनादि होनेका प्रमाण नहीं होता इसके उत्तर में कोई आचार्य यह कहतेहैं कि बीज अंकुर की तुल्य जैसे विना बीजके अंकुर व विना अंकुर व वृक्षके बीज नहीं होता दोनोंका परस्पर आश्रयहोना अनादिपाया

जाताहै इसी तरह कर्म विनाशरीर व शरीर बिनाकर्म के होनेका प्रमाण नहींहोता इन दोनोंके परस्पर आश्रयहोनेसे संसार अनादिहै संसारके अनादि होने से कर्म अनुसार विषम सृष्टिहोने से ब्रह्ममें वैषम्यदोषकी प्राप्ति नहीं होती बीज अंकुरकी तुल्य कर्म व शरीर के परस्पर आश्रय होनेसे संसारका अनादिहोना आचार्यमानतेहैं तथापि विचारनेसे यद्यपि कर्म शरीरका परस्पर आश्रयहोना कवसेहै तथा बीजसेअंकुर व अंकुर से बीज इनदोनोंके परस्पर आश्रय होनेका नियम कब से है यह आदि न जानने से अनादि करना सत्यहै परन्तु बीज अंकुर दोनोंके प्रत्यक्ष आदि मान होनेसे तथा सावयवस्थूल होनेसे यद्यपि कारणरूप सत्ता अनादिहो तथापि कार्यरूप बीज अंकुर दोनोंका एकही कालमें भेदरहित प्रकट न होनेसे अवश्यकरके एकदूसरेका एकदूसरेसे पहिले व पीछेहोनेका अनुमान होताहै चाहैजबसे हो अबयह संशयहै कि इन दोमें पहिले किस के होनेका अनुमान होताहै तो बिना बीजके अनेक वृक्ष लताको वेड़सेअर्थात् एक वृक्ष व लताके शाखा व अवयवसे सजातीय अन्य वृक्ष व लताका होना प्रत्यक्षदेखाजाताहै वृक्षका बीजसे व बिना बीज के भी उत्पन्न होना सजातीय व बिजातीय दोनों दृष्टांतसे सिद्धहोताहै व चरशरीर धारियोंके शरीर उत्पन्न होनेका कारण वीर्य का आश्रय व धारणस्थानशरीरहीहै शरीरही उसकाक्षेत्र है इससे वीर्यवोने के अर्थ क्षेत्रका प्रथमहोना अवश्यहै

इस तरह स्थावर में बिना बीजके अपेक्षा कहीं कहीं वृक्षके होनेसे व बिना अंकुर व वृक्षके बीजके कहीं न उत्पन्न होनेसे व जंगममें शरीरहीमें वीर्य उत्पन्न होने व शरीरही क्षेत्रमें उसके धारण व वय न होनेसे यह अनुमान होता है कि शेषमें जिनमें बीज अंकुर दोमें से एकके पहिले होनेका निश्चय नहीं होता इसीतरह प्रथम आदिमें कर्ताने अंकुर को उत्पन्न करके पश्चात् बीजसे अंकुर व अंकुरसे बीज परस्पर आश्रय होनेका नियम कियाहै जैसे कि मनुष्य पशुआदि जंगममेंइसी तरह होनेका अनुमानहोताहै अन्यथा होना संभवनहीं होसक्ता तिससे प्रथम अंकुर व शरीरका होना पश्चात् अंकुर व बीजका व शरीर व कर्मका परस्पर एक दूसरेके आश्रय होनेके नियम होनेका अनुमान होता है परन्तु यह नियम कबसे है इसके आदि न जानने से अनादि ईश्वरका नियम अनादिहै यह अंगीकार किया जाताहै इसी तरह कर्मके अनादि व शरीरसे पहिलेहोनेका अनुमान होताहै क्योंकि यद्यपि प्रत्यक्ष में विना शरीर व करणके कर्मका होना नहीं देखा जाता परन्तु इसी जन्ममें साधन व तप विशेषसे योगियोंको सिद्ध आदिको प्राप्त होते है कि विना शरीर इच्छा मात्रसे अन्य शरीरआदि को धारण करते हैं जहां इच्छाकरते हैं क्षणमात्रमें गमन करतेहैं सैकरों कोशके पदार्थों को देखते व जानतेहैं अर्थात् जो कार्य व कर्म एक देशीय शरीरसे होना असंभव है इच्छामात्र से करते हैं जो

अवस्था विशेषमें ऐसा होनेका विश्वास न करें तो नहीं होता यह भी जब तक उसतरह करके अवस्था विशेष को प्राप्तहोकर परीक्षा न करलेवै निषेध नहीं करसक्ता न निषेध करना अंगीकार के योग्य होसक्ता है व अपनेहीको साक्षात् साधन अनुसार विलक्षण शक्ति होना अनुभव होना प्रत्यक्ष होनेसे व योगी साधकोंमें जो प्राकृत शरीर व साधारण मनुष्योंमें असंभवहै विभूति व शक्ति प्रत्यक्ष होनेसे यह अनुमान होताहै कि किसी अवस्था विशेषमें सब प्राणी बिना शरीर अनादि सूक्ष्म परमाणु जगतमें मानसिक कर्म व संकल्प करते हैं व उनके संकल्प व कर्म अनुसार ईश्वर सृष्टि कर्त्ता है पश्चात् शरीरसे शारीरिक मानसिक वाचक कर्महोने व कर्म अनुसार जन्मान्तर व सुख दुःख प्राप्तहोनेके नियमसे जबतक मोक्षको नहीं प्राप्तहोताहै अनेक जन्म व सुख दुःख को प्राप्तहोताहै अभिप्राय यहहै कि नित्य अनादि जीवोंके कर्मभी अनादि होना युक्तहै अनादि कर्म संस्कार होनेसे जीवोंके संकल्प व कर्म अनुसार ईश्वर सृष्टिको करताहै यह अनुमानसे सिद्धहोता है व वेद स्मृतिसे भी संकल्प अनुसार एक शरीर के त्यागके पश्चात् जन्मान्तर में प्राप्तहोने का प्रमाण होताहै यह नियम जिसतरह अबवेद स्मृतिके प्रमाण से जैसा पूर्वही वर्णन किया गया है प्रमाण अंगीकार किया जाताहै इसीतरह यह अनुमान होताहै कि जब प्रथम शरीरकी उत्पत्ति हुईहोगी अथवा होतीहै संकल्प

व कर्म अनुसार होना संभवहै अन्यहेतु यहहै कि बिना कर्मसृष्टि व शरीरकी उत्पत्ति माननेमें अकृताभ्यागमदोष की प्राप्तिहोतीहै अर्थात् वे कारण विशेष बिनाधर्म अ-धर्म बिषमसृष्टि होनेमें बिनाअपराध दंड व बिनापुण्य उत्तमफल अनुचित होनेका दोष तथा जे मुक्तहैं उनको भी फिर संसार बंधन होनेका प्रसंग अन्याय व नियम रहित होनेके हेतुसे प्राप्त होगा ऐसा सर्व न्यायकारी स्वच्छ ईश्वरसे होना असंभवहै तिससे सर्वथा जीवोंके कर्म अपेक्षा ईश्वरके सृष्टि करनेके प्रमाणसे ईश्वर में दोष व आप्तकाम होनेका अभाव नहीं होता बिषम सृष्टिकरने में ईश्वरमें वैषम्य नैर्घृण्यदोष न होनेमें यही हेतु अर्थात् जीवोंके कर्म अनुसार सृष्टिहोना व जीवोंके कर्म व कर्म अनुसार सृष्टिका अनादिहोना वेदान्तसूत्र मेंश्रीव्यासमुनि प्रतिपादन कियाहै यथा॥

वैषम्य नैर्घृण्येनसापेक्षत्वात्तथा हिदर्शयति॥

अर्थ ईश्वरमें वैषम्यनैर्घृण्य दोष है जो यह संशय होनहीं अपेक्षा सहित होनेसे अर्थात् जीवोंके कर्म अपेक्षा सहित विषम सृष्टिहोनेसे ईश्वरमें विषमभावहोने आदि का दोष नहीं होता किस हेतु प्रमाणसे हेतु यहहै किते-हीप्रकारसे श्रुति वर्णन करतीहै इससे श्रुति यहहै॥

पुण्योवैपुण्येनकर्मणाभवतिपापः पापेन ॥

अर्थ उत्तम पुण्य कर्मसे होताहै निकृष्ट पापकर्मसे ॥

तथादूसरेसूत्रमेंकहाहै-नकर्मविभागा दितिचेन्नानादित्वात् ॥

अर्थ नहींकर्मविभाग न होनेसे अर्थात् विनाशरीरसृष्टि से प्रथम कर्मविभाग न होनेसे ईश्वरके वैषम्य दोष का निवारणनहींहोता जो ऐसासंशयहोतौयहसंशय न होना चाहिये किसहेतुसेअनादित्वसेअर्थअनादि होनेसे जीवों के कर्म अनादिहैं तथा कर्म अनुसारसृष्टिअनादिहै यह सूत्रकाभावहै विशेष व्याख्यान जैसा पूर्वही कहागयाहै जानना चाहिये इससे ईश्वरमें दोषआरोपण नहीं हो सकता व चेतन ब्रह्म इस विचित्र नियम संयुक्त सृष्टि कार्यका कर्ताहै अवयहसंशयहै कि विनाशरीर व करण कर्मकरना प्रत्यक्षनहींहोता जैसे कुम्हार विना हाथचक्र दंड सूत्रआदिके घटआदि नहीं बना सकता इसीतरह शरीर रहित बिनाकरण ईश्वरके सृष्टि करनेका अनुमान नहींहोता तौ इसका संक्षेप उत्तर पूर्वही कहागयाहै अव फिर वर्णनकियाजाताहै कि जिसतरहदेवतापितर ऋषि साधन व धर्मबिशेषसे महाप्रभावको प्राप्तहो बिनावाह्य

साधन व शरीर इन्द्रियों के साधनके ध्यानमात्र करके आपहीसे नानास्थानमें व अनेकशरीर महल रथआदि की रचना करतेहैं व किसी शरीरबिशेषके आधीन नहीं होते इच्छापूर्वक जिस शरीरकोचाहतेहैं त्याग व धारण करतेहैं सूक्ष्म बायुमात्र रूपहोकर वायु में गमन करते हैं यह योगशास्त्रके विभूति पादसे प्रमाण सिद्धहै इसी तरह सर्व शक्तिमान नित्य सिद्ध ईश्वर का विना शरीर व वाह्य साधनके सृष्टि उत्पन्न करनेका अनुमान होता-है व श्रुति प्रमाण से भी ब्रह्म को विना शरीर करण सब कर्म करनेकी सामर्थ्यहोना सिद्ध होना सिद्धहोताहै श्रुतिमें कहा है॥

अपाणिपादोजवनोगृहीतापश्यत्य चक्षुःसशृणोत्यकर्णः॥

अर्थ बिना हाथग्रहण करताहै बिनापद चलताहै बिना नेत्र देखताहै बिना कान सुनताहै जिसतरह एककी वा एकअवस्थाकी सामर्थ्य देखी जातीहै इसीतरह अन्यकी व अवस्थान्तर की होना चाहिये यह नियम नहीं है न होसकताहै जो यहकहाजाय कि यद्यपि देवता आदि वाह्य करणकी अपेक्षा नहींकरते तथापि शरीरधारी हैं शरीर धारियोंमें ऐसा होना ज्ञात होताहै ईश्वर शरीर रहित में यह दृष्टांत युक्त नहींहै तो उत्तर यहहै कि दृष्टांत सर्वथा सम्पूर्ण अंश व धर्ममें समनहींहोतानहीं भेदरहित होनेसे

द्वैतभावअर्थात् साध्य साधकका अभाव होजावैसाध्य के एकअंश वा देशमेंके साधर्म्यसे दृष्टांत सिद्ध होताहै जिस तरह करणकी अपेक्षा मात्रसे कुम्हारके दृष्टांत से अभिप्रायहै इसीतरह करणकी अपेक्षा न होनेमात्र से सिद्ध देवताओंआदिके दृष्टांतमें अभिप्रायहै तिससे विनाकरण ईश्वरके सृष्टिकरनेका प्रमाण होताहै इसतरह अनुमान हेतु श्रुति स्मृति प्रमाणसे चेतनब्रह्मका इच्छापूर्बक सृष्टि उत्पन्न करना सिद्धहोताहै इस जगत् का कारण सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् चेतन होनाआदि लक्षण संयुक्त ब्रह्महै उस ब्रह्मकी जिज्ञासा व उपासना मुक्तिके अर्थ करना चाहिये ब्रह्मके ज्ञान व उपासना से मुक्तिहोती है यह श्रुति प्रमाणसे सिद्धहै श्रुतिमें कहाहै ॥

ज्ञात्वादेवंसर्वपाशापहानिःक्षीणैःक्लेशैर्जन्ममृत्युप्रहाणिस्तस्याभिध्यानात् तृतीयंदेहभेदेविश्वैश्वर्यंकेवलआप्तकामःइत्यादि ॥

अर्थ ब्रह्मदेव को जानकर सब बंधन अविद्याआदि क्लेशसे रहित होताहै क्लेशोंसे रहितहोनेसे उनके कार्य्य रूप जन्म मृत्युसे रहित होता है उसके ध्यानसे क्लेश हानि व जन्म मृत्यु इनदोनोंकी हानिकी अपेक्षा तीसरे मनुष्य देह त्याग करनेके पश्चात् सिद्धदेह में विश्वके

ऐश्वर्य अणिमाआदि सिद्धिरूप होताहै उसके अनन्तर केवल अर्थात् सब ब्रह्म मय ज्ञानभाव को प्राप्त द्वैत ज्ञान शून्य से आप्तकाम होताहै अर्थात् कैवल्य मोक्ष कोप्राप्त पूर्णकाम आनन्द स्वरूप होताहै इस श्रुति में जन्म मृत्यु हानिवक निर्गुणविद्याका फलकहाहै व उस के ध्यान से सगुण विद्याका फल व क्रमसे मुक्ति होने की विधिको कहाहै इसतरह ब्रह्मके निर्गुण व सगुण विद्यासे मोक्ष व फलको श्रुतिमें कहाहै तिससे ब्रह्मज्ञान व ब्रह्मके उपासनासे मोक्षहोना श्रुति प्रमाणसे सिद्धहै परन्तु सम्पूर्ण वेदान्त व श्रुति में अपने व ब्रह्म में भेद रहित ज्ञानहोनेसे मुक्तिहोना कहाहै जब तक द्वैत बुद्धि है तबतक कैवल्य मुक्तिनहीं प्राप्त होतीहै ब्रह्मका अद्वैत होना तर्ककरके सिद्ध नहीं होसकता यद्यपि वेदान्त दर्शनमें दृष्टांत व युक्तिसे प्रथम जहांतक हो सकाहै अद्वैतको वर्णन किया है परन्तु यथार्थ पूर्वा पर सम्बंध से व तर्कयुक्तिहेतु विरुद्धहोनेसे अद्वैतसर्व ईश्वरही होने के भावसे तर्क अनुमान करके सिद्ध नहींहोता तत्रआ- चार्य आपही मुख्य अभिप्राय अद्वैत उपासनाका द्वितीय अध्याय के प्रथमपादके ग्यारहवें सूत्रमें वर्णन किया है वह सूत्र यहहै ॥

तर्काप्रतिष्ठानादप्यन्यथानुमेयमिति चेदेवमप्यविमोक्षप्रसंगः ॥

अर्थ तर्कके प्रतिष्ठा न होनेसे भी जो अन्यथा अनु-
मानको योग्यहो तौ ऐसा माननेमें भी मोक्ष न होनेका
प्रसंगहै अभिप्राय इस सूत्रका यह है कि श्रुतिमें जीव
आत्मा व परमात्माको अभेद माननेको कहा है इससे
श्रुति विरुद्ध तर्क की प्रतिष्ठा यद्यपि नहीं है तथापि
तर्कका निषेध नहीं किया क्योंकि श्रुतिका अर्थ युक्तिसे
एक द्रव्य चेतन पदार्थ भाव ग्रहणसे अद्वैतभाव तथा
व्यक्तिभाव से द्वैतमेंभी लग सक्ताहै तर्कको मनुआदि
आचार्य आदर कियाहै मनुजीने कहाहै॥

आर्षंधर्मोपदेशंचवेदशास्त्राविरोधि

नायस्तर्केणानुसंधत्तेसधर्मंवेदनेतरः॥

अर्थ वेदशास्त्रके विरोध रहित तर्कसे जो आर्षव धर्म
उपदेशको धारणकरताहै वह धर्मकोजानताहै अन्यनहीं
जानता तिससे यह कहाहै कि जो अन्यथा अर्थात् तर्क
होकरके अनुमानके योग्य मानाजाय व तर्क से अद्वैत
का ग्रहण न होवै तौ ऐसा अंगीकार करनेमेंभी मोक्ष न
होने का प्रसंग है अर्थात् यद्यपि तर्कसे द्वैत सिद्धहो त-
थापि अद्वैतभाव करके ब्रह्मकी उपासना करना इस
प्रयोजनसे श्रेष्ठ व मुख्यहै किमोक्षलाभ जो विशेष जीव
का अभीष्टहै वह बिना अद्वैतज्ञानके प्राप्त नहींहोता जो
यह संशय हो कि ब्रह्मके ज्ञान व उपासना व केवल
अद्वैतभाव से मोक्षहोनेमें क्या हेतुहै तौ हेतु यहहै कि

सम्पूर्ण दुःखोंसे छूटनेको व अनन्त सुख प्राप्तहोने को मोक्ष कहतेहैं व सिवाय परमात्माके और कोईऐसानहीं है जिसमें कुछ दुःखका लेशनहो इससे केवल नित्यआनन्दस्वरूप परमात्मामें प्राप्तहोनेसे मोक्षहोना अंगीकार होसक्ताहै अन्य कोई यत्न नहीं है अद्वैत ज्ञानसे मोक्षहोनेमें यह हेतु है कि जैसा संकल्प व इच्छा जीव की होती है व जिसमें प्रीति होतीहै व ध्यान रहताहै उसीतरहका फल प्राप्तहोताहै यह श्रुति स्मृति प्रमाण से सिद्धहै जिसमें प्रीति होतीहै उसीके प्राप्त होने की इच्छा होतीहै व उसीका ध्यान रहताहै यथार्थ अति प्रीतिका लक्षण यहहै कि जिसमें प्रीतिहोतीहै प्रीतिके कारणसे उससे भिन्नहोनेकी इच्छा नहींहोती व चाहै अपनेसे श्रेष्ठहो चाहै नीच जिसमें जिसकी प्रीतिहोतीहै उसमें अपने को एकभाव करके ग्रहण करता है न्यून अधिक व भेद मानने की बुद्धि अर्थात् द्वैत बुद्धिको दूरकरता है व जिसमें उसकी यथार्थ प्रीति है जो वह कोई कारणसे कपट वा भेद रखता है तो प्रकट होनेसे उसके प्रीतिमेंभी कमी होती है व उसको खेद होताहै अभिप्राय यहहै कि यथार्थ प्रीति द्वैत बुद्धिकी नाश करनेवाली है व सुख जिसमें प्रीति होतीहै उसीमें बोध होताहै अन्य किसी पदार्थसे चित्तको सुख नहीं होता व सब कालमें प्रेयका ध्यान रहता है संसारी प्रीतिवान् अपने व प्रियतम प्रेयमें केवल शरीर दो होने मात्रका भेद मानताहै और कुछभेद नहीं मानता जब

तक जिसके मनमें एक दूसरेकी अपेक्षा कपट भय बि-
श्वास न होने अथवा किसीकारण से कुछभी भेदहै
तबतक यह जानना चाहिये कि यथार्थ प्रीति नहीं है
यथार्थ प्रीति होनेमें प्रत्यक्ष बिचारने से लोकमें ऐसा
होना देखपरताहै व यह सिद्ध होताहै यथार्थ अतिप्रीति
होनेमें यही अवस्था होतीहै चाहै अज्ञान से नीचमें
प्रीतिहो व उसका परिणाम अच्छा न हो व चाहै ज्ञान
व सत्संगसे उत्तम में ऐसी प्रीति जिससे लोक व पर-
लोक दोनोंमें सुख व उत्तमगति व प्रतिष्ठा हो यह सं-
स्कार व भाग्य आधीनहै जब परस्पर दोनों में यथार्थ
प्रीति होतीहै तब अपने यत्न व उपाय भर परस्पर
एकही प्रकार की अवस्था व एकही प्रकारके सुखलाभ
होनेको चाहतेहैं इसीतरह जबतक ब्रह्मज्ञान को प्राप्त
हो ब्रह्मके ध्यान व समाधिमें मग्नहो अति प्रेमभावसे
अपनेको व ब्रह्मको अभेद अद्वैतभाव से नहीं मानता
तबतक ब्रह्म में यथार्थ प्रेम नहींहै जब यथार्थ अद्वैत
भावको प्राप्त हुआ कि संसार तुच्छ नाशमान मानकर
विरागको प्राप्तहो सबको ब्रह्ममय देखनेसे किसीसमय
में ब्रह्मके ध्यानसे रहित नहींहोता तब यद्यपि ब्रह्मराम
अपेक्षा रहित है परन्तु आत्मज्ञानी को उसके संकल्प
व भावके अनुसार नियत अवस्था नियम विशेषमें मोक्ष
फलको देताहै अर्थात् ब्रह्म उपासक सब विकार व
क्लेश रहितहो परमात्मा को प्राप्तहो आनन्दमय होता-
है अद्वैत प्रतिपादक श्रुतियोंमें अद्वैत प्रतिपादन करने

का अभिप्राय यहहै कि चेतन द्रव्यभाव से चेतनरूप आत्मा परमात्मा एकही है व यह भी अभिप्राय है कि बिना अद्वैतभावके मुक्ति नहीं होती जे ब्रह्मज्ञानको लाभ करके अद्वैतभावको प्राप्त होतेहैं उनहीको कैवल्य मोक्ष प्राप्तहोताहै व जे भेद बुद्धि सहित ध्याता ध्येय सगुण व कार्य्य ब्रह्मभाव से उपासना करते हैं उनको उत्तम लोक स्वर्ग ब्रह्म लोक सुख प्राप्त होकर क्रमसे जैसा पूर्वही श्रुति अर्थमें कहागया है मोक्षको लाभ करतेहैं, जो यह संशयहो कि जो अद्वैत कहनेका यह अभिप्राय है तौ श्रुतिमें प्रकट इसतरह क्यों नहीं वर्णन किया इसका हेतु यह अनुमान कियाजाता है कि अद्वैतवर्णन करने से जे उत्तम अधिकारी नहीं हैं उन का चित्त भी अद्वैतही भावको विशेष विश्वास करके ग्रहणकरै व सबको अनित्य भ्रम व मिथ्या समुझकर संसार बिषय से विरागहो भेदबुद्धि होनेसे अद्वैतभाव के उपासना में उनके चित्तको विक्षेप न हो इसतरह श्रुति व अनुमानसे जगत्के उत्पत्ति का कारण व सर्व शक्तिमान होनेआदि लक्षण संयुक्त ब्रह्मका होना व उत्पत्तिके कारण होनेसे जगत्के स्थिति लयकाभी कारण होना व ब्रह्मज्ञान व उपासनासे मोक्षहोना सिद्ध होताहै ॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेब्रह्मलक्षणपरीक्षावर्णने
षष्ठोऽध्यायः ६ ॥

—※—
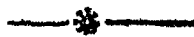
अथ धर्मांगवर्णनपूर्वकाष्टांगयोग वर्णनविषयःप्रारंभः॥

अब धर्म जिससे स्वर्ग अपवर्ग प्राप्त होना वर्णन कियागया है उस धर्मके आचरण व विधि व मोक्षप्राप्त होनेका मार्ग योगसाधनका वर्णन कियाजाता है मानसिक शारीरिक वाचकभेदसे धर्म्मके अंग मुख्य दश प्रकारके हैं मनुस्मृतिके छठवेंअध्यायमें धर्म्मका लक्षण यह वर्णन कियाहै॥

धृतिःक्षमादमोऽस्तेयंशौचमिन्द्रियनिग्रहः धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकंधर्मलक्षणम्॥

अर्थ धृति क्षमा दम अस्तेय अर्थात् चोरी न करना शौचइन्द्रिय निग्रहधी अर्थात् विवेक से शास्त्रोंका तत्त्व ज्ञानविद्या अर्थात् आत्मज्ञान सत्य अक्रोध यह दशधर्म के लक्षणहैं अब इनका प्रथक् प्रथक् व्याख्यान किया जाताहै प्रथम धृति अर्थात् धैर्य्य धर्म अंग है क्योंकि विनाधैर्य्य चंचलतासे न सांसारिक न पारमार्थिक कोई कार्य्य सिद्ध नहीं होते अथवा धृतिशब्द का अर्थ संतोष ग्रहण कियाजाताहै तृष्णा जो मनकी चंचलताका हेतु है व चित्तके एकाग्रता व उपासनामें विघ्न करनेवाली

है उसको त्यागकर संतोषको धारण करना दूसरे क्षमा अर्थात् जो अपनी हानि करै वा कोई अपराधकरै उस को सहना उसकी हानि न करना क्षमाकरनेसे जिससे अपराध होजाताहै वहभी अंतमें लज्जित होताहै कोई अपना शत्रु नहीं होता व विशेषफल यहहै कि अपने चित्तमें अशान्तता नहीं होती तीसरे दम दमसे अभि-प्राय नानाप्रकार की कुवृत्तियां जो मनमें अनर्थ अभि-लाषाकी हेतु होतीहैं धर्म्ममें बाधा करती हैं उनसे निवृत्त करके मनको शान्त करना चौथे चोरी न करना क्योंकि चोरी अन्याय व परको दुःख देनाहै जिससे चित्त पापसे मलीन होताहै व भयकाभी कारण है धर्म का नाशहोताहै व असत्य बोलनेका हेतुहै पांचवें शौच अर्थात् शरीरको व चित्तको पवित्र रखना शरीरको दंत धावन व स्नान आदिकरके मलसे रहित व पवित्ररखना व चित्तको उत्तमवृत्तियों व बिचारसेशुद्धरखना इसतरह अंतर वाह्य भेदसे शौच दो प्रकार है शौचसे शरीरकी अरोग्यता व प्रसन्नता व चित्तकी शुद्धता से धर्मआच-रण व विवेक ज्ञान लाभ करने के योग्य होताहै छठवें इन्द्रिय निग्रह अर्थात् वाह्य इन्द्रियोंका विषयोंसेरोक-ना जिससे रूप आदि बिषय व मैथुन आदि सुखमें प्रवृत्त होनेसेअधर्ममें रुचि न हो व धर्मसे पतित न हो सातवें धी अर्थात् विवेकसे शास्त्रोंका तत्त्वज्ञान जिससे सत् असत् को विचारकर सत्को ग्रहण व असत् को त्यागकरै आठवें विद्या अर्थात् विवेक द्वारा आत्मज्ञान

को लाभकरना मिथ्या बुद्धिको दूर करना नवें सत्य बोलना सत्यको दृढ़ करके चित्तमें धारण करना क्योंकि सत्य सम्पूर्ण धर्मका मलहै सत्यका पूर्वही वर्णन कियागया है कि बिना सत्य कोई धर्म आचरण सिद्ध नहीं होता न सत्यरूप परमेश्वरकी प्राप्ति होतीहै असत्यसे अधिक कोई पाप नहींहै यहश्रुति स्मृति पुराण सबका सम्मतहै दशवें अक्रोध अर्थात् क्रोध रहितहोना क्योंकि क्रोध चित्तका अशान्त करनेवाला है अशान्ततासे धर्म व साधनके दृढ़ताको हानि होतेहै व अनेक प्रकारके अपराध क्रोधसेहोतेहैंयद्यपिमनकी कुवृत्तियों के दमन करने व इन्द्रियों के वश करने में सामान्य वर्णनसे काम क्रोध लोभ आदि सबका ग्रहण होजाता है परन्तु क्रोधके प्रबल होने व अति शीघ्र प्रकट होने आदि हेतुसे भिन्न करके विशेषवर्णन कियाहै यहधर्मके अंग वा गुण साधन करनेसे चित्त शुद्ध व ज्ञानका प्रकाश होताहै ज्ञानहोनेसे मिथ्या बुद्धिका नाशहोताहै व विराग प्राप्त होताहै विराग होनेसे असत् विषयों का त्याग व सत्य परमात्मा ब्रह्ममें प्रेम होताहै प्रेमसे ब्रह्मके ध्यानमें एकाग्र चित्त व एकभाव होनेसे मोक्ष प्राप्त होताहै यह धर्म गुण चित्त शुद्ध करने व ज्ञान उत्पन्न होनेके उपयोगी हैं व स्वर्ग लोकपर्य्यंतके फल देनेवालेहैं मोक्ष केवल ज्ञानसे होना वेदमें कहाहै अर्थात् आत्मज्ञान प्राप्त होने व योग अभ्याससे परमात्माके ध्यानमें एकाग्र चित्त होनेसे प्राप्त होताहै मोक्ष

धर्म आचरणका फल नहींहै परन्तु चित्त शुद्ध करने व ज्ञान प्राप्त होनेका आदि कारण धर्महीहै इससे स्वर्ग व मोक्ष दोनोंके प्राप्त होनेका कारणधर्महीहै विनाधर्म दोमेंसे एकभी नहीं प्राप्त होता इससे दोनोंका धर्मसे सिद्धहोना धर्मके लक्षणमें कहाहै जो यहसंशय हो कि योग अभ्यास करके परमात्माके ध्यान करनेसे क्या प्रयोजनहै वेदमें व मीमांसा दर्शनमेंयज्ञआदि क्रियाक-रना धर्मवर्णन कियाहै अग्निहोत्रआदि यज्ञकरनेसेस्वर्ग प्राप्त होताहै इससे यज्ञ आदि करना चाहिये तौ इसका उत्तर यहहै कि यद्यपि यज्ञमें हवन करने से जिसस्थान में हवन होताहै उसस्थान का अशुद्ध वायु जो देहके मल आदि स्पर्शसे दुर्गंध संयुक्त होताहै अग्निकी गरमी से पतला व सूक्ष्महो निकल जाताहै वाहेरका शुद्धवायु प्राप्तहोताहै व जोसुगंधित पदार्थका हवन किया जाता है उनकी सुगंधसे वायु व स्थान सुगंधित होताहै वायु के शुद्ध व सुगंधित होनेसे वर्तमानमें अरोग्यता व अ-रोग्यतासे देहसुख होताहै व शब्द प्रमाणसे अग्निहोत्र आदिसे शरीर त्यागके पश्चात् स्वर्गलोक प्राप्तहोताहै इससे यज्ञ आदिसे इसलोक व परलोक दोनोंमें सुख प्राप्तिफल होताहै परंतु स्वर्ग आदिका क्षयहोना भी कहाहै पुण्यक्षीण होनेसे फिर मृत्युलोकमें जीव पतित होताहै अनित्ययज्ञ आदिकर्मसे नित्यसुख नहीं प्राप्तहो सकता यज्ञ आदिका फल अनित्य होनेसे अंतमें फिर दुःखहीहै, ब्रह्मज्ञान व उपासनाका फल नित्यसुख ल[illegible]

मोक्षहै इससे आत्मज्ञानको लाभ करके परमात्मा ब्रह्म
की उपासना व ध्यान करना सबसे श्रेष्ठहै विषयसे वि-
राग होनेसे व योग अभ्यास से परमात्मा का ध्यान
होताहै अबयह जानना चाहिये कि योगक्याहै व किस
तरह योग अभ्यास करनेसे ध्यानमें चित्तस्थिर होताहै
व क्याविधि है चित्तके स्थिरहोने व मनकी चंचलता
रुकनेकी कठिनता होनेसे क्रमकरके चित्तके साधन के
अर्थ आठ अंगयोग के वर्णन किया है उनको विभाग
करके पीछे वर्णन करेंगे प्रथम योगक्याहै यह वर्णन
करतेहैं चित्तके वृत्तिओंके निरोध अर्थात् रोंकको योग
कहते हैं जबसब चित्तकी वृत्तियां रुकजाती हैं केवल
जिसका ध्यान कियाजाता है उसीका स्वरूप मात्र भा-
सित होताहै उसको योग कहते हैं व उसीको समाधि
कहतेहैं चित्तमें तीनगुण होतेहैं सत्वरज तम जब रजो-
गुण संयुक्त होताहै तब ऐश्वर्य्यको चाहताहै तमोगुणमें
मिलकर अर्थात् जब तमोगुण मात्र प्रधान होताहै तब
अधर्म अज्ञान व ऐश्वर्य्यके अभाव व मोहको प्राप्तहोता
है व सत्वगुण संयुक्त होकर धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य्य
को प्राप्तहोता है सत्वगुणसे भी रहितहो ज्ञानमात्र में
स्थित एकाग्रचित्त ध्यान समाधिको प्राप्तहोताहै जबतक
ध्याता व ध्येय दोनोंका कुछभी ज्ञान रहता है उसको
सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं व जब ध्येय में ऐसाचित्त
एकाग्र होताहै कि ध्येयमात्र भासित होताहै दूसरे प-
दार्थका ज्ञाननहीं होता उसको निर्बीज व असम्प्रज्ञा

समाधि कहते हैं इसतरह सम्प्रज्ञात असम्प्रज्ञात दो प्रकारके समाधि होतेहैं चित्तकी पांचभूमी होतीहैं क्षिप्त मूढ़ विक्षिप्त एकाग्र निरुद्धक्षिप्तमें रजोगुण को प्राप्त नानाविषयोंमें चित्तभ्रमण करता अति चंचल रहताहै, मूढ़में तमोगुण को प्राप्त निद्रा व अज्ञानको प्राप्तहोताहै, व विक्षिप्तमें कहीं कहीं चित्त सत्वगुण मिलने से स्थिर होताहै,विघ्नकरके फिर भ्रमको प्राप्तहोता है,एकाग्रमें सबक्लेशको क्षीणकरकेध्यानको प्राप्त होताहै व निरोधके सन्मुख होताहै व निरुद्धमें सबवृत्तियोंके निरोध होजाने से असम्प्रज्ञात समाधिको प्राप्तहोता है जिनसब वृत्तियोंके रुकनेसे समाधि होतीहै वहवृत्तियां क्लिष्ट अक्लिष्ट रूप पांच प्रकारकी हैं क्लिष्ट वह हैं जो क्लेश संयुक्तहैं अक्लिष्ट वह हैं जो क्लेशरहित हैं उनपांचकी वृत्तियोंके नाम वर्णनकिये जातेहैं प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रा स्मृति यह पांचवृत्तीहैं,प्रत्यक्ष अनुमान आगम यह प्रमाण हैं उपमान सहित न्याय शास्त्रमें चार प्रमाण कहाहै, परन्तु योग शास्त्रमें उपमानको अनुमानही के अंतर्गत मानकर तीनही प्रमाणके भेद वर्णन कियाहै, प्रमाणों का विशेष व्याख्यान लक्षण परीक्षा सहित निर्णय का वोध न्याय दर्शनके दूसरे अध्यायके देखनेसे होसकताहै यहांकुछ संक्षेप लक्षणमात्र वर्णन कियाजाता है इन्द्रिय व सन्निकर्ष से भ्रम व दोष रहित निश्चय सहित जो यथार्थ ज्ञान होताहै उसको प्रत्यक्ष कहते हैं सीपमें चांदीका ज्ञान तथा दूरसे उड़ती हुई धूलिमें

धुवांका ज्ञान होना आदि भ्रमसे ऐसावोध होनेसे अथवा संशय रहनेसे कि चांदी है व नहींहै धुवांहै व नहीं है अथवा चक्षु इन्द्रियमें दोष होनेसे शुक्ल वस्तु पीत वोधहोनेसे प्रत्यक्ष नहीं है क्योंकि प्रत्यक्षके लक्षण के विरुद्ध है प्रत्यक्ष भ्रमसंशय दोष रहित यथार्थ ज्ञानहै प्रत्यक्ष के दोष संयुक्त होने से प्रत्यक्ष पूर्वक जो अनुमान होता है वह भी असत्य होताहै, असत्यहोने से प्रमाणका अभाव होताहै पूर्व प्रत्यक्ष हुये सम्बंधकेस्मरणसे प्रत्यक्ष अर्थसे जिसका उसके साथ सम्बन्ध है, उस प्रत्यक्षसे अप्रत्यक्षके जाननेको अनुमान कहते हैं, यथाधुवां के निश्चित ज्ञानहोनेसे उसकेसम्बंध स्मरण से विना प्रत्यक्षहोने के सम्बंधको प्राप्त अग्निके होनेका ज्ञान होना अनुमानहै, जो वेदशास्त्र व आप्तवाक्य अर्थात् सत्यवादी साक्षात् भ्रमरहित जानने वालेके कहने से जोज्ञान होताहै उसको आगम व शब्दप्रमाण कहते हैं इसतरह जिस वृत्तिसे सत्यज्ञान होताहै वह प्रमाण वृत्तिहै प्रमाण वृत्तिद्वारा विवेक करनेसे मिथ्या बुद्धि का नाश व असत् पदार्थ से विराग होताहै मिथ्या बुद्धिके नाश व तत्वज्ञानके प्राप्तहोनेसे सुखप्राप्त होता है दुःखनाश होताहै इससे प्रमाणवृत्तिअक्लिष्टहै, अर्थात् क्लेश रहितहै व जिसमें भ्रम से मिथ्या ज्ञानहोता है, वह विपर्यय है जैसे सीपमें चांदी का ज्ञान होना नेत्र विकार व कारण विशेषसे दोचन्द्रमा देखनाआदि यह विपर्यय अविद्या रूप अर्थात् यथार्थ ज्ञान के विरुद्ध

अविद्या अस्मिता रागद्वेष अभिनिवेशइनपांच क्लेशरूप-
होताहै इनपांच क्लेशोंके लक्षण आगे वर्णन किये जा-
यंगे पांच क्लेशरूप होनेसे विपर्यय क्लिष्ट है अर्थात् क्लेश
युक्तहै जिसका शब्दतोहो परन्तु उसतरहका पदार्थनहो
व शब्दही सुनकर उसतरह मानलेना विकल्पहै जैसे
कोई किसीसे यह सुनकर कि मनुष्यके शिरमें सींग
देखाहै यहमान लेवै कि सींगवाले भी मनुष्य होते हैं
व होतेहोंगे तमोगुण आलंबन करने वाली जो वृत्तिहै
अर्थात् तमोगुण जो ज्ञानका आच्छादन करनेवाला
अज्ञानरूप है उसमें प्राप्तहोनेवाली जो वृत्तिहै जिसमें
जाग्रत् स्वप्नकी वृत्तियोंके अभाव होनेसे पुरुष सुषुप्ति
को प्राप्तहोता है वह निद्राहै पूर्वमें जो विषय व वस्तु
प्रत्यक्ष हुवाहै उसका वर्तमानमें संस्कार व प्रत्यक्षहोने
व अन्यकारण विशेषसे ज्ञानहोना स्मृति है समाधि में
यहसव वृत्तियां निरोधके योग्यहैं जबतक इनका निरोध
नहीं होता तबतक समाधि नहीं होती इनका निरोध
अभ्यास व वैराग्यसे होताहै और किसीतरह नहींहो
सकता इसचित्तके शान्तहोने के अर्थ यत्न साधन अनु-
ष्ठान करना अभ्यास है यह अभ्यास बहुत काल नि-
रंतर तप ब्रह्मचर्य्य विद्याश्रद्धा करके साधन करने से
सत्कार करने वाला फल दायक होताहै व जो लौकिक
विषयसुख देखा जाताहै व जोस्वर्ग आदिका सुखसुना
जाताहै सबको अनित्य जानकर सबसे तृष्णा रहित
होना अर्थात् इसलोक व स्वर्गलोक पर्य्यंत सुख की

इच्छा न करना वैराग्यहै अभ्यासकरने व चित्तमें वैराग्य होनेसे वृत्तियोंका निरोध होताहै निरोध होनेसे समाधि की प्राप्तिहोती है प्रथम सम्प्रज्ञात समाधि प्राप्तहोती है पीछे अतिसाधन व चित्तको एकाग्रता से असम्प्रज्ञात समाधि होतीहै सम्प्रज्ञात वितर्क विचार आनन्द अस्मितारूप चारप्रकार की होती है जिसतरह निशाना लगाने वाला प्रथम बड़े स्थूल वस्तु में निशाना लगाना सीखताहै स्थूलमें अभ्यास करके फिर सूक्ष्म में निशाना लगाताहै इसी तरह साधन करने वाला प्रथम सूक्ष्मके ध्यान करने में समर्थ न होने के कारणसे स्थूल रूप सूर्य्य चतुर्भुज रूप विष्णु अथवा रामकृष्ण आदि जिसमें रुचि व भक्ति हो उसका ध्यानकरके साक्षात् करता है स्थूलको ध्यान करके साक्षात् करने को बितर्क समाधि कहते हैं इसके पश्चात् फिर सूक्ष्म स्थूल भूतके कारण उनके मात्रों रूप रस आदिकों को समाधि करके साक्षात् करने को विचार समाधि कहतेहैं जब ध्येयके ध्यान साक्षात् होनेमें आनन्द होने से समाधिमें आनन्द में मग्न होताहै उसको आनन्द समाधि कहतेहैं जब ध्यान करने वाले को यह बोध होताहै कि मैं ही ध्येय रूपहूं उसको अस्मिता कहते हैं यह चार अवस्था सम्प्रज्ञात समाधिकी हैं जबध्यान करने वाले को अपने में व ध्येय में कुछ भेद बुद्धि नहीं रहती क्योंकि अस्मितातक अपने में अहङ्कार बुद्धिरहती है कि मैंध्येयहूं कथनमात्र भेदहै जबकुछ भी अपने में

भेद नहीं समुझता आपही ध्येयरूप होजाताहै सबवृति-
योंका निरोध होजाता है उसको असम्प्रज्ञात योग
व समाधि कहतेहैं योगियोंको यह निरोध समाधि
बहुत उपाय से प्राप्तहोतीहै वह उपाय क्याहैं श्रद्धा
वीर्य स्मृति प्रज्ञा यह उपायहैं इनपूर्वक योगियों को
असम्प्रज्ञात समाधि होतीहैं अर्थात् प्रथम श्रद्धा होती
है श्रद्धावान् विवेकार्थीको वीर्य अर्थात् सामर्थ्य उत्पन्न
होताहै उससे विक्षेप रहित स्मृति अर्थात् ध्यान होताहै
एकाग्रध्यान होनेसे अति बिबेक उत्पन्न होताहै जिससे
तत्व ज्ञान प्राप्तहोताहै फिर उसके अभ्यास व बिषयके
वैराग्य होनेसे असम्प्रज्ञात समाधि होती है इसउपाय
में भी मृदु मध्य अधिमात्रा आदि भेदहैं अर्थात् इसी
उपाय में भी किसी को अतिदीर्घ काल बहुत दिनों के
साधन में सिद्धि होतीहै व किसीको कुछदीर्घ कालमें
किसी को जल्दी थोड़े काल में सिद्धि होतीहै यह उत्तम
मध्यम निकृष्ट अभ्यास धर्म अधर्म सम्बंध व पूर्व जन्म
संस्कार बशसे यथा अभ्यास व संस्कार बहुत दीर्घ
काल कुछदीर्घ काल व थोड़े काल में सिद्धि होतीहै
अथवा अति भक्ति विशेष से परमेश्वरके ध्यान करनेसे
परमेश्वरके अनुग्रह से ध्यानमात्रहीसे विनाअन्य साधन
व उपाय के समाधि लाभ होताहै व फल प्राप्त होताहै
अब यह जानना चाहिये कि जिसकी अनुग्रह मात्र से
समाधि लाभ व फल प्राप्तहोताहै वह ईश्वर को है व
उसका क्या लक्षणहै पूर्वहीं जो लक्षण ब्रह्मका वर्णन

किया गयाहै वही लक्षण ईश्वर का जानना चाहिये क्योंकि एकही पदार्थ बाचक दोनामहैं अर्थात् जो इस जगत् का कारण सर्बशक्तिमान् सर्बज्ञ नित्य मुक्त शुद्ध आनन्द स्वरूप होना आदि लक्षण संयुक्तहै वह ईश्वर है अथवा योग शास्त्र में ईश्वरका यह लक्षण बर्णन कियाहै ॥

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेषईश्वरः यो० पा० १ सू० २४

अर्थअविद्याआदि पांचक्लेश व पाप पुरायकर्मोंकी जो जो बासनाहैं इनसबसे जो सदा अलग और वधरहित है वह नित्य मुक्त आनन्द मय पुरुष ईश्वरहै तथा ॥

तत्रनिरतिशयंसर्वज्ञबीजं यो० पा० १ सू० २५

अर्थउसमें अर्थात् ईश्वरमें अतिशय नित्य सर्बज्ञज्ञानहै अर्थात् जिसमें तीनोंकालका सम्पूर्ण पदार्थके जाननेका ज्ञान नित्य रहताहै जिसके अनन्त ज्ञान सामर्थ्यकी अवधि नहींहै वह परमेश्वरहै जो यह माना जावै कि विष्णु शिव ब्रह्मा आदियह पर ब्रह्महैं तौइसके निर्णय केअर्थ योग शास्त्रमें कहाहै ॥

———※———

पूर्वेषामपिगुरुः कालेनानवच्छेदात्

यो० पा० १ सू० २६

अर्थकालकी अवधि संयुक्तहोनेसे पूर्ववालोंकाभी गुरु है अर्थात् पूर्वमें जो ब्रह्मा विष्णु आदि सिद्धहुएहैं उनका काल मर्यादा करके उत्पत्ति व विनाश होताहै उनके काल परिमाण संयुक्त होनेसे नित्य ईश्वर उनकाभी गुरुहै अर्थात् उनसेभी श्रेष्ठ कालसीमा रहितहै उसपरमेश्वरकी सदा उपासना करना उचितहै उस ईश्वरका वाचक जो ओं नामहै उसके जप व उसके अर्थके भावना से उपासना करना चाहिये इसतरह प्रणवको जपकरते हुए व उसके अर्थकी भावना व उपासना करतेहुए योगी काचित्त एकाग्रताको प्राप्त होताहै शुद्ध ईश्वर में जब तक चित्त शुद्ध अर्थात् अधर्म मलरहित नहीं होता तब तक नव प्रकारके विघ्नोंसे ईश्वरमें चित्त एकाग्र नहींहोता विघ्नोंसे विक्षेप भ्रमको प्राप्त होताहै व्याधि स्त्यान संशय प्रमाद आलस्य अविरति भ्रांति दर्शन अलब्ध भूमिकत्व अनवस्थितत्व यह नव प्रकारके विघ्नहैं अब क्रमसे इनका अर्थ व लक्षण वर्णन किया जाताहै प्रथम व्याधि अर्थात् वात पित्त कफ रोग शरीरमें होनेसे विघ्न होताहै ध्यान समाधि में विक्षेप होताहै दूसरे स्त्यान अर्थात् उत्तमकर्म करनेमें इच्छा न होनेसे अथवा कर्मके योग्य चित्त न होनेसे विघ्नहोताहै तीसरे संशय अर्थात्

जिस पदार्थका निश्चय किया चाहै उसमें यह निश्चय नहोनेसे कियह सत्यहै व नहीं अथवा इसका फलजैसा सुनाजाताहै उसतरह होताहै व नहीं चित्तमें विक्षेप होताहै चौथे प्रमाद अर्थात् समाधिके साधनों में प्रीति व यथावत् बिचार न होनेसे बिघ्नहोताहै पांचवे आलस्य अर्थात् चित्त व शरीरके गुरुता से अर्थात् चित्त व शरीर में आरामकी इच्छासे साधन छोंड़ देनेसे. बिघ्नहोताहै छठवे अबिरति अर्थात् विषय भोगमें तृष्णाहोनेसे बिघ्न होताहै चित्त ईश्वरमें एकाग्र नहीं होता सातवें भ्रान्ति दर्शनसे अर्थात् विपरीतज्ञान होनेसे जड़में चेतन व अनुचितमें उचित बोध होने से बिघ्न होताहै आठवें अलब्ध भूमिकत्वसे अर्थात् समाधि भूमि जो ध्येयपदार्थ में चित्त का लगनाहै उसमें चित्त न लगने से बिघ्न होताहै नवमें अनवस्थित्व अर्थात् ध्येय में चित्त एकाग्रहो समाधि को प्राप्तहो स्थिर न रहनेसे बिघ्न होताहै यहनव योगके शत्रु हैं समाधिमें इन नव बिघ्नोंसे चित्तके बिक्षेप होनेसे दुःख व इच्छा पूर्ण न होने से चित्तका क्षोभ अङ्गका कांपना व श्वास प्रश्वास होतेहैं इन बिघ्नोंके नाशहोने के अर्थ एक तत्वइष्टका अभ्यास करना चाहिये कहीं किसीमें कहीं किसीमें अनेकमें रुचिहोनेसे चित्त शान्त स्थिरनहीं होता तिससे वैराग्य पूर्बक ब्रह्म उपासना एक तत्वका अभ्यास करना चाहिये चित्तके प्रसन्न होने व एकाग्रहोनेके यत्नको वर्णन करते हैं प्रथम सुखी प्राणियों के साथ मित्रता करना व दुःखी प्राणियों में कृपादृष्टि

रखना पुण्यात्माओं में हर्ष व पापी प्राणियों में अपेक्षा अर्थात् न उनके साथ प्रीति करना न बैरही करना इस प्रकार के भावना करने से चित्तशुद्ध व प्रसन्न होताहै शुद्धहो स्थिरता को प्राप्त ध्यानके योग्य होताहै व इस-तरह प्राणायाम करनेसे कि कोष्टकी वायुको रेचक क्रिया करकेयत्नविशेष से व मलकीतुल्य बाहर निकालैं बाहर ही जितनी देरतक रुकसकै रोकैं फिर धीरे धीरे अन्तर को श्वासलेइ चित्त स्थिरता को प्राप्त होताहै अथवा नासिका के आगे दृष्टि रखने से दिव्य गंधका बोधहोताहै व चित्तस्थिर होताहै जिह्वाके अग्रमें चित्त लगाने से रसतालु में रूप जिह्वाके मध्य में स्पर्श जिह्वा के मूलमें शब्द संवित अर्थात् साक्षात्कारहोनेकी प्रवृत्ति उत्पन्न होतीहै इसी तरह चन्द्रमा सूर्य ग्रह मणि प्रदीप किरणों में धारणा व ध्यान करके एकाग्र चित्त होनेसे समाधि प्राप्त होनेमें जिसका ध्यानकरै वह प्रत्यक्षहो-ताहै प्रत्यक्ष होने से परमेश्वर व अपवर्ग अर्थ में जो सूक्ष्म परोक्ष अदृश्यहैं उनमें श्रद्धा बिश्वासकी दृढ़ता होतीहै इसी अभिप्राय से व चित्तकी स्थिति होनेके प्र-योजन से प्रथम स्थूलका ध्यान करके प्रत्यक्ष करनेका उपदेश कियाहै स्थूल प्रत्यक्ष होने से चित्तस्थिर होताहै व सूक्ष्म अर्थ के ध्यान समाधि से साक्षात् होनेका निश्चय होताहै इस तरह स्थूल में ध्यान सिद्ध होनेसे योगियों को स्थिति पद लाभ होता है अथवा प्रथमही ब्रह्मको परम प्रकाश स्वरूप भावना करके हृदय

आकाशमें धारणाकरके ध्यानकरै कि हृदयमें सूर्यस्वरूप प्रकाशित जो ब्रह्मका तेज है उसीके प्रकाश से बाहर आकाश में सूर्य प्रकाशित है व उसका प्रकाश भूलोक भुवर्लोक व स्वर्लोक में व्याप्तहै उसब्रह्मदेव सूर्य स्वरूपके तेजका हमध्यान करतेहैं जोतेज जन्म मृत्युदुःख नाशके अर्थप्रार्थनाके योग्यहै हमारी बुद्धियोंको धर्मअर्थ काममोक्षमें प्रेरणाकरै इसतरह जैसामनोर्थहोउसतरहकी प्रार्थना करके इसउत्तम गायत्रीमें वर्णन किए हुये ध्यान कोकरै इसमेंकोईभ्रम करके यह न समुझैकी सूर्यही ब्रह्म है इसध्यानके वर्णनका अभिप्राय यहहै कि ब्रह्मको परम तेजमय मानकर अज्ञान तम नाशके अर्थ ब्रह्मका ध्यान करै यह ज्ञानगायत्री जोबेदमें मुख्य ग्रहण कीगईहै उस में वर्णन कियाहै गायत्रीयहहै॥

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।धियोयोनःप्रचोदयात्॥

इस गायत्रीको ओंभूर्भुवस्स्वः पूर्वही कहकर आदि अंतमें ओंकार संयुक्त जपकरै व इसके अर्थ के भावना करके ब्रह्मको ध्यानकरै इसके अर्थ में बहुत बिस्तार है परन्तु संक्षेपजो पहिले कहागया तथा अन्य जो वर्णन किया जायगा भावनाके अर्थ चित्तके अधिकार अनुसार

समुझना चाहिये अब फिर संक्षेप अभिप्राय मात्र बा-
क्यार्थ समुझमें आनेके अर्थ कहाजाताहै अर्थ यहहै कि
उस सविता अर्थात् सम्पूर्ण भूतों के उत्पन्न करने वाले
अथवा प्रेरणा करनेवाले ब्रह्मदेवताके तेजको अथवा सूर्य
स्वरूप प्रकाशमान ब्रह्मदेवताके तेजको जो जन्म मृ-
त्युदुःख नाशके अर्थ प्रार्थना करनेके योग्यहै हम ध्यान
व धारण करते हैं जो ब्रह्महमारी बुद्धियोंको उत्तम धर्म
आचरण व मोक्ष मार्गमें प्रेरणाकरै अभिप्राय यह है कि
जो वह तेज स्वरूप ब्रह्म अंतर्यामी रूप करके हृदय में
स्थित है वही सूर्यमें पुरुष रूपसे बिद्यमान है दोनोंमें
भेदनहींहै तथापि जो हृदय में स्थित हमारी बुद्धियोंको
प्रेरणा करता है वह ध्यान करनेके योग्य है सूर्यमण्डल
मध्यवर्ती तेजके साथ एकभाव करके उक्तप्रार्थना करके
ध्यान उपासना करै वह ब्रह्मकैसाहै तेजस्वरूप भूलोक
भुवर्लोक स्वर्लोकमें व्यापकहै ऐसेब्रह्मके तेजको हृदयमें
जो भूलोक भुवर्लोक वस्वर्लोक व चराचर सूर्य मण्डल
मध्यमें बर्त्तमानहै परब्रह्म स्वरूप ज्योतिका ध्यानकरै
प्रथम इसतरह जो रूपरहित निराकारमें चित्तलगानेको
समर्थ नहोतौ तेजमय रूपमें ब्रह्मकाध्यान करके समाधि
को प्राप्तहो जवविशेष अधिकार योगमें व चित्तके एका-
ग्रकरनेमेंहो तबइसीगायत्रीका जोनिराकार सर्वव्यापक
आदि विशेपण युक्त ब्रह्मस्तुति प्रतिपादक अर्थहै उस
अर्थसे निराकार नित्य व्यापक सर्वशक्तिमान होने आदि
गुण संयुक्त भावनाकरके ब्रह्मके बिचार व ध्यानमें प्रवर्त्त

होवै क्योंकि इसगायत्री मंत्र व ओंकारसे अनेक परमे-
श्वरके नाम व स्तुति प्रार्थना के अर्थका ग्रहण होताहै
अधिकारियोंको इसतरह गायत्रीके अर्थसे ब्रह्मकीभाव-
ना व प्रार्थना करते हुए चित्तको ब्रह्मके प्रेम व ध्यानमें
मग्नकरना चाहिये जो अब वर्णन किया जाताहै प्रथम
आदिमें ओं शब्द जो कहाजाता है वह अउम तीन अ-
क्षर मिलकर होताहै इन एक एक अक्षरों के अनेक
नाम व अर्थहैं यथा अकार विराट अग्नि विष्णुका वा-
चक है इन नामोंके अर्थसे ईश्वरकी स्तुतिहै यथा वि-
राट शब्दसे ईश्वर विराटहै यह ग्रहण होताहै अर्थात्
विविध प्रकार चराचर जगत् का प्रकाश करने वाला
है अग्निहै अर्थात् सब ज्ञानियों करके पूजित व सबमें
प्राप्त होरहा है विश्वहै अर्थात् उसमें आकाश आदि
भूत सब प्रविष्टहैं विष्णुहैं अर्थात् सबमें व्यापकहैं यह
सब नाम व स्तुतिका अकारके अर्थमें ग्रहण होताहै
तथा उकारसे हिरण्यगर्भ वायु तैजस आदि ईश्वर के
नामोंका ग्रहणहोताहै हिरण्यनामतेजवानकाहै ईश्वर
हिरण्यगर्भहै अर्थात् सूर्य्यआदि तेजवान पदार्थ उसके
गर्भमें अर्थात् अंतर्गत हैं वायुहै अर्थात् बलवाला व
सब जगत् का धारण करने वालाहै तैजसहै अर्थात्
स्वयं प्रकाश स्वरूप व तेजवान ज्ञान स्वरूप है यह
सब अर्थका उकार से ग्रहण होताहै मकारसे ईश्वर
आदित्य प्राज्ञनाम ग्रहण किएजातेहैं ईश्वर है अर्थात्
ऐश्वर्य्यमान सर्वसक्तिमानहै आदित्यहै अर्थात् अखण्ड

अबिनाशी है प्राज्ञहै अर्थात् सब जानने वाला ज्ञान स्वरूपहै इतना संक्षेप अर्थ ओंकार का कहागया अब भूः भुवः स्वः इनतीन महाव्याहृतियोंका अर्थकहाजाता है तैत्तिरीय उपनिषदमें प्रपा० ७ अनु० ६ में भूका अर्थ प्राण भुवका अपान स्वःका व्यान लिखाहै परमात्मा प्राणहै अर्थात् सब जगत् के जीनेका हेतुहै व प्राणसे भी प्रियहै अपानका अर्थ दूरकरनेकाहै अपानहै अर्थात् परमात्मा मोक्ष चहने वाले अपने धर्मात्मा सेवकोंका सब दुःख दूर करने वालाहै व्यान अर्थात् सब जगत् में व्यापकहो सबका अधिष्ठानहै अब तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् इसका अर्थ लिखा जाताहै जो सर्व शक्तिमान् सच्चिदानन्द परमात्मा सविता अर्थात् सब जगत् का उत्पन्न करनेवाला व देव अर्थात् सब जगत् का प्रकाश करने वाला व आनन्द देनेवालाहै उसका जो भर्गनिर्गुण शुद्धसकल दोष रहित परमार्थ बिज्ञान स्वरूप वरेण्य अर्थात् श्रेष्ठ प्रार्थनाके योग्यहै व अत्यंत धारण के योग्यहै तत् अर्थात् उसको धीमहि अर्थात् हमलोग सदा प्रेमभक्ति से निश्चय करके अपने आत्मामें धारणकरैं किसप्रयोजनके अर्थ प्रयोजन यहहै कि यः अर्थात् जो पूर्वोक्त सविता देव परमेश्वरहै वह नः अर्थात् हमारी धियः अर्थात् बुद्धियों को प्रचोदयात् अर्थात् सब अधर्मों से बचाकर उत्तम धर्म मोक्ष मार्गमें प्रेरणा करै अर्थात् सब अधर्म से बचाकर धर्म व मोक्ष मार्गमें प्रवर्त्त करै

यह गायत्री मंत्रका अर्थहै इसतरह नित्य प्रार्थना करते ईश्वर मनन व ध्यानमें समाधिगत हो द्वैतज्ञान रहित ईश्वर प्रेममें मग्न होनेसे जीव मोक्षको प्राप्त होताहै जो इसतरह ध्यान न होसकै तौ प्रथम साधनमें जिसतरह चित्तस्थिर हो वह यत्नकरै रागरहित जे सिद्ध हुयेहैं उनके ध्यानको करके चित्तको स्थिर करै इसमें भी चित्त न लगै तौ कोई समय में स्वप्नमें अच्छीमूर्त्ति किसी देवता व सिद्धकी देखै व उसमें चित्त प्रसन्न हो तौ उसी में चित्तको स्थिर करै अथवा जिसमें हृदयकी रुचिहो उसी के ध्यान में चित्तको प्रथम स्थिर व एकाग्र करै यद्यपि योग शास्त्र में कहीं किसी देवता व मूर्त्तिके ध्यान को स्पष्ट वर्णन नहीं किया परन्तु यहकहाहै ॥

यथाभिमतध्यानाद्वा

अर्थ जो उक्तउपायों से चित्तस्थिर न हो तौ जिसमें रुचिहो उसीके ध्यान करने से प्रथम चित्त को स्थिर करै यह कहने से यह अभिप्राय ग्रहण किया जासकताहै कि प्रथम बिष्णु शिव रामकृष्ण जिसमें प्रेम व रुचि हो जैसा पुराणोंमें बर्णन कियाहै जिसका चित्त सूक्ष्म बिचार व ध्यानमें न लगै प्रथम उसी स्थूलरूप को ब्रह्म भावसे चरणसे अरंभ करके ध्यानकरै व चित्त को उसमेंस्थिरकरै अथवा अन्य किसी स्थूलका ध्यान करै उसमें स्थितिपदको लाभ करके फिर अन्यसूक्ष्म में स्थितिपद को लाभकर सकताहै इसतरह अभ्यास

वैराग्य करके चित्तको एकाग्र करैं सूक्ष्म में परमाणु पर्य्यंत व स्थूलमें परममहत्तत्व पर्य्यंत योगी चित्तको प्रवेशकरके स्थितिपद को लाभकरताहै जब सब वृत्तियों का निरोध होजाताहै व समाधि में चित्त स्थित होताहै तब आपध्येयरूप भासित होताहै ध्याता ध्येय ध्यान भेद नहींरहता जबतक स्थूल के ध्यानमें नाम अर्थज्ञान का विकल्प भेद रहताहै तबतक उसको सवितर्क समापत्ति कहते हैं जब भेद बुद्धि नहीं रहती एकही रूप भासित होताहै तब निर्वितर्क समापत्ति कहतेहैं इसी तरह सूक्ष्म विषयमें सविचार निर्विचार शब्दोंकोजानना चाहिये निर्विचार के विशारदहोने में आत्मामें प्रसन्नता व ज्ञानकाप्रकाश होताहै निर्विचारसमाधिसे उत्पन्न संस्कार प्रज्ञा विभूति अन्यसंस्कार जोक्लेश संस्कारहैं उनको रोंकतेहैं व चित्तको अधिकार विशिष्ट करते हैं समाधिसे उत्पन्न संस्कारके भी निरोध होने से सबके निरोध होजाने से निर्बीज अर्थात् क्लेशबीज रहित असंप्रज्ञात समाधि होतीहै व उसको प्राप्तहोकर पुरुष मुक्त रूप होताहै॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेयोगवर्णनेसप्तमोऽध्यायः ७॥

अथाष्टांगयोगवर्णन प्रारंभः॥

यह योग अभ्यास वर्णन किया गया केवल जिनके चित्त शांत व समाहित हैं वही ध्यानमात्र से समाधि में एकाग्रचित्त होसक्ते हैं जिनके चित्त चंचलहैं उनके

चित्त योगमें किसतरह स्थिर होसक्ते हैं उनके अर्थ
क्रियायोग साधनको वर्णनकरतेहैं तपस्वाध्याय ईश्वर
प्रणिधान क्रियायोगहै द्वंदसहना क्षुधा पिपासा सहना
व्रत करना तपहै प्रणवआदि पवित्र ईश्वर के नामका
जपकरना मोक्ष शास्त्रका पढ़ना स्वाध्यायहै सब क्रिया-
ओंको ईश्वरमें अर्पणकरने व फल की इच्छा न करने
एकाग्रचित्त करके ईश्वरके ध्यान करनेको ईश्वर प्रणि-
धान कहते हैं यह तपस्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान स-
माधिके भावनाके अर्थ व क्लेश क्षीण होनेके अर्थ किये
जातेहैं अर्थात् क्रियायोग से योगी क्लेशरहित होता है
चित्त शुद्ध होताहै तब शांत स्थिरहो समाधि के योग्य
होताहै अब क्लेश क्याहैं जे समाधिके बाधकहैं व जिन
से चित्त विक्षेपको प्राप्तहोताहै वर्णन करतेहैं अविद्या
अस्मिता राग द्वेष अभिनिवेश यह पांचक्लेशहैं इनमें अ-
स्मिताआदि सबका कारण अविद्याहै अविद्या आदिके
भिन्न भिन्न लक्षण वर्णन कियेजातेहैं अनित्यको नित्य
अशुचिको शुचि दुःखकोदुखी सुखको सुखी अनात्माको
आत्माजानना अविद्याहै जैसेकोई अग्निपृथ्वी चंद्र सूर्य
अनित्यको नित्यमानकर उपासना करतेहैं अथवाकार्य
रूपसंसारको नित्यमानतेहैं स्वर्गलोकको नित्यमानकर
उसके प्राप्तहोनेके अर्थ यज्ञआदिकरतेहैं यह अविद्याहै
तथा अशुचिशरीर जो माताकेउदरमें मूत्रआदि संयुक्त
स्थानमें पितामाताके वीर्य व रुधिरजो खाने पीनेके रससे
उत्पन्न होताहै उससे शरीरउत्पन्न होताहै पसीना मल

मूत्र आदि इसशरीरसे निकलतेहैं जिसके स्पर्शसे स्नान करनेकी इच्छाहोतीहै बिनास्नान चित्त प्रसन्न नहींहोता जो शरीर मलमूत्रसे अशुद्ध होजाता है वो जलआदि से धोनेसे शुद्ध समझाजाताहै ऐसे अशुचि शरीरमें जो कामिनी सुगंध लगाकर अच्छे वस्त्र धारण करतीहै तो उसमें मोहित हो उसको शुद्ध मानकर काम आधीन होताहै धर्म उत्तमपदार्थकोभूलजाताहै परलोकका कुछ स्मरण नहीं करता इसीतरह अन्य दृष्टांत जे कुसंगवश अशुचिको शुचिमानकर अज्ञानसे प्रवृत्तहोतेहैं जानना चाहिये कि इसतरह अशुचिमें शुचिमानना अविद्या है परिणाम में इसका फल केवल दुःखहै व दुःखमें सुख मानना यहहै कि धनआदिके संचयकरने में दुःख रक्षा करने में भय नाना व्यापार करनेमें अनित्य नाशमान विषयमें क्षय वियोग आदिसे दुःखहीहै परन्तु प्राणी अज्ञानसे सुख मानते हैं यह अविद्या है तथा शरीर अचेतन जड़को यह मानना कि जीव शरीरसे भिन्न कुछ नहीं है शरीर इन्द्रियही जवतक कोई शक्ति विशेष रहती है चेतन हैं व इनहीको दुःख सुख होताहै जीव को कौन जानताहै कि वह मरनेके पश्चात् रहता है यह अविद्या है यह अविद्या क्लेशरूपहै अविद्याहीका कार्य अस्मिताहै यह चेतन पुरुष शुद्ध रूपहै अंतःकरण मात्र में विकार व अशुद्धता सुख दुःखहोतेहैं परन्तु संयोगसे अविद्यासे बंधाहुआहै जो यह मानाजावै कि नहीं जीव को स्वाभाविक बंधहै तौजिसतरह अग्निकी स्वाभाविक

उष्णताविनाअग्निके नाश होनेके नाशनहीं होती इसी-
तरह जीवके स्वाभाविक बंधहोनेमें नित्यबंध होना चा-
हिये कभी जीवकी मुक्ति न होना चाहिये क्योंकि स्व-
भाव द्रव्य का द्रव्यही नाशहोनेके साथही नाशहोताहै
नहीं नाश नहींहोताहै ऐसा होनेमें मुक्त होनेका उपदेश
जो वेदशास्त्रमें है मिथ्याहो जायगा इससे जीव स्वाभा-
विक बद्ध नहीं है शुद्ध मुक्तरूपहै परन्तु अज्ञानसे अंतः
करण सम्बंधद्वारा अहंकार से बंध विकार अपनेही में
मानताहै कि मैंहींदुःखीहूं मैंहींसुखीहूं मैंमोहितहूंइत्यादि
यही अहंकार वृत्ति अस्मिता है जबतक यह है तभीतक
शरीर व इन्द्रियोंकेसाथ जीवरूप पुरुषकोबंधनहै आत्म-
ज्ञान होनेपर यह जीवबंधसे छूटकर मुक्त होताहै बंधके
कारणहोनेसे अस्मिता क्लेशहै तथा नानाप्रकारके विषय
में जिसमें सुखबोध होताहै व सुखहोनेका स्मरणहोताहै
कि यह सुखहोनेका पदार्थहै उससुखमें व उसकेसाधनमें
जो तृष्णाहोतीहै व लोभहोताहै उसको राग व जिसमें
दुःखबोध होताहै व दुःखका स्मरण होताहै उसदुःखमें
व उसके साधनमें जो नाशकरनेकी इच्छा व क्रोधहोता
है उसको द्वेषकहतेहैं यहभी दोनें अविद्याके कार्यवक्लेश
रूपहैं कृमि पक्षी मनुष्य पशु सबको जो मरनेकी त्रास
व भयहै यह अभिनिवेश है जोयह संशयहो कि पक्षी
आदिमें मरण त्रासहोने का बोध किसतरह होताहै तो
अपने को मरते जानकर व भयानक पदार्थ देखकर
भागते व छिपते हैं इससे मरण त्रासहोने का अनुमान

होताहै चेतन मनुष्यमें मरण त्रास सबको होती है यह प्रत्यक्ष पांचक्लेश प्राणियों को होतेहैं इनके निवृत्ति के अर्थ योग साधनमें प्रवृत्त होना चाहिये जन्मान्तर व इसजन्मके जो कर्म आशयहैं वही क्लेशके मूल कारणहैं कर्मोंके विपाकसे प्राणियों का नानाप्रकारकी योनिमें जन्म व अल्प दीर्घआयु होना व दुःख सुख भोगहोताहै यह जो जन्म आयुभोग कर्मविपाक से होतेहैं उनमें से पुण्यकर्म के हेतुसे जे होतेहैं वह सुख प्राप्त करनेवाले होतेहैं पापहेतुसे जे होतेहैं व हदुःखफलरूप वा दुःख फल प्राप्त करनेवाले होतेहैं परन्तु विवेकियोंको दुःख फलवाले व सुख फलवाले सब परिणाम ताप व संस्कार दुःखोंसे तथा गुणवृत्तियोंके विरोध से दुःखही हैं यद्यपि विषयीजनों को विषय सुखके समयमें दुःखनहीं बोधहोता है तथापि योगियों को विचार करनेवालों को सब विषय सुख दुःखही बोध होता है किसहेतु से दुःखबोध होताहै परिणाम ताप संस्कार दुःखहोने से परिणाम दुःख यहहै कि विनाराग सुखनहीं होता व विना राग प्रवृत्ति नहीं होती व प्रवृत्ति पुण्य पाप हेतुसे होतीहै पुण्यका फल यद्यपि सुखहै परन्तु जबपुण्य क्षीण होनेसे सुखका नाशहोताहै परिणाममें दुःखप्राप्तहोता है तब दुःखको नहीं चाहता परन्तु वह नहीं रुकता परिणाममें दुःखही होता है इससे जिसका चित्त वैराग्यको प्राप्त विषय सुखसे तृप्त होकर शान्तताको प्राप्त है उसीको सुखहै विषयभोग के अभ्यास से इन्द्रियोंकी तृष्णा

बढ़ती जातीहै इससे भोगसे इन्द्रियोंके शांत होने का उपाय नहींहै विषयसुख अविद्यामात्रसे सुखबोध होता- है परिणाममें दुःखहीहै जैसे मिठाई व विषमिला हुआ लड्डू वा अन्न पहिले मिठाईसे सुख बोध होताहै विष नहीं बोधहोता है पीछे परिणाम में दुःख होता है इसी तरह प्रथम विषय व इन्द्रियके संयोग होनेमें अमृतकी तुल्य लगताहै परिणाममें विषरूप दुःखदेता है जब सु- खका नाश होताहै व तृष्णा चित्तसे नहीं जाती तब दुःख होताहै अथवा जिसमें सुख मानकर प्रवृत्तहोताहै उसका फल अंतमें जब दुःख होताहै तब दुःख बोधहोता है व पश्चात्ताप करता है इससे नित्य न होने व परिणाममें दुःखहोनेसे सुख अवस्थामें भी योगीको विषय सुखदुःख हीजान परताहै तापदुःख यहहै कि जब जिन पदार्थों में प्राणियोंको द्वेषहोताहै तब द्वेषसे उत्पन्न कर्माशय होता- है व सुख साधनकी प्रार्थना करता हुआ शरीर वाक् मनसे जिसमें द्वेष व ताप है उसके निवृत्त होनेका यत्न करता है उस यत्न में किसीको अनुग्रह किसीको पीड़ा करके धर्म अधर्म कर्म करताहै उनका फल अंतमें दुःख रूपहै यह लोभ मोहसे होताहै संस्कार दुःख यहहै कि सुखके अनुभवसे सुख संस्कार आशय व दुःखके अनु- भवसे दुःख संस्कार आशय होताहै इसतरह सुखदुःख संस्कार आशयसे सुख दुःखका स्मरण होताहै स्मरण से राग द्वेष होतेहैं राग द्वेषसे कर्म होतेहैं कर्मसेकर्म- विपाक जन्म आयुभोग फल होताहै कर्मविपाक दुःख

रहित नहीं होता जो कुछ सुखभी होताहै वह नाशमान होनेसे व दुःखमिला हुआ होनेसे दुःखहीहै इसतरह अनेक जन्मसे दुःख संस्कार चला आताहै यह दुःख तौ विषयसे होते हैं अब अपनेही चित्तमें गुणवृत्तियों के विरोधसे दुःख होता है यह बिचारना चाहिये अर्थात् सत्व रज तमगुण व इनके अनुसार चित्तकी वृत्तियां भिन्न भिन्नहैं व परस्पर विरुद्धहैं रजोगुण व तमोगुण वृत्तियोंसे अनुचित कर्म अधर्म होताहै जब सत्वगुण वृत्ति विवेक वृत्तिचित्तमें होतीहै तब किये हुये अनुचित कर्म का पश्चात्ताप व दुःख होताहै अथवा जिसमें जिसकी प्रीतिहोतीहै व प्रीतिके कारणसे उसमें सुख मानताहै उसके गुण व चित्तकी वृत्ति जब अपने गुण व चित्तवृत्ति के तुल्य वा अनुकूल नहीं होती तब प्रीति करनेवाले को गुणवृत्तियोंके विरोधसे दुःख होताहै अथवा जिस पदार्थ की इन्द्रियोंको चाह होतीहै उसमें कोई गुण दुःख का कारण जानकर ग्रहण न कर सकनेसे दुःखहोताहै यह गुण वृत्तियोंके विरोधसे दुःख होनाहै इसपरिणाम आदि दुःख से विषय सुख जो हैं वह विवेकी पुरुषोंको दुःखहीहैं परन्तु वह सबको ऐसा दुःख बोध नहीं होता केवल विवेक करनेवाले योगियोंको विषय सुखमें क्लेश व दुःख बोध होताहै कठोर अज्ञान चित्तमें बोध नहीं होता जैसे ऊनतन्तु के स्पर्शका क्लेश केवल नेत्रोंको जानपरताहै और शरीरके अवयव अंगमें स्पर्श से कुछ क्लेश नहीं होता जैसे चिकित्सा शास्त्रमें रोग व रोगका

हेतु आरोग्य व भैषज्य चारव्यूहहोतेहैं इसीतरह योग शास्त्रमें चारव्यूहहैं हेय हेयहेतु हान व हानोपाय जो त्यागकी योग्यहो उसको हेय कहतेहैं व हेयके हेतुको हेयहेतु व नाश होनेको हान व हानके उपायको हानोपाय कहतेहैं कर्म संस्कारसे जो आनेवाला दुःखहै वह हेयहै क्योंकि जो दुःख होगया उसका भोगही होगया उसका त्याग नहीं होसकता जो वर्तमानमें भोग होताहै वह होहीरहाहै उसका त्याग व उसके त्यागका उपाय नहीं होसकता जो नहीं प्राप्तहुआ प्राप्त होनेवाला है वही हेयहै अविद्या हेय हेतु है अविद्याका दूरहोना हानहै विवेकहोना हानोपाय है अशुद्धता मल ज्ञानका आवरणरूप जिसके चित्तका दूरहो जाताहै उस विवेकीकी प्रज्ञा सातप्रकारकी होतीहै प्रथम हेयपदार्थको जानना जैसा कहागयाहै कि सब विषय सुखदुःखरूपहै व दुःखहेय है दूसरे हेयहेतु अविद्याको जानना व उसको अभ्याससे क्षीणकरना जिसके क्षयहोनेसे फिर कुछ क्षय योग्यनहींहै तीसरे निरोध समाधिसे हेय हेतुका नाश होना चौथे हानोपाय जो विवेकहै उसका भावित होना यह चारकार्य विमुक्तिहैं व तीनचित्त विमुक्तिहैं प्रथम बुद्धि कृतभोग भोग अपवर्ग कार्य्य द्वितीय गुणकृत भोग अपवर्गकार्य्यसे रहितहोना तीसरे इनसे रहित होनेमें गुणातीत होने से पुरुषका शुद्ध मुक्तरूप होना अर्थात् जीवन्मुक्त होना इसतरह विवेक सिद्ध होता है परन्तु बिना साधन सिद्ध होना असंभव है तिससे प्रथम योगके

अङ्गोंका साधन करना चाहियेयोगके अङ्गोंके अनुष्ठान से अशुद्धताका क्षयहोताहै अशुद्धिके क्षय होनेमें विवेक से ज्ञान का प्रकाश होताहै अर्थात् जिस जिसतरह चित्त के अविद्या व अशुद्धता रूप मलका क्षय होताजाता है उसी क्रमसे ज्ञानकी दीप्त बढ़ती जाती है इसतरह इस ज्ञान दीप्तिकी वृद्धि पूर्ण विवेक ख्याति प्राप्तिहोनेपर्य्यंत आत्मज्ञान होने पर्य्यंत होती है योगके अंगोंका अनुष्ठान विवेक ख्याति के प्राप्तिका कारण व अशुद्धि के बियोग का कारण होताहै जो यह संशयहो कि योगके अंगोंका अनुष्ठानही प्राप्तिका कारण व वही वियोगका कारण किसतरह होता है तौ यह असंभव नहीं है एक ही भिन्न भिन्न कार्य्यों में अनेक कारण होना संभवहै यह जानना चाहिये कि कारण नवप्रकार के होतेहैं उत्पत्ति कारण स्थिति कारण अभिव्यक्ति कारण अर्थात् प्रकट होने का कारण विकार कारण प्रत्यय कारण प्राप्ति कारण वियोग कारण अन्यत्व कारण धृति कारण उत्पत्ति कारण जैसे सत्वगुण को धारण करके मन ज्ञान के उत्पत्ति का कारण होताहै अथवा जैसे कुम्हार घट आदिके उत्पत्ति का कारणहोताहै इत्यादि स्थितिकारण जैसे पुरुषार्थता मनके स्थितिकाकारण अथवा आहार शरीरके स्थिति का कारण होता है अभिव्यक्ति कारण जैसे प्रकाश रूप के अभिव्यक्ति का कारण होता है विकार कारण जैसे अग्नि तण्डुल आदिके अवयवों के शिथिल करने से विकार का कारण होता है प्रत्यय

कारण अर्थात् ज्ञान कारण जैसे धूम सम्बंध स्मरण द्वारा अग्निके प्रत्यय का कारण होताहै प्राप्ति कारण जैसे योगके अंगोंका अनुष्ठान विवेक के प्राप्तिका कारण होताहै और वही अशुद्धिके वियोग का कारण होताहै अन्यत्व कारण जैसे एकही स्त्री अन्य अन्यकार्य्य का भिन्न भिन्न गुण वृत्तियोंके अनुसार कारण होती है अविद्या से यह कन्या अति मनोहर है ऐसा बोध होने का कारण होती है मोह से मूढ़ को यह बोध होता है कि चैत्रकी पुण्यवती स्त्रीहै वह मेरी भाग्यहीनकी न हुई इसतरह द्वेष व दुःखकी कारण होतीहै भर्त्ताको रागकी कारण होती है विवेकी को यह विचारने से कि मांस मेदा मज्जा अस्थि समूह मल मूत्र परित स्त्री शरीर अशुद्धहै वैराग्य का कारण होतीहै धृति कारण जैसे शरीर इन्द्रियों के धारण का कारण है इत्यादि इसतरह नवप्रकार का कारण होता है इनमें से अशुद्धता अविद्या के बियोग व विवेक के प्राप्ति का दो प्रकारका कारण योगके अंगोंका अनुष्ठान होताहै जिनसे अशुद्धि का क्षय व विवेक की प्राप्ति होती है वह यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधिनामसे योगके आठ अङ्ग हैं अब आठों अङ्ग पृथक् पृथक् वर्णन कियेजाते हैं अहिंसा सत्य अस्त्येय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह यह यम है सब प्राणियों में द्रोह रहित होना व वध न करना अहिंसा है यथार्थ विकार रहित वाक् मनमें जैसा देखा व जैसासुना जैसा अनुमान किया

गया है उसीतरह कहना सत्य है सत्य परके उपकार व हितके अर्थ है पर के घात व हानिके अर्थ सत्य नहीं है तिससे विचारकर सत्पुरुषों के जीवहानि आदिको बचाकर सत्य बोलै नहीं मौन रहै अपनी सामर्थ्य से जहां तक होसकै असत्य ग्रहण न करै सत्यकी बराबर कोई धर्म नहीं है अनुचित पर द्रव्य को प्रकट व गुप्त ग्रहण न करना स्त्येयहै उपस्थ इन्द्रिय का वश करना वीर्य पतित न होनेदेना ब्रह्मचर्य है विषयों को अर्जन रक्षण संग हिंसा दोष जानकर अंगीकार न करना अपरिग्रहहै कोई दशप्रकारके यम वर्णन करतेहैं परंतु मुख्य यह पांचहैं इनहीके अंतर्गत वह भी आजातेहैं इस यम साधनमें जाति देशकाल समय अवच्छिन्न होनेका नियम न होना चाहिये जाति अवच्छिन्न होना यह है कि किसी जाति विशेषमात्र की प्रतिज्ञा करना कि इस का वधन करूंगा अन्यका वध करूंगा जैसे यह प्रतिज्ञा करना किगौ का वध न करूंगा अन्य का करूंगा यह जाति अवच्छिन्न अहिंसा है इसीतरह किसी देशमात्र में वधन करने की प्रतिज्ञा करना देश अवच्छिन्न अहिंसाहै जैसे मैंतीर्थमें बध न करूंगा तथा चतुर्दशी व पुण्य दिनमें वध न करूंगा यह काल अवच्छिन्न है व जाति देश काल तीनों संयुक्त यह प्रतिज्ञा करना कि देवता ब्राह्मण के अर्थ वधकरूंगा अन्यथा न करूंगा यह समय अवच्छिन्न है इसीतरह सत्य में ब्राह्मण से महात्माओं से सत्य कहूंगा असत्य न कहूंगा जाति अव-

च्छिन्न व तीर्थ में असत्य न कहूंगा देश अवच्छिन्नपुण्य व्रत के दिन असत्य न कहूंगा काल अवच्छिन्न सत्य प्रतिज्ञा है इत्यादि इसीतरह अहिंसा आदि में जानना चाहिये जाति देश काल समय अवच्छिन्न अर्थात् नियम परिमाण सहित अहिंसा आदिकी प्रतिज्ञायथार्थ उत्कृष्ट नहींहै जाति देश काल समय अवच्छिन्नता रहित सब जाति सबकाल सबदेश सब समय में अहिंसा सत्य बोलने आदिका यम व्रत करना महाव्रतहै शौच संतोष तपस्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान यह नियमहैं अब इनको पृथक् पृथक् वर्णन करते हैं शौच दो प्रकारका है वाह्य शौच व अन्तर शौच मृतिका व जलसे शरीर व अंगको शुद्ध व स्वच्छ करना वाह्य शौचहै व मद मान ईर्षा असूया यह चित्त के मलहैं इनके दूर करनेसे तथा सत्यभाषण विद्या अभ्यास सत्संग शुभगुणों के आचरण से चित्त शुद्ध होताहै यह अंतर शौचहै प्राण रक्षा-मात्रके अर्थसे अधिक ग्रहण न करने की इच्छा संतोष है द्वन्दसहना शीत उष्ण स्थानमें रहना कृच्छ्र चांद्रायणआदि व्रत करना तपहै मोक्ष विद्या विधायक वेद शास्त्रका पढ़ना व प्रणव के अर्थ विचार सहित प्रणव का जपकरना स्वाध्याय है सबकर्मोंको परमगुरु परमेश्वरमें समर्पण करके ईश्वर ध्यानमें एकाग्रचित्त होना ईश्वरप्रणिधानहै इसतरह पांच यम व पांचनियम योग शास्त्रमें वर्णन कियाहै जब चित्तमें इनके विरुद्ध अधर्म करनेमें वितर्क होवै कि मैं इस अपकारी को वधकरूं

इसके द्रव्यकी चोरी करूं इसकी स्त्री सुन्दर रूपवती है उसके साथ व्यभिचार करूं व इसतरह चित्तमें प्रबल वितर्क ज्वर होनेसे बाधा हो तब प्रतिपक्ष अर्थात् इन वितर्कोंके नाश करनेवाले विपरीत पक्षका भावनाकरै यह भावना करै कि घोर संसारमें पचताहुआ बड़ेभाग्य से गुरुकी शरण में आकर गुरुकी कृपा व सत्संग को प्राप्त होकर सब जीवोंके अभयपद देनेवाले योग धर्म साधनमें प्रवृत्तहुआहूं अब फिर संसारमें पतितहो तुच्छ विषयकी इच्छा करता हूं मैं बड़ा अज्ञान व मंदभाग्य हूं अब वितर्कों को विशेष वर्णन करते हैं कि वितर्क क्याहैं हिंसा आदि लोभ क्रोध मोह पूर्वक मृदु मध्य अधिमात्रा भेद करके कृत अर्थात् किये गये अथवा कारित अर्थात् कराये गये अथवा अनुमोमित अर्थात् अनुमोदन कियेगये वितर्कहैं लोभआदि पूर्वक हिंसाआदि करनेके दृष्टांत यहहै इस हेतुसे हिंसाकरना कि इसका मांस भक्षणके अर्थ व चर्मलाभ होगा लोभ पूर्वक हिंसा है इस पशु वा मृगने हमारा अपकार कियाहै इसहेतुसे बध करना क्रोधपूर्वक हिंसा है इसके मारने से देवता प्रसन्न होगा धर्म होगा इस हेतुसे वधकरना मोहपूर्वक अर्थात् अज्ञान पूर्वक हिंसाहै फिर इनके मृदु मध्य अधिमात्रभेद अर्थात् न्यून मध्यम व अधिक भेदहैं इसतरह प्रथम कृत कारित अनुमोदित यह तीनप्रकारके भेदहैं फिर लोभ क्रोध पूर्वक होना मोह सहित यहतीन व मृदु मध्य अधिमात्रा तीन भेदके एक एकमें एकएकके संयोग

सहित विभाग करने से हिंसाके सत्ताइस भेद हैं फिर मृदु मध्य अधिमात्रा के इसप्रकार से फिर तीनप्रकार के भेद सहित विभाग करनेसे मृदु मृदु मध्य मृदु व तीव्रमृदु तथा मृदु मध्य मध्य मध्य तीव्रमध्य तथा मृदु तीव्रमध्य तीव्र तीव्र तीव्र एकासीभेद हिंसाके होतेहैं इसीतरह अन्य में जानना चाहिये इन वितर्कों में यह विचारना कि इनका अनन्त दुःखअज्ञान फलहै यह प्रतिपक्ष भावना करनाहै हिंसा करनेमें हिंसा करनेवाला प्रथम जिसको वध करता है उसको बलहीन करके गिरा देताहै अथवा आधीन करलेता है फिर हथियार से काटनेमें उसको दुःख देताहै फिर प्राण जीवरहित करताहै बलके हानि करने से हिंसा करनेवाला काल विशेषमें बीर्यहीन होताहै दुःख देनेसे तिर्य्यक् योनि अथवा प्रेतयोनि आदिमें प्राप्तहो क्लेश भोग करता है प्राण हानि करनेसे अतिक्लेशमें प्राप्तहो आपही इच्छा करताहै कि मैं मरजाऊं तौ अच्छाहो जो कदाचित् कोई अच्छे कर्म करनेसे अच्छा जन्म पाकर सुखको प्राप्त होताहै तौ अल्प आयु होताहै जल्दीही मरजाताहै इसी तरह यहीप्रकारके भेद व दोषअसत्यकथन आदिसबमें जितने अधर्म हैं योजित करना चाहिये वितर्कोंका फल नरक व दुःख प्राप्त होना है इससे वितर्कोंके प्रतिपक्ष भावना करके चित्तमें वितर्कोंको न धारण करै वितर्कके अंकुर होतेही प्रतिपक्ष भावना करके उखाड़ डालै तब योगीको सिद्धि प्राप्ति हो सकतीहै अब अहिंसा आदिके

फल पृथक् पृथक् वर्णन कियेजातेहैं अहिंसाके प्रतिष्ठा में उसके समीप सब जीवोंके बैरका त्याग होजाता है अश्व महिष सर्प नकुल एक जगह रहते हैं अहिंसक कोकोई जीवसे दुःख नहींहोता परन्तु दृढ़ता से अहिंसा धर्म निश्चय करके प्रवृत्तहो सर्बदा प्राणियों में करुणा राखै सत्यके प्रतिष्ठामें साधन करनेवाला स्वर्गको प्राप्त होताहै व जो काम करता है वह सफल होताहै व जो बातनिश्चयमनोरथकरके जिसकोकहताहै वह होजाताहै अस्त्येय में अर्थात् मनसे चोरी त्याग कर देनेकी प्रतिज्ञामें सर्वत्र सब दिशा उसको रत्न उपस्थान होते हैं अर्थात् उत्तम उत्तम पदार्थ उसको प्राप्त होने लगतेहैं ब्रह्मचर्य सेवन में सामर्थ्य लाभ होता है अणिमादिक सिद्धियों को प्राप्तिहोती है अपरिग्रह से दृढ़ स्थिर होने तृष्णा रहित होनेसे जन्मान्तरका ज्ञान होताहै कि मैं को था कैसाथा अब कैसाहुआ फिर कोहूंगा और मुझे क्या करना चाहिये शौच साधनसे अपने शरीर को मलआदि संयुक्त निन्दित अशुद्ध जानकर मृत्तिका जल आदिसे धोता व शुद्ध करताहै व परके शरीर से मेल व संसर्ग नहीं करता इसतरह वाहरकी शुद्धता होतीहै मान मद अधर्मकी इच्छात्यागकरनेसे सत्व गुण शुद्ध रजतम गुण मल रहित प्राप्त होता है चित्त विमल होनेसे स्वच्छ व एकाग्र होताहै तब आत्मज्ञान के योग्य होताहै संतोष साधनसे अत्यंत सुखकोलाभ करताहै जो सुख संसारमें और किसी पदार्थ से नहीं प्राप्त होसकता क्योंकि जब

तकतृष्णाहै तबतक जीवको एक न एक दुःख बनारहता है जब वैराग्य से तृष्णा रहित संतोष को प्राप्त होताहै तब यथार्थ सुखहोताहै व चित्त शांत होताहै तपसे अशुद्धता व पापका क्षय होताहै अशुद्धि व पापक्षय होनेसे शरीर व इन्द्रियोंकी सिद्धि प्राप्तिहोतीहै अर्थात् अणिमा महिमा गरिमा लघिमा सिद्धियों का प्राप्तहोना शरीर सिद्धिहै व दूर देशका देखना सुनना आदि इन्द्रियोंकी सिद्धिहैयह सिद्धियांप्राप्तहोतीहैं स्वाध्यायसे देवता ऋषि सिद्धोंकादर्शनहोताहै व स्वाध्याय साधनमेंजोप्रवृत्त होताहै उसपर देवताआदि प्रसन्नहो सहायकहोते हैं ईश्वर प्रणिधानसे समाधि सुगमतासे सिद्धहोती है यमनियम साधन करते हुये आसनमें बैठकर ध्यानकरै स्थिरयथा सुख अर्थात् जिसमें सुख पूर्वक शरीर व आत्मा स्थिर हो वह आसनहै अन्य आसन पद्म आसन वीर आसन स्वस्तिक दण्डासन हस्तिनिषन्दन उष्ट्र निषन्दन सम संस्थान आदि बहुत हैं परन्तु बहुत आसनोंसे विशेष फल नहींहै मुख्यता चित्तके एकाग्रताकीहै इसीसेयोग दर्शनमें पतंजलिमुनि बहुत आसनोंका वर्णन नहीं किया स्थिर हो यथा सुख बैठना यही आसनसे प्रयोजन है आलस्य न होनेके अभिप्रायसे अन्य बहुत आसन अंग क्लेश संयुक्त कहाहै साधारण चित्तमें दृढ़ता नहीं होती न चंचलताकी निवृत्ति होतीहै शीत उष्णमें चित्त एकाग्र नहीं रहता इससे एक आसनमें दृढ़ता करनेसे ।स सिद्धहोता है आसनजित होनेसे शीत उष्ण आदिके

से चित्त को बाधा नहीं होती यह आसन सिद्धहोने का फलहै इससे आसन सिद्धकरना उचित है आसन में आसीन होकर श्वास व प्रश्वास व दोनों की गतिको रोंककर प्राणायाम करै अर्थात् बाहरकी श्वास भीतर भरना व भीतरकी श्वास को बाहर निकालना व इन दोनोंकीगतिका रोकना प्राणायामहै श्वास जो बाहरकी बायुकोभीतरभरनाहै उसको पूरक व प्रश्वास जोभीतर की बायुको बाहर निकालना है उसको रेचक व दोनों कीगतिके रोंकने को अर्थात् स्तंभन करने को कुंभक कहते हैं प्रथम साधन करने में साधन करने वाला विना देशकाल संख्या एकही बार रेचक करके बाहर श्वासको स्तंभन करै व चित्तमें प्रणव का स्मरण करै जबतक रोंकसकै तबतक रोंकेरहै फिर भीतरको श्वास लेइ व भीतर श्वासभरिकै फिर स्तंभनकरै कहीं प्राणा याम विधिमें प्रथम पूरक करके कुंभक करना फिर रेचक करना कहाहै यहभीकरना ठीक है परन्तु प्रथम रेचक करने में मल मूत्र के दुर्गंध सहित जोउदर का वायुहै सो बाहर निकल जाता है व पीछे पूरक करनेमें बाहर का शुद्धवायु उदरमें आताहै शुद्धवायु आरोग्यता व चित्तकी प्रसन्नता करने वाला है यद्यपि पीछे रेचक करनेमें भी भीतरका वायु बाहर निकलता है तथापि पहिले अशुद्धवायुका निकलजाना अच्छाहै प्रथम विना काल संख्या नियम कुछकाल रेचक पूरक पूर्वक स्तंभन करै इनतीनों के इसतरह साधन करनेके पश्चात् देश-

कालसंख्या करके परिदृष्ट श्वास प्रश्वास व स्तंभन करै बाहरवीताभर व हाथभरपरिमाणका निर्वात देशमेंईषी-कातूल क्रिया से बायुका जाना अनुमान कियागया प्र-श्वास का बाह्य देश है व पदोंसे मस्तक पर्य्यंत भीतर श्वास बायुका देश है बाहर व भीतर देशमें बायुका रोंकना देश परिदृष्ट है कुछकाल नियम करके कि इत-ने देरतक स्तंभन करूंगा स्तंभन करना काल परिदृष्ट है प्रणव के उच्चारण संख्या करके रेचक पूरक कुंभक करना संख्या परिदृष्ट है संख्यामें आचार्य्योंने भिन्नभिन्न विधि कहाहै कहीं प्रमथछत्तीस मात्राको संख्या करके रेचक व पूरक पूर्वक कुंभक जितने कालतक थंभसकै करनेको कहाहै कहीं सोलह मात्रा तक प्रथम पूरक करना चौंसठ मात्रा कुंभक करना व बत्तीस मात्रासे रेचक करना कहाहै इस संख्या में भी फिर मन्द मध्य तीव्र भेद से क्रिया बिधान कियाहै प्रथम छत्तीस मात्रा करके परिमित मन्द है उससे द्विगुणी मात्रा मध्य है उससे तिगुणी तीव्रहै मात्रोंका अन्य परिमाण भी कहा है परन्तु उससे प्रणव के उच्चार का मात्रा परिमाण उत्तम है इसमें उत्तम परमेश्वर के नामका जपस्मरण व संख्या परिमाण लाभदोनों सिद्धहोतेहैं इससे अन्य परिमाण नहीं कहागया प्रथम देशकाल संख्या रहित रेचक व पूरक पूर्वक जो तीसरी स्तंभन करने की वृत्ति है उस से देशकाल संख्या सहित रेचक पूरक पर्वक स्तंभन करना दूसरे प्रकार का कुंभक संख्या में चौथा

कहाजाता है केवल श्वास प्रश्वास में संख्या भेद होनेसे उसमें भेद मानना है स्तंभन वृत्ति में भेद नहींहैं इससे कहीं भेद कहा है कहीं नहीं कहा इसतरह अभ्यास करते दिन पक्ष महीना आदि पर्य्यंत क्रमकरके वायु स्तंभन करनेसे शरीर देशमें बहुत पक्ष मासपर्य्यंत होनेसे संख्या व कालकी अधिकता से प्राणायाम दीर्घ होताहै व वायु शरीर देश मात्र में सूक्ष्म होकर रहजाताहै जैसे तपेहुये पत्थरमें जल छोंडनेसें संकोचित हो सूख जाताहै पत्थरही में कुछ सूक्ष्म लेश मात्र रहजाता है प्राणायाम के अभ्यास से महामोह मय जाल जो ज्ञान के प्रकाश का आवरणहै व संसार वंधन का कारण है क्षीण होताहै प्राणायाम से अधिक तप नहीं है पाप मलका दूरकरने वाला व ज्ञानदीप्ति रूपहै प्राणायामहीके अभ्याससे मन धारणा व ध्यान के योग्य होता है अब प्रत्याहार को वर्णन करते हैं इन्द्रियों के अपने अपने विषय में अति लोलुप होनेसे इन्द्रियों के वश अनेक विषय की अभिलाषा होतीहै व चित्तस्थिर नहीं होता व चंचल होनेसे योग अभ्यास के योग्य नहीं होता इससे इन्द्रियों को साधन विशेष से इसतरह वश करना कि इन्द्रियों के अनुसार चित्त की वृत्ति न हो किन्तु चित्त स्वरूप के अनुकार इन्द्रिय होजावें चित्तके निरोध होनेमें चित्तहीके सदृश इन्द्रियों कानिरोध हो इसतरह चित्तके आधीन इन्द्रियोंकाहोना प्रत्याहार है प्रत्याहार से इन्द्रियों की परम वश्यता

होजातीहै जिससे कि फिर इन्द्रियों के वश करने के अर्थ अन्य उपाय करनेकी अपेक्षा नहीं रहती किसी देश में चित्तको वृत्तिमात्र से बांधना धारणा है यथा नाभि चक्र देशमें हृदय पुण्डरीकमें मूर्ध्नि ज्योतिमें नासिकाके अग्रमें इत्यादिमें चित्तको लगाना व धारण करना धारणाहै जिस देशमें धारणासे ध्येयका आलंबनकरै उस ध्येयके आलंबनके प्रत्ययका ऐकाग्र होना व अन्य प्रत्ययसे रहित होना ध्यानहै ध्यानही जब ध्येयके आकार भासित होताहै अर्थात् जब ध्यान ध्येय आकार ध्यान स्वरूप रहित की तुल्य भासित होताहै उसको समाधि कहतेहैं धारणा ध्यान समाधि तीनके एकत्रहोनेकी संयम संज्ञाहै संयमके जीतने से समाधि प्रज्ञाका प्रकाशहोताहै जिस जिसतरह संयम स्थितिपदको प्राप्तहोताहै उसीतरह समाधि प्रज्ञाका प्रकाश अधिक अधिक प्रकाशित होताहै संयमका सवितर्क निर्वितर्क सविचार निर्विचार भूमियोंमें क्रमसे विनियोगहै अर्थात् जब एक भूमिको संयम से जीतले तब उससे भिन्न अन्य भूमिमें संयम करै यथा प्रथम स्थूल विषयके ध्यानमें वितर्क को वश करके निर्वितर्क जोवश नहींहै अर्थात् जो जीती भूमि नहीं है उसमें संयम करै इसकोभी वश करके उससे अधिक जो संयमकी अविजित भूमि सविचार हैं उसमें संयमका विनियोगहै सविचारके पश्चात् फिर निर्विचार में विनियोग है इसतरह क्रमसे संयमका विनियोग है प्रथम चित्तस्थिर होनेके साधनमें स्थूलके ध्यानमें प्रवृत्त

होकर क्रमसे सूक्ष्म ध्यानको प्राप्तहो जैसा पुराणमेंभी कहाहै कि शंख चक्र किरीट आदि सहित बिष्णुका ध्यान स्थूल रूपका करै उसको प्रत्यक्ष करके शंख आदि रहितध्यानकरै फिर क्रमसे भूषणरहित फिर केवल एक अंगमें इसतरह सूक्ष्ममें चित्तलगावै यह जो तीन धारणा ध्यान समाधिहैं पूर्वोक्त यम नियम आसन की अपेक्षा अंतरङ्गहैं व यम आदि पांचबहिरङ्गहैं तीनकेअंतरङ्ग होनेकाहेतु यहहै कि यहतीन साध्यके समान विषयहैं यम आदि पांच साधन साध्यके समान बिषय नहींहैं चित्त शुद्धताके उपयोगी हैं यहभी तीन निर्बीज योग अर्थात् असम्प्रज्ञात योगके बहिरङ्गहैं क्योंकि सबवृत्तियोंकेनिरोध वध्येयमें चित्तएकाग्र होनेमें यह तीनसमान बिषय हैं निर्बीज समाधि सब वृत्तियोंके निरोधज्ञान प्रसाद रूपपर वैराग्यके अनन्तर उत्पन्नहोने से इनके साधन की अवश्यकता नहीं रखती बिना इनके साधनके समाधि सिद्ध रहतीहै इससे बहिरंग हैं चित्तकी वृत्तियोंके प्रवर्त होनेकी अवस्थाकी व्युत्थान संज्ञा है व जब सब वृत्तियों की निवृत्ति होतीहै उसको निरोध संज्ञा है जब व्युत्थान संस्कार का क्षय व निरोध संस्कार का उदयहोताहै उस निरोधक्षणमें जो चित्तके सब वृत्तियोंका निरोध रूप है वह निरोध परिणाम है जो यह संशय हो कि व्युत्थान संस्कारके क्षयहोने से निरोध संस्कार का उदय होजायगा निरोध संस्कारके पृथक् कहने का क्या प्रयोजनहै तौ यह संशय भ्रम रूपहै व्युत्थान व

निरोध दो पृथक्पदार्थहैं क्योंकि विषय व उसके भोगकी वृत्ति बहुत कालमें निवृत्ति होजानेपर भी स्मरण से उदय व विषय वासना होतीहै इससे निरोध संस्कार का उदयरहना जिससे व्युत्थान प्रवृत्तिकारोक बनारहै आवश्यक व पृथक् पदार्थहै व उपासनाके योग्यहै निरोध संस्कारके दृढ़ होनेसे व व्युत्थान संस्कार के सर्वथा क्षयहोने से निरोध संस्कारमात्र परम्परा रहने की अवस्था होतीहै व निरोध संस्कार से चित्त शांत बना रहताहै चित्तका जो नाना अर्थ में गमनहै उसका क्षय होना व ध्येय पदार्थ मात्रमें एकाग्रस्थिरहोना यह चित्त का समाधि परिणामहै समाधिसे भूत वर्तमानवृद्धि की वृत्तियां एकाग्रचित्तमें तुल्य होजाती हैं इनदोनोंका तुल्य होना एकाग्रता परिणामहै अर्थात् एकाग्रता में जिस तरह भूत वृत्तियां शांतहोतीहैं इसीतरह वर्तमान शांत होतीहैं वृत्ति मात्रका निरोध होताहै चित्त परिणामकी तुल्य पृथिवी जल तेज वायु आकाश व इन्द्रियोंमें धर्म लक्षण अवस्था परिणाम होतेहैं जैसे पृथिवी पिंड रूप धर्मनाश होनेपर घटरूप धर्मउत्पन्न होताहै इसी तरह चित्तके व्युत्थान धर्मक्षय होनेपर निरोधधर्म प्रकटहोता है यहधर्म परिणामहै व कार्य रूपहै लक्षण परिणाम में त्रिकाल सम्बन्ध होताहै अनागतअध्वा वर्तमानअध्वा अतीत अध्वा यहतीन अध्वा तीनकालके नामहैं अनागत अध्वासे भविष्यत् काल व वर्तमान से वर्तमान व अतीतसे भूतकाल जानना चाहिये मृत्तिका के पिंड में

जब घटाकार धर्मनहीं प्राप्तहै व उसका घटवननाहै तब घट आकार अनागत अध्वाहै व पिंडरूप वर्तमान अध्वाहै व घट बनजानेके पश्चात् पिंडरूप अतीत अध्वा है यहलक्षण परिणाम है अनागत लक्षण वर्तमान व अतीतसे भिन्न जानाजाताहै व वर्तमान अनागतअतीत से व अतीत वर्तमान अनागत से इसीतरह व्युत्थानमें निरोधका अनागतअध्वा व निरोधके वर्तमानमें व्युत्थान का अतीत अध्वा व व्युत्थान तथा निरोधके वर्तमान में वर्तमान अध्वा लक्षण परिणामहै वर्तमान व अतीत कालके सम्वन्धसे घटमें नयापुराना ज्ञानहोना यह अवस्था परिणामहै व निरोध दशा में निरोध संस्कार वलवान् व व्युत्थान संस्कार दुर्बल होतेहैं यह वलवान् व निर्वलहोना अवस्था परिणाम है धर्मी का धर्मोंके साथ धर्मोंका लक्षणके साथ लक्षणका अवस्था के साथ परिणाम होताहै इसतरह धर्मधर्मी भेदसे धर्म लक्षण अवस्था तीन तरहका परिणाम होताहै द्रव्य के पूर्व धर्मकेनिवृत्त व अन्यधर्मके उत्पन्नहोनेको परिणाम कहतेहैं यथार्थमें धर्मी स्वरूपमात्र एकहीरहताहै धर्मी में जो वर्तमान धर्महै उसीका अतीत अनागत अध्वामें अन्य भाव होताहै धर्मीजो द्रव्य है उसका अन्य भाव नहींहोता यथा सुवर्णका घट वा अन्य आभूषण बनाने से धर्मकाअन्यभाव व नाम होताहै सुवर्णद्रव्यका अन्य भाव नहींहोता जो यहशंकाहो कि धर्मों से भिन्न धर्मी कोईपदार्थ प्रत्यक्षबोध नहींहोतातो इसका उत्तर यहहै कि

भूत भविष्यत् व वर्तमान धर्ममें जिसकासम्बन्ध रहताहै
व धर्म अन्य अन्य होजातेहैं वह तीनोंकाल में सम्बन्ध
धर्मोंमें एकही रहताहै धर्मीहै जो धर्महीमात्र मानेजावें
धर्मी न मानाजावै तो भोगकाअभाव होनाचाहिये क्यों-
कि परिणाम भेदहोनेपर अन्यकेज्ञानसे कियेहुये कर्मों
को अन्यकिसतरह अधिकारी होसक्ताहै जे धर्मअतीत
होगये उनके कालमें जो जानागया उसका ज्ञान अब
वर्तमान धर्मोंमें न होना चाहिये इसहेतु से कि अन्य
के देखे व जानेहुये का स्मरण अन्य को नहीं होता
भूतपदार्थके स्मरण से यह जाना जाता है कि धर्मों
के अन्यथा होजानेपर भी स्मरणकर्ता स्मरणहेतु एक-
ही बनारहताहै वहीधर्मीहै इससे धर्ममात्रही धर्मीनहीं
है जो यह कहाजावै कि एक धर्मीमें एकही परिणाम
होना चाहिये तो यह नियम नहींहै एकही धर्मीमें अन्य
अन्य कर्महोना अन्यअन्य परिणाम होनेका हेतुहोताहै
जैसे एकही पदार्थ मृत्तिका के घट सराव अर्थात् दिया
पिंडभिन्न क्रमहोनेसे अनेकपरिणामहोतेहैं पूर्वसे अपर
अवस्थामें होनेको समानन्तरहोना कहतेहैं जो जिसके
धर्मका समानन्तर धर्महै वह उसका क्रमहै पिंडसे घटका
होनाधर्मपरिणामहै वघटके अनागतभावसेवर्तमानभाव
क्रमहै अतीतका क्रम नहींहोता क्योंकि पूर्वही अतीतहै
उसमेंपूर्व भावनहींहै घटका नयेसे पुरानाहोना अवस्था
परिणाम क्रमहै चित्तके परिदृष्ट अपरिदृष्ट दो तरह के
धर्महैं जो बोधात्मकहै जैसे प्रणव आदि यह परिदृष्टहै

व जो वस्तु मात्रात्मकहै जैसे रागआदि यह अपरिदृष्टहैं यह सात तरहके होतेहैं प्रथम निरोध धर्म जैसे असंप्रज्ञात समाधि में सब वृत्तियों का निरोध होजाता है दूसरे संस्कार जैसे संप्रज्ञात समाधि में कर्म संस्कार शेषरहतेहैं दुःखसुख भोगसे संस्कारका अनुमानहोताहै व स्मृतिसे भी संस्कारका अनुमान होताहै तीसरे चित्त के त्रिगुण संयुक्त होने व चंचल होनेसे प्रतिक्षण परिणाम धर्महै चौथे जीवन प्राण धारण धर्महै पांचवें चेष्टा छठवें शक्ति सातवें धर्म दर्शन वर्जिता वह है कि कार्यों की सूक्ष्म अवस्था चित्तका जो धर्महै वह स्थूल कार्यों के अनुभवसे अनुमान होताहै दर्शनसे ज्ञान नहीं होता दर्शनज्ञान न होनेसे धर्म दर्शन वर्जितासंज्ञाहै इन व्युत्थान व निरोधअवस्थाकी वृत्तियोंके धर्मलक्षण अवस्था परिणामको संयम करके साक्षात् करने से रजोगुण व तमोगुण दूर होने से व सत्वगुण प्रकाश उदयहोने से भूत भविष्यत् कालका ज्ञान होताहै संयम से संस्कार साक्षात् करने से पूर्वजन्म का ज्ञान होता है अर्थात् संस्कार जो दो प्रकारके एक स्मृतिरूप क्लेश हेतु व दूसरे वासनारूप जन्म आयु दुःखसुख भोगके हेतुधर्म अधर्मरूप अनेक जन्मसे संचितहैं संयम से उनके साक्षात् करनेसे अपने व परके पूर्वजन्म का ज्ञान होता है इसमें जैगीषव्य योगीका आख्यानहै कि महात्मा जैगीषव्य ऋषिको संस्कार साक्षात् करनेसे दशकल्प में जो देवता मनुष्य तिर्यक्योनिमें जन्महुयेथे उनसबका

ज्ञान दिव्य विवेकज ज्ञानसे उत्पन्न हुआ उनसे अवट्य ऋषिने पूंछा कि हे भगवन् नानाप्रकार के देव मनुष्य तिर्यक्योनि जो दशकल्प में आप धारण किया इन में सुख वा दुःख क्या अधिक प्राप्तहुआ जैगीषव्यने कहा कि जितनी योनियोंमें मैं उत्पन्न हुआ सबमें दुःख है अवट्यनेकहा कि प्रकृति बश करनेसे जो सिद्धियां प्राप्त होती हैं कि संकल्पमात्रसे दिव्यभोग प्राप्त होतेहैं उनमें भी दुःखहै जैगीषव्यने कहा कि लौकिक सुखकी अपेक्षा प्रकृति बशकरना सिद्धिआदि अतिउत्तम सुख है परन्तु मोक्षकीअपेक्षा दुःखहै क्योंकि दुःख स्वरूप जो तृष्णा तंतुहै वहनहींटूटता मोक्षमें उसके टूटनेसे तृष्णारहितप्रसन्नताकाहेतु अतिउत्तम सुख प्राप्तहोताहै अर्थात् मोक्ष हीकेवल यथार्थ सुखरूपहै चित्तकी वृत्तिके संयमसे परचित्तका ज्ञानहोताहै परन्तु चित्तकी वृत्तिमात्र के जानने का ज्ञान होताहै चित्तके अलंबनका ज्ञान वृत्तिमात्र के संयमसे नहींहोता क्योंकि वह संयमके विषयसे भिन्न है शरीरके रूपमें संयमसे उसकी ग्राह्यशक्ति जो अन्य के नेत्रों से देखाजानाहै उसके रोकने व परके नेत्रके प्रकाश के विषय न होनेसे योगी अन्तर्द्धानको प्राप्तहोताहै सोपक्रम व निरुपक्रम कर्मके संयम से मरनेका ज्ञान होताहै अथवा अरिष्टों से मरने का ज्ञान होता है पूर्वजन्म व इस जन्मके किये हुये कर्म सोप क्रम व निरुपक्रम भेदसे दो प्रकारके होते हैं एक वह कर्म जिनका फल जल्द होताहै जैसा ओदा कपड़ा घाममें फैलाने से जल्द

सूखताहै उसको सोपक्रम कहतेहैं दूसरे जिनका फल देरकोहोता है जैसा ओदा कपड़ा लपेटाहुआ छाया में देरको सूखता है उनको निरुपक्रम कहते हैं इन दोनों प्रकार के संयमसे मरनेका ज्ञान होताहै और अरिष्टों से भी मरनेका ज्ञान होता है यह ज्ञान अयोगियों को भी होता है अरिष्ट तीनतरह का होता है आध्यात्मिक जैसे कानों के छिद्र बंदकरने से जो प्राण वायु का शब्द सुनपरता है वह न सुनपरना दूसरा आधिभौतिक यमदूतों का देखपरना व मरेहुये पितरों का आकस्मात् देखना तीसरा आधिदैविक आकस्मात्स्वर्गको व सिद्धोंको देखना इत्यादि मैत्री करुणा मुदिताके संयम से मैत्री आदि बल की प्राप्ति होती है प्राणियों में सुहृद भावना करने से मित्रता बल व दुःखित प्राणियोंमें करुणा भावकरने से करुणा बल व धर्मवान् पुरुषों में आनन्द भावना करनेसे मुदिता बल योगियों को होताहै इन उत्तम वृत्तियोंसे चित्तकी शुद्धता होतीहै व चित्त समाधि के योग्य होता है अधर्मी पापियों में योगीकी उदासीनता होती है इससे इसमें संयम के अभाव से बल नहींहोता बलोंमें संयम करने से हाथी आदिकों का बल प्राप्त होताहै ज्योतिमें संयम करके उस प्रकाश को सूक्ष्ममें वा व्यवहितमें वा दूरमें प्रेरणा करने से योगी को सूक्ष्म व्यवहित दूरका ज्ञान होताहै सूर्य में संयम करने से सम्पूर्ण भुवन का ज्ञान होताहै चंद्रमा के संयम से साक्षात् करने से तारामण्डल का

ज्ञान होता है जो यह संशय होवै कि जब सूर्य्य के संयम से चौदह भुवन का ज्ञान होगा तौ तारामण्डल का भी होजायगा चंद्रमाके संयम से क्या प्रयोजन है तो उत्तर यह कि सूर्य्य से तारागणों के प्रकाश का अभाव होताहै इससे चंद्रमाके संयमसे तारा मंडलका ज्ञान होताहै नाभिचक्रमें संयम करनेसे सम्पूर्ण काय-व्यूहका ज्ञान होताहै अर्थात् शरीर की रचना जो त्वच रुधिरमांस अस्थि मज्जावीर्य बात पित्त श्लेष्मा रचित है उसका ज्ञान होताहै कंठकूप में संयम करनेसे क्षुधा पिपासा की निवृत्ति होतीहै अर्थात् जिह्वाके नीचे तंतु तंतुके नीचे कंठ कंठकेनीचेकूपहै उसमेंसंयमकरनेसेभूंख पिपासकी निवृत्ति होतीहै कूपसे नीचे हृदय में कछुहा की आकार कूर्म नाड़ीहै उसमें संयम साधनसे स्थिर-ता लाभ होतीहै शिरके कपालमें छिद्रहै वहां प्रकाश-मान ज्योतिहै उसमें संयम साधनसे पृथिवी आकाश में जो अदेख सिद्ध विचरतेहैं उनकादर्शन होताहै विवे-कज ज्ञान संसारसे तारनेवालाहै इससे उसकी तारक संज्ञाहै उसीको प्रातिभ भी कहतेहैं उस प्रातिभ तारक में संयम साधनसे विवेक से उत्पन्न ज्ञानके पूर्वमें इस तरह प्रकाश होताहै जैसे सूर्यके उदयमें प्रथम प्रकाश होताहै ऐसे प्रातिभ ज्ञानके उत्पन्न होनेमें संयमी को सम्पूर्ण पदार्थोंका ज्ञान होताहै हृदय कमल जो अधो-मुखहै सीधाकरके उसमें संयम साधनकरने से चित्तका ज्ञान होताहै आत्मा नित्य शुद्ध चेतन रूपके संयम से

प्रातिभ ज्ञान जो पूर्वही कहाहै उदय होताहै उससे सूक्ष्म व व्यवहित अर्थात् जो किसीके अंतरमें है व दूर व अतीत अनागतकाज्ञान होताहै परोक्षदूर सूक्ष्मशब्द स्पर्श रूपरस गंधका जो ज्ञान होता है उसीको दिव्य श्रवण आदि कहतेहैं प्रातिभ श्रवण स्पर्श रूप रस गंध ज्ञान उदय होनेसे दिव्य श्रवणस्पर्श रूपरस गंधज्ञान होताहै इनदिव्य श्रवण आदिसे जो यह समझा जावै कि योगी कृतार्थ होताहै तौ कृतार्थ नहीं होता क्योंकि समाधि अवस्थामें जो मोक्ष फलरूपहै उसमें यह सब विघ्नहैं परन्तु व्युत्थान अवस्था में यह सिद्धियां कही जातीहैं अपने शरीरमात्र में व्यापक आत्माका धर्म अधर्म अनुसार चित्त द्वारा दुःख सुख भोग करना बंधहै समाधिसे यह बंध शिथिल होताहै व प्रचर जो चित्त के गमन आगमनकी नाड़ीहै उसका ज्ञानहोना प्रचर संवेदनहै समाधिसे बंध कारण शिथिल होने व प्रचर के ज्ञान होनेसे योगी अपनेचित्तको परके शरीरमें प्रविष्ट करदेताहै व चित्तहीके साथ सब इन्द्रियां प्रवेश करतीहैं प्राण, अपान, समान,उदान,व्यान, यह पांच वायु शरीर में रहतेहैं हृदयमें प्राण गुदामें अपान नाभिमें समान कंठमें उदान व सब शरीरमें व्यानका वासहै इनमेंसे संयमकरके उदानके जीतनेसे जलकीच कांटा आदिमें ऊपर चलाजाता है जलआदि धूनहो जाते समान वायुके जीतनेसे अग्निकी तुल्य ज्वलनतेज होताहै कान व आकाश दोनोंके सम्बन्ध के संयम से

दिव्य श्रोत्र होताहै अर्थात् दूरदेशके शब्दको सुनताहै शरीर व आकाश दोनोंके सम्बन्ध के संयम साधने से सूक्ष्मव हलका होकर प्रथम जलके ऊपर विहारकरता-है फिर सूर्यकी किरणोंमें विहार करताहै पीछे इच्छा-पूर्वक आकाशमें उड़ताहै मेरा मन शरीरसे बाहर है इस कल्पनासे देहसे बाहर मनकी वृत्तिलाभ होतीहै इसका कल्पिता विदेह धारणा कहतेहैं इस धारणासे शरीरमें अहंभाव त्याग होनेपर वे कल्पना अपनेहीसे बाहरकी वृत्तिलाभ होतीहै इसको बहिरकल्पिता महा विदेह संज्ञा धारणा कहतेहैं इससे जो स्वभावचित्तका है उसके आवरण जो क्लेश कर्म हैं उनकाक्षय होताहै अविद्या आदिक्षय होनेसे ज्ञान प्रकाश लाभहोता है स्थूल स्वरूप सूक्ष्म अन्वय अर्थ वत्व इन पांच रूप भेदसे पृथिवी आदि भूतोंके संयम करनेसे भूतोंकोवश करताहै इसका विशेष व्याख्यान यहहै कि पृथिवीजल तेज वायु आकाश इनपांचकी भूतसंज्ञाहै व पांच ज्ञान इन्द्रिय नासिका रसना नेत्र त्वक् कर्ण व पांच कर्म इन्द्रिय वाक् हस्त पाद पायु उपस्थ व मन यह स्थूल कहेजातेहैं यह भूतोंका प्रथम रूपहै पृथिवी को मूर्ति जलका स्नेह अग्निकी उष्णता अर्थात् गरमी वायुका प्रेरण क्योंकि वायु तृण आदिको प्रेरणाकरके उड़ाताहै आकाशका सर्वगत होना यह पृथिवी आदिभूतों का स्वरूप दूसरा रूपहै यह दोभेदसे होताहै एक युत सिद्धावयव जैसेअनेक वृक्षोंसे युतसमूह एक वन नामसे

कहाजाता है व दूसरे अयुत सिद्धावयव जैसे शरीरवृक्ष
भिन्न अवयवोंसे भिन्न रूपहैं सूक्ष्म कारणरूप परमाणु
व उनकेमात्रा गंध रस रूप स्पर्श शब्द यह तीसरारूप
भेदहै सत्त्व रज तम तीनगुणोंका संसारके कारणहोनेमें
जो संयोगहै वह अन्वय चौथारूपहै इनका भोग अप-
वर्गके अर्थ होना यह अर्थवत्व पांचवांरूपहै भूतोंकेइन
पांचकार्य स्वरूप स्थूलआदिकोंके क्रमसे संयम करनेसे
भूतोंके जीतनेकी सिद्धि होतीहै अर्थात् पृथिवी आदिपांच
भूतकेकार्य योगीके संकल्पके अनुसार होतेहैं भूतों के
जीतनेसे अणिमाआदि सिद्धियोंकोप्राप्तिहोतीहै परमाणु
तुल्य सूक्ष्म होजाना अणिमा दीर्घहोना महिमा पर्वतकी
तुल्य गरूहोजाना गरिमाहै रुईकीतुल्य हलकाहोजाना
लघिमाहै अंगुलीसे चन्द्रमाआदिकाछूनाप्राप्तिहैजोइच्छा
करै वही प्राप्तहोजाना प्राकाम्यहै भूतोंसेभौतिकोंका उ-
त्पन्न करना व नाशकरना ईशित्वहै व भूत भौतिक का
वश करना वशित्वहै यह अणिमाआदिआठसिद्धी प्राप्त
होती हैं व इनभूतोंके कार्यमें योगीकोरोंक व बाधा नहीं
होती योगीशिलाके भीतर प्रवेश करताहै जलमें नहीं
भीगता वायुमें नहीं उड़ता अग्निमें नहीं जलताइत्यादि
अब शब्दस्पर्शरूप रसगंधजो ग्राह्यहैं उनमें श्रवणआदि
इन्द्रियोंको जो वृत्तिहै यह ग्रहणहै और उनका नियत
सामान्यविशेषरूप प्रकाशितहोना स्वरूप द्वितीयभेदहै
तृतीयअहंकार इन्द्रियोंका कारणहै और यह अहंकार
लक्षणजिससे अहंभाव होताहैअस्मिताहै अन्वयव अर्थ-

वत्वयहदोनों पूर्वही वर्णनकियेगयेहैं इनपांचोंके इन्द्रिय रूपमें संयम करनेसे योगी इन्द्रियजित् होताहै इन्द्रियों के जीतनेसेमनोजवित्व अर्थात शरीरकी अतिउत्तमगति व दूसरा विकरण भाव विदेह योगियोंका विनाइन्द्रियों को अपेक्षा दूरपरोक्षका ज्ञानहोना व तीसरा प्रधानजय अर्थात् अन्वय रूप जो त्रिगुणात्मक प्रकृतिहै उसका जीतना अर्थात् सबजगत्का बशकरना यहतीन सिद्धियां प्राप्तहोतीहैं यहजोतीन सिद्धियां वर्णन कीगईहैं इनको मधुप्रतीक कहते हैं रजोगुण तमोगुण मल जिसके दूर होगये हैं विवेक से उत्पन्न ज्ञान बुद्धिसत्त्व व आत्माके ज्ञानको प्राप्त वैराग्यमें वर्तमान योगी को प्रधान व उसके परिणाम रूप सम्पूर्ण जो कार्य हैं उन सबका अधिष्ठाता होना व सब पदार्थ व प्राणियोंके अतीत अनागत वर्तमानधर्मसे संबद्ध वा संयुक्त गुणोंकाज्ञान होना प्राप्तहोताहैयह विशोकानाम सिद्धिहै कि जिसको प्राप्त होकर योगी सबक्लेश व बंधनसे रहित पूर्णज्ञान होकर विचरताहै इससेभीवैराग्य होनेसेअर्थात् विवेकख्यातिमें जो सिद्धी हैं उनमेंभी वैराग्य होनेसे पर वैराग्य प्राप्त होनेसे सबदोष वीर्यक्षय होनेसे कैवल्य मोक्षको प्राप्त होताहै योगमेंजो विघ्न उत्पन्न होतेहैं उनके निवारण काउपाय वर्णन करते हैं प्रथम यह जानना चाहिये कि योगी चार प्रकार के होतेहैं कल्पिक मधुभूमिक प्रज्ञा ज्योति अतिक्रांत भाव नीय संयममें प्रवर्तमात्र प्रथम योगीहै दूसरा संप्रज्ञात योग करके मधुमती चित्तभूमि

में ऋतंभरा प्रज्ञाअवस्था को प्राप्त हो भूत इन्द्रिय साक्षात्करके जीतनेकोइच्छा करताहै तीसराभूतइन्द्रियोंका जीतने वालाहै अर्थात् सम्पूर्ण जे भावना किये गयेहैं व जिनकी भावना करना योग्यहै उनमें रक्षाबंध करके जो किये व करनेके योग्यहैं उनका साधन करने वालाहै चौथा अतिक्रांत भावनीय वहहै कि जिस के चित्तकालय होनाही प्रयोजनहै और उसके सात प्रकार के प्रांतभूमि प्रज्ञाहैं इनका पूर्वमें व्याख्यान कियागया है इनमें प्रथम योगी देवता आदिकों से निमंत्रण के योग्य नहीं होता दूसरा मधुभूमिक जब मामती भूमि को साक्षात् करताहै तब इन्द्रियोंके देवता क्षोभ कराते हैं व प्रार्थना करतेहैं व यह कहतेहैं कि यहां स्थिरहो यहां रमणकरो देखो कैसा अच्छायह भोगहै अतिसुन्दर यहस्त्रीहै क्या उत्तमयह रसायनहै कि जिससे जरामृत्यु नहीं होती कैसा आकाशमें चलने वाला यह विमानहै कैसे कल्पवृक्षहै उत्तम अप्सराहैं दिव्यकर्ण नेत्र हैं यहां वज्रकी तुल्य शरीरहैं यहां अक्षय अमर अजर देवताओं के प्रिय स्थानहैं ऐसे देवताओंके उपमंत्रनमें संग विस्मय न करना चाहिये चित्तमें यहसंग दोषकी भावना करें कि घोर संसारमें मैं वारंवार जन्म मरणके क्लेश में प्रवर्तमान यत्न साधन करके क्लेश व अंधकार का नाश करनेवाला योगप्रदीप जो प्रकाशित किया है उसके यह तृष्णा योनि विषय शत्रुहैं सो मैं ज्ञानप्रकाश को प्राप्त इसविषय तृष्णासे जोठगागया फिर किसतरह

जरती हुई जो संसारकी अग्निहै उसमें अपनी आत्माको ईंधनकी तुल्य भस्मकरूं स्वप्नकी तुल्य कृपण जनोंके प्रार्थनाके योग्य जो विषयहैं इनसेजोमैं बचारहूंतभीमेरा कल्याणहै इसतरह संगत्याग व निश्चय करके समाधिमें प्राप्तहोवे और यहमेरे योगका प्रभावहै कि देवताभी मेरी प्रार्थना करतेहैं यह अभिमान होना स्मयहै इसको भीनकरै अहंकार भी योगका भ्रष्ट करने वालाहै तिस से संगवस्मय दोनोंको त्यागकरे क्योंकि योग भ्रष्टहोने से फिर अनिष्टजो क्लेश आदिहैं उनका प्रसंग होताहै इससे संगस्मय के त्यागमें दृढ़होकर योगीसमाधि लाभ करताहै क्षण व क्षणोंके बीतनेका क्रम अर्थात् पूर्व पूर्व क्षणोंका नाश व उत्तर उत्तर का वर्तमान होना व फिर उनकाभी नाशहोना इसतरह क्षण व क्षणोंके क्रममें संयम साधनसे वैराग्य व वैराग्य पूर्वक विवेकजज्ञान अर्थात् विवेकसे उत्पन्न ज्ञान होताहै विवेकज ज्ञानसे योगीको बिना जाति लक्षण देशके पदार्थका बोधहोता है अर्थात् लोकको जातिलक्षण देशमात्रसे पदार्थों के भेदका ज्ञान होताहै यथानील गाय व गौका जातिसे भेदज्ञान होताहै व जो दोपदार्थ जाति व देशमें तुल्यहैं लक्षणसे उनके भेदका ज्ञान होता है यथादो गौ जाति व देशमें तुल्यहैं उनका भेद कृष्ण व शुक्लरंगसे जाना जाताहै व जाति लक्षणमें तुल्य दोपदार्थों में देश भेद बोध होनेमें हेतुहै जैसे दो आंवला जो जाति लक्षणमें तुल्यहैं पूर्व व उत्तर देशसे उनका भेद जाना जाताहै

और जब यहदोनों आवंला जिसने प्रथम देखाहै उस
को दृष्टिसे छिपाकर पूर्वको उत्तर व उत्तरको पूर्व करदेवे
तौ जातिलक्षण तुल्यहोने व देशभेद न जाननेसे भेदका
निश्चय नहीं होता योगियों को जाति लक्षण देशकी
अपेक्षा नहीं होती बिना जाति आदिके विवेकज ज्ञान
से पदार्थों के भेद को जानते हैं इस विवेकज ज्ञानकी
तारक संज्ञाहै तारक संज्ञा इससे है कि यह ज्ञान
संसार सागरसे तारने वालाहै व इसतारक से सम्पूर्ण
विषय व अतीत अनागत कालका ज्ञानहोता है अन्य
ज्ञानमें क्रमसे एकएक पदार्थका बोध होताहै इसतारक
विवेकज ज्ञानमें एकही क्षणमें विना क्रम अनेक पदार्थों
का ज्ञान होताहै रजोगुण तमोगुण मलसे रहित विवे-
कज ज्ञानसे पर वैराग्यको प्राप्तहो आत्मज्ञानसे जीव
मुक्त होताहै जो विभूतियोंका वर्णन कियागया है
यह केवल श्रद्धा उत्पन्न करनेकेअर्थ है विशेष लाभ
व फल योगका केवल मोक्ष होनाहै क्योंकि विभूती
व सिद्धियां पांच प्रकारकीहैं केवल योगहीसे सिद्धियों
की प्राप्तिनहीं है जन्म औषधि मंत्र तप समाधि पांच
प्रकारकी सिद्धियां होतीहैं जन्मसिद्धि यहहै कि विशेष
धर्म व कर्मसे देवता योनिमें उत्पन्न होनेसे इच्छा अ-
नुसार कर्म करने अनेक शरीर धारण करनेको शक्ति
जन्ममात्रहीसे विना साधन व अन्ययत्न के पूर्वधर्म
फलसे प्राप्त होती है औषधियों से रसायन आदि से
सिद्धिप्राप्त होतीहै मंत्रोंसे आकाशको जाने व अग्नि-

मा आदिके लाभहोनेकी सिद्धिहोती है तपसे मनोरथ अनुसार फलके प्राप्तहोने जहां इच्छा करै वहां जाने आदिके सामर्थ्यकी सिद्धिहोती है समाधिज सिद्धिका व्याख्यान हो कियागयाहै यहपांच प्रकारकी सिद्धी हैं परन्तु मोक्षकेवल आत्मज्ञानमें संयम साधनसे अर्थात् आत्मा व परमात्माके यथार्थ ज्ञानसे परमात्मा चेतन आनन्द ज्ञान स्वरूप में अति प्रेमयुक्त अभेद भाव संयम साधन करनेसे प्राप्तहोता है अन्य उपाय नहीं है इससे सबसे योग उत्तमहै सबसिद्धियां मोक्षकी अपेक्षा तुच्छहैं व मोक्षहोनेमें विघ्न करने वालीहैं तिससे मुमुक्षुको सिद्धियोंके प्राप्तहोनेके प्रभावमें अहंभाव को न प्राप्तहोना चाहिये न सिद्धियोंकी इच्छा करना चाहिये मोक्षकी अभिलाषा करके योगमें प्रवर्त होना व रहना चाहिये॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालनिर्मितेअष्टांगयोग बिभूतिवर्णनेअष्टमोऽध्यायः ८॥

अथ ब्रह्मोपासन विधि सगुणनिर्गुणोपासन फलवर्णन प्रारंभः॥

अब यह जानना चाहिये कि जिनके चित्तशांत हैं व पूर्वजन्मके संस्कार व सत्संगके प्रभावसे हृदयमें वैराग्य उत्पन्न है उनको बिनायम नियम आदिबहु अंग साधन के केवल धारणा पूर्वक ध्यान समाधिरूप संयम साधन

मे ब्रह्मकी उपासना करनेसे मोक्षलाभ होताहै अथवा जेकोई अवस्था व कारण विशेष से यमनियम प्राणायाम सब अंग यथाविधि नहीं करसक्ते उनको धारणा ध्यानमात्र करके उपासना करना योग्यहै अर्थात् संयम से उपासना करना उचितहै इसीसे मनोरथ सिद्धहोता है ब्रह्मकी जिज्ञासा व प्रत्यय करने में बारम्बार आत्म प्रत्यय अर्थात् ब्रह्मविचार व ध्यानमें स्मरण व धारण करना चाहिये कहीं कहीं एकवार ध्यान करलेनेसे मनोरथ सिद्धनहीं होता यथा वेदमें बारंबार ध्यान व विचार करनेका उपदेश कियाहै श्रुतिमें कहाहै ॥

आत्मावाअरेदृष्टव्यः श्रोतव्योमन्तव्योनिदिध्यासितव्यः ॥

अर्थ अरे निश्चय करके आत्मा जानने के योग्य सुनने योग्य मानने के योग्य फिर फिर ध्यान करने के योग्य है तिससे अनेकबार आत्मा ब्रह्मको विचारना उपदेश से सुनना व ध्यान करना चाहिये अब यह विचार किया जाता है कि वेदांत में जीव आत्मा व परत्मा को भेद रहित वर्णन कियाहै व बारम्बारध्यान व विचार करने में अभ्यास करनेको कहाहै इसमें यह संशय है कि अभ्यास करने के समय में मैं ब्रह्महूं यह मान कर आत्माको ध्यानकरना चाहिये अथवा ब्रह्म मेरा स्वामी है मैं सेवक हूं यह भावना करना चाहिये क्योंकि जीवात्मा व परमात्मा का एकहोना संभव

नहीं होता परमात्मा को पाप आदि गुणोंसे रहित वर्णन किया है जीवमें पाप आदि विपरीत गुण हैं विपरीत गुण एकमें नहीं होसक्ते व वेदांतमें जो अभेद वचन से आत्मा परमात्माको वर्णन किया है वह भी मिथ्या नहीं समझा जाय सक्ता इसका उत्तर यहहै कि आत्मा व परमात्मा दोनों चेतन व शुद्ध निर्विकार भावसे एकहीद्रव्य व पदार्थ है व मुक्तहोने में ब्रह्मसम भावको प्राप्तहो नित्य आनन्द शुद्ध निर्विकार सामर्थ्यवान् होताहै इससेभाव विशेष व भक्ति अर्थसे अभेद वर्णन कियाहै यथा तत्त्वमसि अर्थ वह तूहै इत्यादि अभिप्राय इसका यहहै कि जोपदार्थ ब्रह्महै वही चेतन शुद्ध मुक्तपदार्थतूहै अथवा पूर्वापर श्रुतिवाक्यके सम्बन्धसे यह अर्थ ग्रहण किया जाताहै कि जो ब्रह्म सब जगत्का आत्माहै वही ब्रह्मात्मा संयुक्ततूहै व वही ब्रह्म तेरा आत्माहै यह अर्थ ग्रहण होताहै समाससे आत्मक शब्द लोपकरने से तदात्मकत्व मसिकातत्त्वमसि होजाताहै व ब्रह्मात्मकतूहै यह अर्थ ग्रहण किया जाताहै इत्यादि अद्वैत सूचक श्रुतियोंका भावविशेष से द्वैत अद्वैत दूनों अर्थका ग्रहण होताहै वेदान्तमें जो ब्रह्म भाव अभेद बुद्धि करके उपासना करनेको कहाहै उसके अनुसार मैं ब्रह्म शुद्ध मुक्तरूप हूं इस भावसे उपासना करना चाहिये यद्यपि यह कहाहै कि श्रुतिवाक्यमें जो कहाहै उसको अंगीकार करना चाहिये तर्क न करना चाहिये परन्तु मनुआदि महात्मा जो

अर्थ तर्क व श्रुतिवाक्य अर्थ दोनोंसे सिद्धहो उसको आदरके योग्य मानाहै इससेतर्क व हेतुसे सर्वथाएक भेद-रहित आत्मा व परमात्माको मानना ग्रहणान के योग्य नहीं होसक्ता क्योंकि जबएकहीहै तब मिथ्यादृष्टि भ्रम व तत्व दृष्टि यहभी दो विपरीत धर्म एकमें नहीं हो सक्ते इसीतरह जो इसका कुछ उत्तर भी दियाजाय तौ फिर अन्य उसके विरुद्ध संशयप्राप्तहोताहै तर्कसे सर्वथा अद्वैत सिद्ध नहीं होता परन्तु श्रुतिमें जो अद्वैत उपासना कहाहै व यथार्थ वैराग्यहोने व विशेष अवस्था में अति उत्तम मोक्ष प्राप्त होनेके अर्थ उचितहै यह युक्ति व हेतुके भी विरुद्ध नहींहै युक्ति व हेतुसे अद्वैत भावका प्रमाण होना पूर्वही वर्णनकिया गयाहै व वेदान्तदर्शन व्यासकृत सूत्रमें द्वितीय अध्यायके प्रथम पादके ग्यारहवें सूत्रमेंभी यह हेतु प्रकट सूचित करदियाहै किमोक्षके अर्थ अद्वैत उपासना करना उचितहै अर्थात् यहकहाहै कि तर्क करके जो अद्वैत सिद्ध न हो द्वैतहो सिद्धहो तौ भी विना अद्वैत भावके मोक्ष होनेका प्रसंग नहीं है इससे मोक्षके अर्थ अद्वैत उपासना करना चाहिये जिस सूत्रका यह भावहै यहभी पूर्वही लिखागया है व विना अद्वैत मोक्षन होनेमें हेतु यहहै जैसा पूर्वही कहा गयाहै कि अति प्रेममें द्वैत बुद्धिका अभाव होताहै इससे जब परमात्मामें अति प्रेम होताहै तब चित्तसे द्वैत भावका अभाव होताहै व आनन्दमय स्वरूप परमात्मा को प्राप्त होकर जीव आनन्द मय होताहै तब सब क्लेशोंसे

रहित होनेसे मुक्त कहा जाताहै अथवा श्रुति अनुकूल दूसरा हेतु अद्वैत उपासना व ध्यानके प्रमाणमें यहहै कि श्रुतिमें कहाहै ॥

यथाक्रतुरस्मिन्लोकेपुरुषोभवति तथेतःप्रेत्यभवति ॥

अर्थ जिसतरहका संकल्प व ध्यान इसलोकमेंपुरुष करताहै उसी प्रकारसे मरणेके पश्चात् होताहै सेवाय ब्रह्मनित्य आनन्द मयके औरकोई पदार्थ नित्यआनन्द स्वरूप व क्लेश रहित नहींहै जिसके भावना करने व उसीतरह होजानेसे मोक्षहोजाना संभवहोवै इसहेतुसे मोक्ष प्राप्तिके अर्थश्रुतिमें अद्वैत भावसे उपासना करने को कहा है प्रतीक उपासना में आत्मभावको न ग्रहण करना चाहिये क्यों कि प्रतीकसे प्रतीक उपासकआत्म भावको नहींग्रहण करसक्ता जो यहकहाजावै किवेदमें॥

मनोब्रह्मेत्युपासीत ॥

अर्थ मनब्रह्महै यह उपासनाकरै इत्यादि बाक्यों से मनआदिब्रह्म व आत्माहै यहग्रहणकरनाचाहियेक्योंकि ब्रह्मही सबमें कारणात्मक बिद्यमान होनेसे प्रतीकों में ब्रह्मभाव मानना युक्तहै तौयहमानना युक्तनहींहै ब्रह्ममें प्रतीक होनेका अभावहै बिकार दृष्टिके अभाव होनेसे कार्यरूप उत्पन्न बस्तुके नामआदि ब्रह्मभावमें आश्रय

नहीं हो सके संसार धर्म रहित ब्रह्मका उपदेशहै जे आत्माके सदृश सांसारिकविकार व धर्मरहितनहींहै उन में आत्मा भावकाग्रहण नहींहोता न उनकेउपासना से संसार बंधसेमुक्ति होती है इससे प्रतीक में आत्मदृष्टि करनाउचित नहींहै अवयह संशयहैकि श्रुतिमेंआदित्यो ब्रह्मप्राणोब्रह्म अर्थसूर्य ब्रह्महै प्राण ब्रह्महै इत्यादिवाक्य से आदित्य आदिनामसे ब्रह्महीको कहाहै यहकहने से आदित्य आदि दृष्टिको ब्रह्ममें अध्यासकरना चाहिये व ब्रह्म दृष्टिकोआदित्य आदिकोंमें इसका उत्तरवेदान्त के अनुसारयहहै कि ब्रह्मदृष्टिकोआदित्यआदिकोंमें करना चाहिये इसहेतुसे कि ब्रह्मकेउत्कृष्टहोनेसे निकृष्ट में भी उत्कृष्ट भावकरनेसे उत्कृष्ट दृष्टिसे उत्कृष्ट भाव होता है ब्रह्मज्ञानजिनकोनहींप्राप्तहै ज्ञानहीन जनोंकेमनलगाने व एकाग्रता साधनकेअर्थसाकारसूर्य्यआदि एक देशीय मनआदिकीउपासना ब्रह्मभावकरकेकहाहै अवयहजानना चाहिये कि उपासनाआसनमेंबैठकर करना उचितहै क्योंकि उपासना समान चित्तकेप्रत्ययप्रवाह करने अर्थात् उपास्य ध्येय मात्रमें चित्तरखनेइधर उधर जानेसे रोकनेका नामहै यह साधन विना आसनके चलनेपड़ने आदिमें संभवनहींहोताचलनेआदिमें चित्तकाविक्षप होता है एकाग्रनहीं रहतापड़नेमें अकस्मात् निद्राआतीहै इस सेआसनमें स्थितहोकर उपासनाकरनाचाहिये एकवस्तु में चित्त लगाने व समान प्रत्यय प्रवाहकरने में अंगका शिथिल होनादृष्टिका इधरउधर न चलाना वक आदिमें

देखा जाताहै बक ध्यान देखनेसे आसीन होनेमें ध्यान होनेका अनुमान होताहै पृथ्वीकी तुल्य ध्यान करनेको कहाहै अभिप्राय यहहै किआसनमेंपृथ्वीकेतुल्यअचल होकर ध्यान उपासना करै स्मृतियों में भी आसन में बैठकर उपासना करनेका कहाहै उपासनामें दिशादेश काल नियम बिशेषनहींहै जिसदेशजिसकाल जिसदिशा में चित्तकी एकाग्रता होवे उसमें उपासना करै क्योंकि उपासनामें चित्तकी एकाग्रताहीकी विशेषता व मुख्यता है दिशा देशकाल की नहींहै यह उपासना मरण पर्य्यंत करना चाहिये क्योंकि श्रुतिमें यह कहाहै कि जैसा चित्तका भाव व स्मरण मरण समयमें रहताहै उसी तरह की गति होतीहै अतके प्रत्यय बशसे अदृष्ट फलकी प्राप्तिहोती है श्रुतिमें मरण समय तक उपासना करनेको कहाहै॥

सयावत् क्रतुरस्माल्लोकात्प्रेति॥

अर्थ वहध्यान करनेवाला जबतक इसलोकसे गमन करताहै अभिप्राय यहहै कि जब तक इसलोकसे गमन करताहै अर्थात् मरताहै तबतक उपासनाकरै जो इष्टका ध्यान व उत्तम बुद्धि मरण समयमेंरहैगी तो उत्तम गति होगी निकृष्टबुद्धि व स्मरण होगा तो निकृष्ट गति होगी इससे मरण पर्य्यंत इष्टका ध्यान व बुद्धिको उपासनामें धारण करना चाहिये अब ब्रह्मविद्याका फल विशेष वर्णन करतेहैं प्रथम यह संशयहै कि ब्रह्म ज्ञानहोने में

जो मोक्ष होनाकहाहै यह संभव नहीं होता क्योंकि ब्रह्म उपासकका कर्म संस्कार किसतरह नाश होताहै यह जाना नहीं जाता बिनफल भोगकर्म का क्षयहोना असंभव है कर्म का फल भोगताहै यह श्रुति में कहाहै विनाफल भोग कर्मनाश होने में श्रुति मिथ्याहोगी फल भोग अवश्य मानने में मोक्ष होने का अभाव होताहै इसका समाधान यह है कि ब्रह्मज्ञान प्राप्त होनेके पश्चात् जो कर्म होतेहैं उनका मेल ब्रह्मज्ञानी में नहीं होता जैसेकमल व छूलके पत्रमें जलकामेल नहींहोता व पूर्व कर्मों का ब्रह्मज्ञान के प्रभाव से नाश होताहै जैसे श्रुतिमें कहाहै॥

यथापुष्करपलाशआपोनश्लिष्यन्त

एवंविदिपापकर्म्मनश्लिष्यते॥

अर्थ जिसतरह कमल व छूलमें जल नहीं छूजाते इसी तरह विद्वान में पाप कर्मनहीं लगता कर्म नाश होना भी श्रुति में वर्णन किया है यथा॥

तद्यथैषीकातलमग्नौ प्रोतंप्रदूयते

वंहास्यसर्वेपा.मान.प्रदूयन्त॥

अर्थवह जिसतरह अग्निमेंप्राप्त सरपतका भुवाजल जाताहै इसी तरह इसके अर्थात् ब्रह्मज्ञानी के सब पाप जलजातेहैं यह जो कहाहै कि विनाभोगके कर्म काक्ष

नहीं होता यह सत्यहै परन्तु जब तक देह अभिमानहै तभीतक कर्म संस्कार सम्बंधहै जिनका देह अभिमान गतनहीं हुआ व ब्रह्मज्ञान जिनको प्राप्त नहीं हुआ उनके कर्मको बिना भोगके क्षय न होना कहाहै जो पुरुष ब्रह्मज्ञान को प्राप्तहोता है उसका देह अभिमान नहींहोता वह अपने को सदाकर्म व भोग से रहित मानताहै कर्म व भोग अंतःकरण व देह संस्कार व अभिमान सम्बंध से व अज्ञान मात्रसे मानता है ऐसे ज्ञानी का पाप श्रुति प्रमाण से नाश होता है नाश न होने में मोक्षका अभाव होगा व मोक्ष प्रतिपादक श्रुतियों में विरोध होगा तिससे ब्रह्मज्ञानी के पूर्वकृत पाप नाश होजाते हैं यह श्रुति प्रमाणसे सिद्धहै व पाप की तुल्यपुण्यका भी नाश व मेल न होना ब्रह्मज्ञानीमें होताहै क्योंकि विना सबकर्मों के नाश कर्म फल भोग नहीं छूटता कर्म भोग न छूटने से मुक्त नहीं होसक्ता इससे कर्म मात्र का क्षय होना भी श्रुति में कहा है

क्षीयन्तेचास्यकर्माणितस्मिन्दृष्टे परावरे॥

अर्थ उससर्व व्यापक ब्रह्मके ज्ञानहोने में इसके अर्थात् ब्रह्मज्ञानी के कर्म क्षीणहोते हैं इसश्रुतिमें विना पापके विशेषण कर्ममात्र का क्षयहोना कहाहै अबयह संशयहै कि वेकर्म संस्कार शरीरनहीं होता न बिनाकर्म

संस्कार रहताहै जब सबकर्मोंसे ज्ञानी रहित होजाताहै तब उसके शरीरका तुरतहीपतन होजाना चाहिये बिना कर्म संस्कार शरीर किसतरह रहताहै उत्तर यहहै कि संचित कर्म अर्थात् जिनकर्मोंसे वर्त्तमान शरीर हुआहै उनसे भिन्न पूर्वकालके जे कर्महैं उनहीका ज्ञानसे नाश होताहै प्रारब्ध कर्म अर्थात् जिन कर्मोंसे वर्त्तमान शरीर उत्पन्न होताहै उनकानाश नहींहोता शरीरधारण रहने के काल परिमाणसे प्रारब्धके पाप पुण्य क्षय न होनेका अनुमान होताहै सम्पूर्ण कर्म क्षय होजाने से तुरतही शरीर पतन होना चाहिये विना कर्म संस्कार शरीर रहना संभव नहीं है श्रुतिमें भी जबतक कर्मों से मोक्ष नहींहोता तभीतक शरीर रहना कहाहै श्रुति यहहै॥

तस्यतावदेवचिरंयावन्नविमोक्ष्यते॥

अर्थ इसको ब्रह्मज्ञानी की तभीतक स्थिरता रहैगी जबतक मुक्त न होगा अर्थात् जबतक कर्म संस्कार रहित नहींहोता शरीर त्याग नहीं करता व कर्म संस्कार रहित होनेमें शरीर नहीं रहसक्ता मुक्त होनेमें शरीरका अभाव कहाहै जो यह संशयहो कि कोई कर्मनाश होते हैं कोईनहीं नाशहोतेहैं इसमें क्या कारणहै उत्तर यहहै कि श्रुति प्रमाणसे संचित कर्मोंका नाशहोना व प्रारब्ध कानाश न होना सिद्ध होताहै इससे यह परमेश्वर कृत नियम है यह अनुमान होता है अब यह संशय है कि जिसतरह विवेकसे आत्मज्ञान होता है व आत्मज्ञान

से मोक्ष होताहै इसीतरह यज्ञआदि कर्म से आत्मज्ञान होना श्रुतिमें कहाहै आत्मज्ञानसे मोक्षहोनेसे यज्ञआदि पुण्य कर्मका भी कार्य मोक्षहै फिर पुण्यकर्मका अश्लेप विनाश क्यों कहा है वेदमें कहाहै॥

तमेतंवेदानुवचनेनब्राह्मणाविवि दुषंतियज्ञेनदानेन॥

अर्थपूर्वोक्त इसआत्माको वेदबचनअनुसार यज्ञकरके दान करके ब्राह्मण जाननेकी इच्छा करतेहैं उत्तर यहहै कि पुण्यकर्म बुद्धि शुद्धहोने व उत्कृष्टताहोनेके हेतुहै बुद्धि की शुद्धता होनेसेज्ञानकी प्राप्तिहोतीहै ज्ञानप्राप्त होनेमें ज्ञानका कार्यमोक्ष लाभ होताहै पुण्य कर्मोंका ज्ञानके हेतु होनेसे व ज्ञानका मोक्षके हेतु होनेसे एक एक के उत्तर हेतुहोनेके भावसे व अंतफल मोक्ष होनेसे दोनोंमें मोक्षकार्य होना कहाहै कर्मसे मोक्ष होना उपचार अर्थ से ग्रहण कियाहै जो मुख्य अर्थ से कर्म का कार्य मोक्ष होतातौ कर्मरहित होनेमें मोक्षका उपदेश न होता जिस तरह ज्ञानसंयुक्त होनेमें मोक्षकहा है इसीतरह कर्म सं- युक्त होनेमें मोक्षप्राप्तहोना कहाजाता कर्म रहितहोने होमें मोक्षका उपदेशहै इससे पुण्य कर्म के अश्लेष व विनाशको वर्णन कियाहै परन्तु जे संसारी मनोरथ के प्रयोजन से पुत्र आदिकी कामना सहित कर्म करतेहैं उनका अश्लेष व विनाश होताहै क्योंकि ऐसे कर्म ज्ञान

के उपकारी नहींहैं जे कर्मज्ञान के उपकारीहैं व कामना रहित कियेजाते हैं उनसे बुद्धिकी शुद्धता व ज्ञानकी प्राप्तिहोतीहै यह जैमिनि व बादरायण दोनों आचार्यों का मतहै अब यह संशय है कि यज्ञदान आदिको जो आत्मज्ञान होनेका कारण कहा है कि यज्ञदान करके ब्राह्मण ब्रह्म वा आत्माके जानने की इच्छा करते हैं इसमें केवल कर्महीसे आत्मज्ञान होना संभव नहींहोता व विवेक विद्या सहित कर्म से ज्ञान होना वाक्य में वर्णन नहीं किया उत्तर यहहै कि जो अग्निहोत्र आदि कर्मविद्या सहितहैं वही बुद्धिके शुद्धताके कारण होतेहैं जो कर्म विद्या विवेक रहितहै वह आत्मज्ञानका उपकारकनहींहोता जो विद्याविवेक सहितकर्महै वहीअतिशय फलदायक होताहै व श्रेष्ठहै यथा अन्य श्रुतिमें कहाहै ॥

यदेवविद्ययाकरोतिश्रद्धयोपनिषदातदेववीर्यवत्तरंभवति॥

अर्थ जो विद्या सहित श्रद्धा उपनिषद करके करता है वही अतिशय फलदायकहोताहै विद्यासंयुक्त व विद्या विहीन दो प्रकारसे अग्निहोत्र आदि कर्महैं जो विद्या संयुक्तहैं वही श्रेष्ठ व आत्मज्ञान के उपकारक हैं व जो विद्या विहीन हैं वह क्षयमान व निकृष्ट फलके अर्थ हैं ज्ञानी ब्रह्मज्ञानको प्राप्त होनेसे संचित कर्मों को क्षय करके व वर्त्तमान शरीरमें प्रारब्धके पाप पुण्य फलको

भोग करके ब्रह्म को प्राप्त होताहै व सबक्लेशों से मुक्त होजाताहै जैसा श्रुतिमें कहाहै ॥

तस्यतावदेवचिरंयावन्न विमोक्ष्यत् अथसम्पत्स्यते ॥

अर्थ उसको अर्थात् ज्ञानी को तभीतक विलम्ब है जब तक कर्म रहित मोक्ष को नहीं प्राप्त होगा अर्थात् नहीं प्राप्तहोता शरीर त्यागके पश्चात् ब्रह्मको प्राप्तहो मुक्तहोगा तथा ॥

ब्रह्मैवसन्ब्रह्माप्येति ॥

अर्थ ब्रह्महीहोकर अर्थात् ब्रह्मही सदृश शुद्ध मुक्तरूप होकर ब्रह्ममें प्राप्त होताहै संचित कर्मोंका ब्रह्मज्ञानके प्रभावसे क्षय होनेका व जबतक प्रारब्ध कार्य रहताहै तबतक शरीर रहने व मुक्त नहोनेका वर्णन कियागया अब सगुणविद्या व सगुण उपासनाके फलमें जिसतरह देवविमान मार्ग होकर जीव शरीर से गमन करताहै वर्णन करतेहैं जब पुरुष शरीरसे गमन करताहै अर्थात् मरण समयमें शरीरको त्याग करताहै तब वाक् मनमें लय होतीहै व मन प्राणमें लय होता है इत्यादि एक एकमें लय होतेहैं जैसा श्रुति में कहाहै ॥

——※——

अस्यसोम्यपुरुषस्यप्रयतोवाङ्मनसि सम्पद्यतेमनः प्राणेप्राणस्तेजसितेजः परस्यांदेवतायां॥

अर्थ हे सोम्य इस पुरुषके गमन करतेमें वाक्मनमें लयहोतीहै मन प्राणमेंलय होताहै प्राणतेजमेंतेज पर देवतामें अर्थात् आत्मामें वाक्शब्द आदिसे वाक्आदिकी वृत्तियों से अभिप्राय है अर्थात् बाक् वृत्ति मन में लय होतीहै इत्यादि किसहेतुसे कि मरणसमयमें यह देखा जाताहै कि मन वृत्ति बनीरहती है बाक्वृत्ति प्रथमनाश होजातीहै वृत्ति सहित बाक् का मनमें संहार होना कोई नहीं देख सक्ता जो यह कहा जावै कि श्रुति में कहनेसे बाक्ही मनमें लय होतीहै तौ यह कहना युक्त नहींहै क्योंकि जो जिससे उत्पन्न होता है वही उसमें लय होताहै जो यह संशयहो कि जो वाक् का मनमें लय नहीं होता तौ श्रुतिमें वाक्को क्यों कहाहै इसका उत्तर यह है कि श्रुतिमें वृत्ति व वृत्तिमानमें भेद न मान कर उपचारसे बाक् आदि शब्द से बाक् वृत्ति आदिका ग्रहण कियाहै वाक् की तुल्य अन्य इन्द्रिय चक्षुआदि का वृत्तिद्वारा मनमें लय होताहै व मन प्राणमें लय होताहै इससें यह संशय है कि मन वृत्तिद्वारा प्राण में लय होताहै यह किस तरह प्रमाण होताहै उत्तर यह है कि जिसतरह वाक् से बाक् वृत्ति ग्रहण करने में

हेतु कहागया है कि जो जिससे उत्पन्न होता है उसी कारणमें लय होताहै वाक् मनका कार्य नहीं है कि मन कारण में उसका लय होना ग्रहण किया जाय इसी तरहमन प्राणकाकार्य नहीं है कि प्राणमें उसका सर्वथा लय होना अङ्गीकार कियाजाय तिससे वाक्मन व प्राण में कार्य कारण सम्बंध न होनेसे वृत्तिद्वारा मन प्राण में लय होताहै यह ग्रहण करने के योग्य है कि संशय अब यह है कि जो केवल कर्म करता है व आत्मज्ञानी दोनोंके शरीर त्याग करने में एक ही तरह की गति होतीहै व एक दूसरे में विशेषताहै क्योंकि मोक्ष होने में विद्वान का गमन संभव नहीं होता श्रुतिमें कहाहै ॥

अमृतत्वंहिविद्वानमभ्युश्नुते ॥

अर्थविद्वानमोक्षको प्राप्तहोताहै विद्वान्का मोक्षहोना सिद्धहोनेसे केवल अविद्वानहीका जो आत्मज्ञानरहितहै लोकान्तर व देशान्तरमें गमनकरना संभव होताहै इस के निर्णय के अर्थ उत्तरयह है कि विद्वान अविद्वान की उत्क्रांतिवाक्मन में लयहोनेआदि क्रममें श्रुतिमेंभेद न कहने से एकही सदृशहै भेद यह है कि ज्ञान रहित प्राणी देह बीज सूक्ष्म भूतोंको आश्रय करके कर्म अनुसार देह को ग्रहण करताहै विद्वान् ज्ञान से प्रकाशित मोक्ष नाड़ीद्वारा गमन करके ब्रह्ममें प्राप्त होताहै गमन करने में भेद नहीं है परन्तु यह गमन तभी तक होताहै जब तक यथार्थ उत्कृष्ट ज्ञान को प्राप्त हो निर्गुण ब्रह्म

के उपासना से अविद्या आदिक्लेश बीजको सर्वथा भस्म नहीं करता अन्य संसारी जीवों की अपेक्षा मोक्ष को लाभ करताहै परन्तु कैवल्यमोक्ष को नहीं प्राप्तहोताहै कारण शरीर द्वारा इस शरीर से गमन करताहै विना भूत आश्रय होनेके गति संभव नहीं होती इससे जिस तरह भूत आश्रय होकर अविद्वान् गमन करताहै इसी तरह विद्वान् भी गमन करताहै व जो सब क्लेश कर्म रहित परम मोक्ष को प्राप्त होताहै वह ब्रह्महीमें प्राप्त होजाताहै उसकी गतिका अभावहोताहै जिनकीसर्वथा मोक्ष नहीं होती वह तेज आदि भूत सूक्ष्म व श्रोत्र करण सहित शरीर से गमन करके संसार से मोक्ष को प्राप्तहो पर देवता में लय हो स्थिर रहता है तिससे कर्म बीजसहित यह मोक्ष है अतिमोक्षमें विद्वान् के प्राणकी उत्क्रांति नहीं होती जैसा श्रुतिमें कहाहै॥

नतस्यप्राणाउत्क्रामन्तिब्रह्मैवसन ब्रह्माप्येति॥

अर्थ उस ब्रह्मज्ञानीके प्राण गमन नहीं करतेब्रह्मही हो ब्रह्ममें लय होतेहैं इसमें यहसंशयहै कि जो शरीरसे प्राणकी उत्क्रांति अर्थात् निकलना न हो तो मरण संभव नहीं है इससे शरीरसे उत्क्रांति होनेका निषेध नहीं है शरीर सम्बन्ध त्याग रूप उत्क्रान्ति होतीहै शरीर से

प्राणोंका गमन लोकान्तर व देशान्तरमें नहीं होता सर्व व्यापक ब्रह्म में विद्वान् इंद्रिय भूत सहित ब्रह्म में लय व प्राप्त होता है फिर संसार में पतित नहीं होता जैसा श्रुति में कहाहै ॥

सएषोऽकलोमृतोभवति ॥

अर्थ वह आत्मज्ञानी कलारहित मुक्तहोता है अर्थात् शुद्धचेतन पदार्थ भावसे भेद रहित मोक्षको प्राप्तहोताहै अथवा जो कर्म संस्कार सहित मोक्षको प्राप्त होताहै कालान्तर में फिर संसार में पतित होताहै उसको पूर्ण मोक्ष न होने से उपचार से कला करके मोक्ष होना कहाजाताहै व जिसको सम्पूर्ण कर्मनाशहोने से कैवल्य मोक्ष प्राप्त होताहै फिर संसार में पतित नहींहोता वह पूर्ण मुक्त कहाजाताहै पूर्ण मोक्ष होने के अभिप्राय से कला रहित कहा है ब्रह्मज्ञानी कलारहित मुक्त होताहै अर्थात् पूर्ण मोक्ष जिससे फिर संसार नहीं होता प्राप्त होताहै अब सगुण विद्यासे कार्य ब्रह्मके उपासनासे विद्वान जिसतरह शरीर त्याग करके गमन करताहै वर्णन करतेहैं वेदान्तमेंयहवर्णनकियाहै किजीवात्माकास्थान जो हृदय है उसका अग्रनाड़ी मुखहै उससे प्रकाशित हैं इन्द्रियद्वारजिसके वह विद्वान् हृदयकेप्रेमभावसे ब्रह्मके अनुग्रहको प्राप्त उपासना के सामर्थ्यसे सौसेअधिक एक सौएक जोमूर्धन्यनाड़ीहै उससे गमनकरताहै इतरजनों की सदृश अन्य इन्द्रियों से गमन नहीं करता अर्थात्

मूर्धन्यनाड़ी जो हृदयसेऊपरको दक्षिणतालु कण्ठ स्तन नासिकाके मध्यद्वारा ब्रह्मरंध्रको प्राप्त सूर्यके किरणों से एकीकृतहै उपासक के जानेको ब्रह्मलोक को मार्ग है उससे गमन करके मोक्ष को प्राप्त होता है तथा श्रुति में कहाहै॥

शतंचैकाचहृदयस्यनाड्यस्तासांमूर्धानमभिनिःसृतैकातयोर्द्ध्वमायन्नमृतत्वमेति॥

अर्थ सौ व एक हृदय की नाड़ी हैं उनके मध्यमें एक शिरको निकलीहै उससे ऊर्ध्वगमनको प्राप्त होकर मोक्ष को प्राप्त होवाहै मूर्धन्य नाड़ीसे निकलता हुआ रश्मि अनुसारी अर्थात् किरण अनुसारी निकलता है जो यह संशय होवै कि दिन को तो रश्मि अनुसारी होसकताहै रात्रि के मरण में रश्मि अनुसारी नहीं होसकता है तौ दिनको मरण होवै वा रात्रिको मरण होवै जबतक देह सम्बंधहै तबतक रात्रि दिन मूर्धन्य नाड़ी रश्मि सहित प्रकाशित रहतीहै यह श्रुति में कहा है इससे दिनको मरण हो वा रात्रि को विद्वान् रश्मि अनुसार गमन करके मोक्ष को प्राप्त होताहै व्यास मुनि कृत वेदान्त सूत्र के चतुर्थाध्याय द्वितीय पाद के १७ सूत्रसे १६ सूत्रतक केभाष्य में इसका विशेष वर्णनहै यहां प्रयोजन मात्र वर्णन किया है स्मृतियों में यह वर्णन किया

है कि जो योगी उत्तरायण में प्राण त्याग करता है उसका फिरसंसारमें आगमन नहीं होता व जो दक्षिणायनमें प्राण त्यागकरता है वह फिर संसार में आताहै परन्तु यह वेद प्रमाण से सिद्ध नहीं है श्रुति प्रमाण से सबकाल में ज्ञान का फल एकही सदृश प्राप्त होता है कोईकाल नियम की विशेषता नहीं है व युक्ति हेतु के विरुद्धभीहै उत्तरायण व दक्षिणायनमें विद्याकेफलमेंभेद होने का कोई हेतु विशेष नहीं है इससे यह अङ्गीकार करनेके योग्य नहीं है ॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेब्रह्मोपासनविधि वर्णनेनवमोऽध्यायः ९ ॥

अथार्चिरादिमार्गवर्णनप्रारंभः ॥

अब ज्ञानी अर्चिरादि मार्ग से गमन करताहै इसका वर्णन कियाजाता है ब्रह्मज्ञानी अर्चिरादि मार्ग से जाताहै यह प्रसिद्ध है व अन्य भी मार्ग श्रुति में अनेक कहाहै नाड़ी रश्मि से जानेका एक मार्ग है जो पूर्व में कहागया है अन्य देवयानमार्गहै श्रुति में कहाहै ॥

सएतंदेवयानंपंथानमापद्याग्निलोकमागच्छति ॥

अर्थ वह देवताओं के विमान मार्ग को प्राप्त हो अग्निलोक को प्राप्त होताहै तथा ॥

यदावैपुरुषोस्माल्लोकात्प्रैतिसवायुमागच्छति॥

जब पुरुष इस लोक से जाता है वह वायुलोक को जाताहै यह अन्य मार्गहै तथा॥

सूर्यद्वारेणतेविरजाप्रयांति॥

अर्थ सूर्यद्वारकरके वह विरज अर्थात् पापरहित जातेहैं यह अन्य मार्ग है इसतरह अनेक मार्ग सुनने से यह संशय है कि यह भिन्न भिन्न मार्ग हैं कि एकही मार्गके अनेक बिशेषणहैं उत्तर यहहै कि ब्रह्ममें प्राप्तहोनेवाले अर्चिरादि मार्गसे अर्थात् ज्योति मार्गसे जातेहैं जो यहसंशय होवै कि अनेकप्रकारसे उपासना करतेहैं इससे अनेक मार्गहोना चाहिये तो यह कल्पना यथार्थ नहींहै क्योंकि अनेक प्रकारसे उपासना करने में भी जे एकही ब्रह्मके भावसे उपासना करतेहैं उनके एक मार्ग होने में बिरोध नहीं है श्रुति में कहा है॥

येचामीअरण्येश्रद्धासत्यमुपासते॥

अर्थ जे यह बनमें श्रद्धा सत्य को उपासना करते हैं पूर्वापर सम्बन्धसे अभिप्राय यहहै कि जे श्रद्धा सत्यको उपासना करतेहैं वह इसमार्गको प्राप्तहोतेहैं पंचाग्नि विद्यामें यह श्रुतिविशेषण रहित प्रसिद्ध अर्चिरादिमार्ग

कोवर्णन करतीहै तिससे एकहीमार्गके अनेक विशेषणहैं मार्ग अनेक नहींहैं यह जो श्रुतिहै ॥

सएतंदेवयानंपंथानमापद्याग्निलोकमागच्छतिसवायुलोकंसवरुणलोकं सइन्द्र लोकंसप्रजापतिलोकंसब्रह्म लोकमिति॥

अर्थ वह इस देवयान मार्ग को प्राप्त होकर अग्नि-लोकको प्राप्त होताहै वह वायुलोकको वरुणलोक को इन्द्रलोकको प्रजापतिलोक को ब्रह्मलोक को जाता है अर्चि व अग्निशब्द का एकही अर्थहै इससे अर्चिमार्ग को इस श्रुतिमें भिन्न नहीं कहा अब यह संशय है कि अर्चिरादि मार्ग वर्णन करनेवाली श्रुति में वायुको नहीं कहा उसमेंवायुका ग्रहण किसतरह होसकताहै इसका उत्तर यहहै कि यहश्रुति जो अर्चिरादि मार्गवर्णनमें है ॥

तेर्चिषमभिसंभवन्त्यर्चिषोऽहरह्न आपूर्यमाणपक्षाद्यान्षडु दङ्ङेतिमासास्तान्मासेभ्यःसम्वत्सरंसम्वत्सरादा

दित्यमादित्याच्चंद्रमसंचंद्रमसो वि

द्युतमित्यादि॥

अर्थ वह अर्चिको प्राप्तहोतेहैं अर्चिसे दिनको दिनसे पूर्णताकोप्राप्त पक्षको पक्षआदि संयुक्त छःअंग सहित महीनोंको महीनोंसे सम्वत्सरको सम्वत्सरसे आदित्य को आदित्यसे चन्द्रमाको चन्द्रमासे विद्युत्को इत्यादि इसमें सम्वत्सरसे पर आदित्यसे पूर्ववायुको प्राप्तहोतेहैं यह मानना चाहिये क्योंकि यद्यपि इस श्रुतिमें विशेष नहीं कहा परन्तु अन्यश्रुति में कहाहै यथा॥

यदावैपुरुषोऽस्माल्लोकात्प्रैतिसवा

युमागच्छति तस्मैसतत्रविजिहीतेय

थारथचक्रस्यखण्डेनसऊर्ध्वमाक्रमते

सआदित्यमागच्छति॥

अर्थ जब पुरुष इसलोकसेजाताहै तब वायुको जाता है उसकेप्राप्तिकेअर्थ वह वायु तिसमें अर्थात् अपने आत्मा में छिद्र करताहै रथचक्रकी तुल्य वायुके कियेहुये छिद्रसे ऊपरको गमनकरताहै वह आदित्यको प्राप्त होताहै इस श्रुतिसे प्रकट आदित्यसेपूर्व वायु सिद्धहोताहैसम्वत्सर आदित्यके बीचमें वायुका सन्निवेशमानना युक्तहै व जो

श्रुतिमें यह कहाहै कि देवयान मार्ग को प्राप्त होकर अग्निलोकको जाताहै व फिर वायुको कहाहै इसीतरह अर्चिरादि मार्गके अनन्तर क्यों नहीं कहा जो यहसंशय होवै तौयह श्रुति देवयानको प्राप्तहो अग्निलोकको जाता है इत्यादि क्रम विशेष वाचक श्रुति नहींहै साधारणक-थन विषयमेंहै कि इनइनलोकोंकोजाताहै अर्चिरादिमार्ग वर्णन करनेवाली श्रुतिमें विशेष क्रम वर्णन किया है तिससे दोषनहींहै अब यह संशयहै कि अर्चिरादि मार्ग वर्णन करनेवाली श्रुति में वरुणलोक आदि को नहीं कहा इसका उत्तर यहहै कि विद्युत् लोक को अर्चिरादि श्रुतिमें कहाहै विद्युत् व मेघ जलका सम्बंधहै जलके स्वामी वरुणहैं तिससे सम्बंधसे विद्युत्के पश्चात् वरुणलोक व वरुणलोक के अधिपति इन्द्र व प्रजा-पति आदिक्रम सम्बंधसे विशेष स्थान कथन के अभाव में अर्चिरादि मार्ग में मानना चाहिये विद्युत् लोक को आदित्यके उपरांत कहाहै अर्थात् आदित्यसे चंद्रमा व चन्द्रमासे विद्युत्को प्राप्त होताहै यह कहाहै इसके उपरांत सम्बंधसे वरुणलोक आदिका सन्निवेश करना युक्तहै अर्चिरादि मार्ग एकहीहैं मार्ग अनेक नहींहैं अब जो यह संशयहो कि अर्चिरादि मार्ग तौ अचेतन है व जीव स्वतंत्र व मार्ग का जाननेवाला नहीं है कि अर्चि-रादिमार्ग होकर गमनकरै तौ यह जानना चाहिये कि अर्चिरादि अभिमानी चेतन देवता विशेष अपने अपने लोकको लेजातेहैं अब यह संशयहै कि सूर्य चन्द्रलोक

पर्य्यंत अभिमानी देवता माने जा सकते हैं विद्युत् से उपरान्त वरुणलोक आदिमें यह संभव नहींहै विद्युत्से ब्रह्मलोक पर्य्यन्त अचेतन अमानव पुरुष का लेजाना श्रुतिमें सुनाजाता है परन्तु अचेतन अमानव पुरुषका लेजाना वा स्वतंत्र जीवका जाना संभव नहींहै इससे यह मानाजाता है कि विद्युत्लोकसे अमानव पुरुष जब ब्रह्मलोक को लेजाता है तब वरुण आदि गमन करते हुये जीव के करणोंमें शक्ति देनेसे वा किसीतरह अनुग्रह व सहायता करतेहैं उससे ब्रह्मलोकको प्राप्त होताहै जो अर्चिरादि मार्ग से प्राप्त होनेके योग्य कहाहै यह कार्य ब्रह्मके अर्थ कहाहै क्योंकि कार्यही ब्रह्मके प्राप्तहोनेमें देशविशेष होनेसे गति संभवहै परब्रह्म के सर्वत्र व्यापक होनेसे गति संभव नहींहै यह बादरिआचार्य का मतहै व श्रुतिमेंभी बहुवचन कहाहै॥

ब्रह्मलोकानगमवांत॥

अर्थ ब्रह्मलोकोंको लेजाताहै बहुवचन कहने से कार्य ब्रह्म के अर्थ कहना सिद्ध होताहै परब्रह्म का अनेकहोना संभवनहींहै अब यह संशयहै कि अखिल जगत्के जन्म आदिका कारण ब्रह्म को स्थापितकिया है इससे कार्य विषयमें ब्रह्मशब्द संभव नहीं होता इसका उत्तर यहहै कि कार्य ब्रह्मकी परब्रह्मके साथ समीपताहै समीपता होनेसे उपचार अर्थ ग्रहण करके ब्रह्मशब्द अपरब्रह्म में कहाहै अब यह शंकाहै कि श्रुतिमें जो यह कहाहै॥

देवयानपथाप्रस्थितानामनावृत्तिः॥

अर्थ देवविमान मार्गसे गयेपुरुषों की फिर आवृत्ति नहींहै अर्थात् फिर आगमन नहीं होता कार्य ब्रह्मकी प्राप्तिसेअनावृत्तिके होनेमें संशय होताहै क्योंकि बिना कार्यरहित परब्रह्मके नित्यता संभव नहींहै तिससे श्रुति केसत्य होनेमें दोष आताहै उत्तर यहहै कि कार्य ब्रह्म-लोक के नाश होनेके समयमें उस ब्रह्मलोक के स्वामी सहित जो शुद्ध कारण परब्रह्म है उसमें प्राप्त होताहै क्योंकि कार्य ब्रह्म आदि मान अनित्यहै अनित्यमें कार्य रूप देश विशेष सम्बंधमें अनावृत्ति होना संभव नहींहै व श्रुतिमें अनावृत्ति कहाहै तिससे ऐसा अनुमान होता-है व स्मृतिमें भी यही वर्णन किया है इससे निश्चय होताहै स्मृतिमें कहाहै॥

ब्रह्मणासहतेसर्वेसंप्राप्तेप्रतिसंचरेपर स्यान्तेकृतात्मानःप्रविशंतिपरंपदं १॥

अर्थ ब्रह्मके साथ प्राप्त वह सब उपासक विचरते हैं अंतमें वहकृतार्थात्मा परब्रह्मके परंपदमें प्राप्त होते हैं जैमिनि आचार्यका इसमें यहमत है कि ब्रह्मशब्दमुख्य परमात्मा वाचक है तिससे ब्रह्मशब्दसे परब्रह्महीग्रहण करना चाहिये मुख्य अर्थ छोड़कर अपरब्रह्म गौण कल्प-ना करना युक्त नहींहै वश्रुतिमें जो कहा है॥

तयोर्द्ध्वमायन्नमृतत्वमेति ॥

अर्थ उक्त मूर्धन्यनाड़ीसे गमन करके मोक्षको प्राप्त होताहै इस श्रुतिका पूर्वही बर्णनहो अ याहै यहां उप-लक्षणमात्रके अर्थ संक्षेप कहागया है यह मोक्ष वर्णन परब्रह्महीमें संभवहै अनित्य कार्य रूपमें संभव नहींहै तिससे गतिपूर्वक मोक्ष होना परब्रह्मही में कहाहै अब यहसंशयहैकि जो कार्यही ब्रह्मके उपासनामें गतिपूर्वक ब्रह्मकी प्राप्ति कहा है तौभी श्रुतिमें जो यह कहा है ॥

सएवैनानब्रह्मगमयति ॥

अर्थ वह इनको ब्रह्ममेंप्राप्त करताहै अर्थात् वह अ-मानव पुरुष उपासकोंको ब्रह्ममें वा ब्रह्मलोक को प्राप्त करताहैइसश्रुतिमें विशेषवर्णन न होने से यह निश्चय होनाचाहियेकि सब उपासकोंको जेपदार्थकोब्रह्ममूर्ति-मान एकदेशीय मानकर उपासनाकरतेहैं व जेभाव वि-शेषसे कार्य्यरूपमें परमात्माका अध्यासकरके उपासना करते हैं अमानवपुरुष एकही तुल्य ब्रह्मलोकको प्राप्त करताहै वा विशेष उपासकों को प्राप्त करताहै जो यह मानाजावै कि विशेष उपासकों मात्रको प्राप्त करताहै तौ श्रुति में विशेष बर्णन नहीं किया श्रुति से विरुद्ध होगा इसके निर्णयमें वेदान्त सूत्रमें बादरायण आचार्य यह कहाहै कि जे प्रतीक आलम्बन नहीं करते अर्थात् एकदेशीय मूर्तिमान पदार्थ को ब्रह्म नहीं मानते ऐसे

प्रतीक आलम्बन रहित जेकार्य ब्रह्मकी उपासना करते हैं उनहींको अमानव पुरुष ब्रह्मलोकको लेजाता वाप्राप्त करताहै प्रतीक आलम्बन करने वालों को नहीं प्राप्त करता श्रुतिमें विशेष कथन न होनेमें भी प्रतीक आलम्बन करनेवालों का ग्रहण न करना युक्तहै व श्रुतिमें विरोध नहीं होसकता श्रुतिमें प्रतीक उपासकोंसे भिन्न जे ब्रह्म उपासकहैं उनसबको विशेषण रहित प्राप्तकरने को कहाहै प्रतीक उपासकों के ब्रह्मलोक में प्राप्त न होनेका अन्यहेतु यह है कि उनका संकल्प भी यथार्थ ब्रह्मभावसे भिन्न होताहै व श्रुतिमें यह वर्णन कियाहै कि जिसतरह इसलोकमें पुरुष संकल्प वा ध्यान करता है उसीतरह मरनेके पश्चात् होताहै अर्थात् जिसको ध्यान करता है जिसमें प्रीति करता है उसको प्राप्त होताहै प्रतीक उपासनामें यथार्थ ब्रह्म ध्यानके अभाव से ब्रह्मकी प्राप्ति नहीं होती प्रतीकउप.सनोंमें एकएकसे अधिक एकएकमें फल सुनाजाताहै यथाश्रुतिमें कहाहै॥

यावन्नाम्नोगतंतत्रास्य यथाकाम चारोभवतियावाचावनाम्नोभूयसीयाव द्वाचोगतंतत्रास्ययथाकामचारो भव तिमनोवावचाचोभूयःइत्यादि॥

अर्थ जितना पदार्थ नामको प्राप्त है उस में इसका अर्थात् उपासक जीवका यथा कामचार होताहै अर्थात् इच्छानुसार उसमें वा उससे अधिक में मनोरथ लाभ की इच्छा करताहै क्योंकि न्यूनसे अधिकमनोरथ लाभ में अभिलाषाहोना स्वाभाविक चित्तकी वृत्तिहै अब नाम जिसका कार्य वा अंगहै ऐसीवाक्नामसे अधिकहै इससे वाक्गत पदार्थमें इच्छापूर्णहो यह माना जावै तौ जितनावाक्कोप्राप्तहै उसमें इसका पूर्वोक्त अनुसार यथा कामचारहोताहै मन वाक्सेअधिकहै इत्यादि अभिप्राय यहहै कि जवतक ब्रह्मप्राप्तिनहींहै तबतक चित्तशांत व पूर्ण मनोरथ नहींहोता ब्रह्मसेअधिक श्रेष्ठपदार्थ न होनेसे व ब्रह्मप्राप्तिसेअधिक सुख नहोनेसे ब्रह्मकोप्राप्तहो पूर्ण मनोरथहोताहै व अनन्तसुख लाभकरताहै अन्यथानहीं इसतरह सब देवताओं आदि के प्रतीक उपासनामें एकएकसे विशेषफलहोनेसे व ब्रह्म प्राप्तिफलसे न्यून व ब्रह्मप्राप्तिका अभाव श्रुतिसे सिद्ध होताहै ब्रह्म एकदेशीय मूर्त्तिमान पदार्थ नहींहै श्रुतिमें कहाहै॥

नतस्यप्रतिमाऽस्तियस्यनाममहद्यशः

अर्थ उसकी प्रतिमा नहींहै जिसका नाम महद्यश है अर्थात् ब्रह्म की प्रतिमा नहीं है इससे मूर्त्तिमान एकदेशीय पदार्थ मानकर ब्रह्मकी उपासना करना उचित नहींहै क्योंकि ब्रह्मप्राप्ति फलका अभाव होताहै॥

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेब्रह्मोपासकानामर्चिरादिमार्गगमनवर्णनेदशमोऽध्यायः १०॥

अथपरब्रह्मोपासनफलमोक्षवर्णन विषयःप्रारंभः ॥

यह जानना चाहिये कि परविद्या को प्राप्त पुरुष जो मोक्षको प्राप्त होताहै वह मोक्षको प्राप्तहो किसी स्थानान्तरमें किसीरूप विशेषसे प्रकट होवा वा रहता है अथवा पूर्व अवस्था अविद्या रूपसे रहितहो अपने स्वच्छरूप मात्रको लाभ करताहै इसका निर्णय यहहै कि परब्रह्मको प्राप्तहो मुक्त अपने शुद्धस्वरूपको लाभ करताहै श्रुतिमें जीवको ब्रह्मको प्राप्तहोना व अपनेशुद्ध रूपको लाभ करना कहाहै श्रुति यहहै ॥

एवमेवैषसंप्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थायपरंज्योतिरूपसम्पद्य स्वेनरूपेणाभिनिष्पद्यते ॥

अर्थ इसीतरह यह प्रसन्न मुक्तरूप आत्मा इस शरीरसे उठकर परंज्योतिरूप जो परमात्मा है उसकी उपसम्पद्य अर्थात् अत्यंत समीपताको प्राप्तहो अविद्या आदि दोष रहित अपने शुद्धज्ञान आनन्द स्वरूप को प्राप्त होताहै इस श्रुतिप्रमाणसे परब्रह्मकी समीपताको प्राप्तहो अपनेही विकार रहित शुद्धरूपको लाभ करता है तिससे मोक्षमें जीव स्थानान्तर रूपान्तर को नहीं

प्राप्त होताहै ब्रह्मको प्राप्तहो अपने स्वच्छ विकार स्वरूपको प्राप्तहो स्वसामर्थ्य वाला ऐश्वर्यवान होता- है जाग्रत अवस्था में देह धर्म्मवान स्वप्नमें स्मृति सं- स्कारसे भ्रमरूपज्ञानको प्राप्तपुत्र आदिमरनेसे रोतेकी सदृश सुषुप्तिमेंनष्टकी सदृश इनतीन अवस्था को प्राप्त जीवबंधमें रहताहै ज्ञानको प्राप्तहो मुक्त होताहै तब रूपसे आत्मासदा बंधरहितहै अहंकार व अज्ञानही मात्रसे बंधहै आत्मा मुक्त होताहै यह किसतरह सिद्ध होताहै श्रुतिमें तीन अवस्था रहित मुक्तरूप आत्माका व्याख्यान करेंगे यह प्रतिज्ञा करके यह कहाहै ॥

अशरीरंवावसंतंनाप्रियाप्रियेस्पृशतः॥

अर्थ शरीर अभिमान रहित संतको दुःख सुखस्पर्श नहीं करते यह स्थापन करके यह वर्णन कियाहै॥

स्वेनरूपेणाभिनिष्पद्यते सउत्तमः पुरुषः॥

अर्थ जो अपनेशुद्ध अविद्या दोषरहित रूपको प्राप्त होताहै वह उत्तम पुरुषहै तथा॥

यआत्माअपहतपाप्मा॥

अर्थ जो आत्मा पापरहित है इसतरह मुक्त आत्मा होके विषयमें प्रतिज्ञानहै इससे आत्मा मुक्त होता है

यहसिद्ध होताहै बंध निवृत्तिमात्रकी अपेक्षा मोक्षहोना कहाहै अपूर्वरूपहोना मोक्षनहींहै जैसेरोगीरोग निवृत्त होनेसे अरोग होताहै अरोग्यता कोई अपूर्व वस्तु नहीं प्राप्तहोती जो यह संशयहो कि श्रुतिमें परंज्योति को प्राप्तहोना कहाहै ज्योतिशब्दसे परब्रह्मका ग्रहण किसतरह होताहै ज्योतिशब्दसे भौतिक ज्योतिकार्य रूप का ग्रहण होताहै तो इसका उत्तर यहहै कि आत्मा प्रकरणमें अन्य विशेषण पापरहित मृत्यु रहित आदिसंयुक्त आत्माको कहकर ज्योति शब्दसे कहाहै इससे प्रकरणके विरुद्ध भौतिक ज्योतिका ग्रहण नहीं होता ज्योति शब्दसे परमात्माहीका ग्रहणहोताहै व ज्योति शब्द आत्मा वाचक अन्यश्रुतिमेंभी कहाहै यथा॥

तद्देवाज्योतिषांज्योतिः॥

अर्थ वहब्रह्मदेव ज्योतिओंका ज्योतिहै इसमें ज्योति शब्दसे परमात्मा का ग्रहण होताहै मुक्ति अवस्थामें आत्मा परमात्माको श्रुतिमें भेद रहित वर्णन किया है भेद रहित एकही वर्णन करनेसे मोक्ष अवस्थामें जीव आत्मा परमात्मामें भेदनहीं रहता परन्तु अभेदमानना दोप्रकारसे ग्रहण होताहै कोई आचार्य सर्वथा भेद रहित आत्मा व परमात्माका एकही रूपहो जाना मानतेहैं व यही भावसे श्रुतियोंका अर्थ ग्रहण करते हैं व कोई आचार्य दोनोंके चेतनरूप होनेसे समधर्म सम द्रव्य होनेसे एकहोने का अर्थ श्रुतियोंका ग्रहण करते

हैं इनदोनोंमें से समधर्म चेतन पदार्थसे श्रुतियोंमें एक होना कहने का अभिप्राय ग्रहण करना युक्तहै क्योंकि युक्तिहेतु व श्रुतिप्रमाण दोनोंसे यह अर्थ सिद्ध होताहै व शारीरक सूत्रकार बादरायण आचार्य वेदान्त दर्शनमें भी इस अर्थका निषेधनहीं किया किन्तु अपनी सम्मति व्यक्त कियाहै अद्वैत प्रतिपादक श्रुतियोंमें जीवात्मा व परमात्माको अभेद कहाहै यथा

यत्र न अन्यत्पश्यति न तु तद्द्वितीयमस्ति॥

अर्थ जिस में अर्थात् ज्ञान व मोक्षअवस्थामें अन्य को नहीं देखता व जानता है न उससे कोई दूसरा है साधारण अर्थ यहहै कि द्वैत के अभावसे अन्यको नहीं देखता इत्यादि दूसरा अर्थ विशेष यहहै कि उपासक अतिश्रद्धा प्रेम में मग्न ब्रह्म के सर्वात्मक सर्वव्यापक भाव से ब्रह्मसे भिन्न किसी पदार्थ को नहीं देखता व यह जानताहै कि उससे भिन्न दूसरा कोई नहींहै अ-थवा चेतनरूप एकतत्त्व भावसे अपने व परमात्मा में अभेद दृष्टिसे अन्यको नहीं जानता न आत्मा पदार्थ भावसेकोई उससे दूसराहै यहमानताहै इत्यादि अभेद प्रतिपादक श्रुतियों से आत्मा परमात्माही स्वरूप चेतन पदार्थ शुद्धरूप मोक्ष में होताहै यह सिद्ध होताहै अब यह संशयहै किसर्वथा अभेदमाननाचाहिये अथवा

कुछ भेद मानना चाहिये इसके निर्णयमें महात्मा व्यास जी वेदान्त दर्शन में अन्य आचार्योंका व अपना मत वर्णन कियाहै इसमें जैमिनि आचार्य का यह मत है कि जीवही ब्रह्म रूपहै मोक्षमेंअपने ब्रह्मरूप पापरहित सत्य संकल्प सर्वज्ञत्व ईश्वरत्त्वधर्म सहित सिद्धहोता है क्योंकि श्रुतियों में आत्मा को पापरहित सत्यसंक-ल्प आदिधर्मसे वर्णन कियाहै यथा ॥

एषआत्माअपहतपाप्मा॥

अर्थ यह आत्मा पापरहित है तथा ॥

सत्यकामःसत्यसंकल्पः ॥

अर्थ सत्यकाम सत्य संकल्पहै तथा ॥

तस्यसर्वेषुलोकेषुकामचारोभवति॥

अर्थ उसका सब लोकोंमेंकाम चारहोताहै इत्यादि औडुलोमि आचार्य का यह मत है कि चेतनरूप होने से चेतनता मात्रसे एकद्रव्यहोनेसे आत्मा व परमात्मा चेतन स्वरूप में भेद न होना सिद्ध होताहै जैसाश्रुति में कहाहै ॥

एवंवाअरेअयमात्मानन्तरोवाह्यः

कृत्स्नःप्रज्ञानघनः॥

अर्थ इस तरह अरे यह आत्मा अंतर रहित बाह्य रहित सम्पूर्ण प्रज्ञानघनहै अर्थात् चेतनज्ञान स्वरूप-है यद्यपि आत्मामें सत्य संकल्प आदि गुणभी कहाहै परन्तु यह गुण ईश्वरको समीपता व अनुग्रहसे जीवमें होतेहैं चेतनताकी तुल्य स्वाभाविक धर्मनहींहैं इसऔ-डुलोमि आचार्यके मतमें व्यासजी यह मानतेहैं अर्थात् व्यासजी का यह मतहै कि औडुलोमि आचार्यके मत ग्रहण करनेमें भी बिरोध नहींहै अर्थात् श्रुतिविरुद्ध नहीं हैयह भाव अद्वैत प्रतिपादक श्रुतियोंका ग्रहणके योग्य है क्योंकि इसमें पारमार्थिक चेतन रूपहोने का अंगी-कारहै व श्रुतियोंमें जो ब्रह्मसम्बन्धी ऐश्वर्य सिद्धहुआ है उसका भी खण्डन नहींहै उसका भी ग्रहण होताहै इससे स्वीकार करनेके योग्य है अबमुक्त पुरुषके ऐश्व-र्यका बर्णन कियाजाता है वेदमें हार्द विद्या में कहाहै कि आत्मज्ञानको प्राप्तपुरुष जोमुक्तहोताहै व सिद्ध अ-वस्थाको प्राप्तहोता है उसकेसंकल्पहीसे अर्थात् इच्छा मात्रहीसे मनोरथ सिद्धहोताहै अर्थात् जोइच्छा करताहै वह होताहै श्रुतिमें कहाहै॥

सयदिपितृलोककामोभवतिसंकल्पा देवास्यपितरःसमुत्तिष्ठन्ति॥

अर्थ वहजो पितृलोक की इच्छाकरताहै तो उसके

संकल्पही से पितर उठतेहैं अर्थात् जबविद्या संयुक्तज्ञानी पितृलोककी इच्छाकरताहै तब उसके संकल्पहीसे पितर उत्पन्न होतेहैं जो यह संशय होवै कि संकल्पमात्रही से पितरों का उत्पन्न होना संभव नहींहोता क्योंकि लोक में बिना निमित्तान्तर संकल्पमात्र से मनोरथ सिद्ध होना देखा नहीं जाता जो कोई कहीं जानेका संकल्प करताहै तो बिना पदसेचलने के वहां नहींपहुंचता इसी तरह अन्यकर्मोंमें व मनोरथ में जानना चाहिये राजा आदि कोई राज्य प्रबंधका कार्य्य अपनेमनोरथमात्र से बिना निमित्तान्तर सिद्ध नहीं करसकते इत्यादि ज्ञानी ब्रह्म उपासकके संकल्पमात्र से पितरोंका होना किस तरह अंगीकार होसकताहै इसका उत्तर यहहै किज्ञानी के संकल्पमात्र से पितरोंका उत्पन्न होना श्रुति प्रमाण से सिद्धहै इससे प्रमाणके योग्य है जोश्रुतिगम्य अर्थहै वह सब लौकिक दृष्टांत से सिद्ध नहीं होसकता लौकिक अवस्थासे भिन्न अवस्था होनेसे अवस्थान्तर के विलक्षणता से अवस्थान्तर में दोषग्रहण नहीं होसकता नपरस्पर शक्ति धर्म में समता होनेका अनुमान होसकताहै विद्वान् के सत्य संकल्प होनेसे अर्थात् उसके इच्छामात्र से मनोरथ सिद्ध होनेसे विलक्षण सामर्थ्य होनेसे उस का कोई अन्य अधिपति नहीं होता श्रुति में कहाहै ॥

अथयइह आत्मानमनुविद्यव्रजन्त्ये

तांश्चसत्यकामानतेषां सर्वेषुलोकेषु कामचारोभवंति॥

अर्थ जे इस संसारसे आत्मज्ञानको प्राप्तहोकर गमन करते हैं उनके मनोरथ सब लोकोंमें इच्छानुसार सिद्ध होतेहैं अब यह संशयहै कि संकल्प मनसे होताहै ऐश्वर्यको प्राप्त जो विद्वान्है वह संकल्प करताहै इससे यह निश्चय होना चाहिये कि विद्वान् मुक्तके शरीर इन्द्रिय मन रहतेहैं व बिना मन संकल्प करनेको समर्थ होताहै इसमें बादरिआचार्यका यहमतहै कि शरीर इन्द्रियोंका अभावहोताहै मनमात्र रहताहै क्योंकि श्रुतिमेंकहाहै॥

मनसैतान्कामान्पश्यन्रमतेब्रह्मलोके॥

अर्थ मनसे इन कामोंको देखताहुआ ब्रह्मलोक में रमताहै जो शरीर इन्द्रियों सहित बिहारकरता होता तौ मनकी तुल्य शरीर इन्द्रियों का भी वर्णन श्रुति में होता मनमात्रके कहनेसे मनका होना व शरीर इन्द्रियों का न होना सिद्ध होताहै जैमिनिआचार्य का यह मतहै कि शरीर इन्द्रिय सहित विद्वान् रहताहै क्योंकि श्रुति में यह कहाहै॥

सएकधाभवतित्रिधाभवतिइत्यादि॥

अर्थ वह एक तरह होताहै तीन तरहहोताहै इत्यादि अनेक प्रकार होना कहाहै अनेक विधिका होना विना शरीर संभव नहीं होता तिससे शरीर इन्द्रिय सामर्थ्य संयुक्त विद्वान् रहताहै वादरायणआचार्य दोनों अङ्गीकार करतेहैं अर्थात् उनका मत यहहै कि मुक्त विद्वान् में शरीर व इंद्रिय का भाव व अभाव दोनों होताहै जब शरीर सहित होनेका संकल्प करताहै तब शरीर संयुक्त होताहै जब शरीर रहित होने का संकल्प करताहै तब शरीर रहित होताहै दोनों प्रकारका सामर्थ्य मुक्तपुरुष को होताहै यह दोनों प्रकार का भाव अभाव होना द्वादशाहकी तुल्यहै जैसे मृतकके अशौचनिवृत्त होनेके पश्चात्द्वादशाह जो बारहवां दिनहै उसमें सत्रयागका भाव व अभाव दोनों मानाहै अर्थात् उस दिन यज्ञका भावव अभाव दोनों श्रुति में कहाहै इसीतरह मोक्ष में मुक्तके इच्छानुसार शरीर इन्द्रियोंका भावअभाव दोनों हैं अब यहसंशयहै कि जो मोक्ष अवस्थामें अनेकप्रकार के शरीर व इन्द्रिय धारण करनेका सामर्थ्य व ऐश्वर्य्य प्राप्त होताहै तौ श्रुति में जो यह कहाहै ॥

तत्केनकंपश्येत्केनकंविजानीयात्नतुतद्द्वितयमस्ति ॥

अर्थ वह किससे किसको देखै किससे किसको जानै उससे कोई दूसरा नहींहै इसतरहकी अद्वैत प्रतिपादक

श्रुतियोंमें विरोध होगा उत्तर यहहै कि अद्वैत प्रतिपादक वाक्य जो श्रुतियों में हैं उनमें अन्य अवस्थाओं की अपेक्षासुषुप्ति व कैवल्यमोक्ष दो अवस्थाओंको जनाया है यथा सुषुप्ति में यह कहा है॥

यत्रसुप्तोनकश्चनकामंकामयतेनकश्चनस्वप्नंपश्यति॥

अर्थ जिस सुषुप्तिमें सोयाहुआ न कुछकामना करता है न कोई स्वप्न देखताहै तथा कैवल्य में कहा है॥

ब्रह्मैवसनब्रह्माप्येति॥

अर्थ ब्रह्महीहोकर ब्रह्म में लय होताहै अर्थात् ब्रह्म सदृश शुद्ध चेतन निर्विकारहो ब्रह्ममें प्राप्त होताहै उसमें व ब्रह्ममें भेद बुद्धिका व्यवहार नहीं होता इससे ब्रह्म-ही हो ब्रह्म में लय होना अर्थात् प्राप्तहोना उपचार से कहा है यह उत्कृष्ट मोक्ष है जो ऐश्वर्य विशिष्ट जिसमें शरीर इन्द्रियों का सम्बंध रहताहै वह कार्य ब्रह्मके उपा-सनासगुण विद्याकाफल आपेक्षिक मोक्षहै कैवल्य मोक्ष नहीं है इससे अद्वैत प्रतिपादक श्रुतियों में दोषकीप्राप्ति नहींही है अब यह संशय है कि परब्रह्म को भी सत्य आनन्द चेतन रूप वर्णन कियाहै आनन्द चेतनता आदि गुणहैं इससे परमात्मा निर्गुण नहीं कहाजाय सकता उत्तर यह है कि किसी द्रव्यका सर्वथा गुण रहित होना

संभव नहींहै परन्तु त्रिगुणात्मक प्रकृतिकार्य गुणसेरहित होनेसे परब्रह्म निर्गुण मानाजाताहै यह निर्गुण विद्या है, व अपरब्रह्म प्रकृतिकार्य गुणसेरहित नहीं मानाजाता इससे सगुण कहाजाता है व सगुणभाव से उपासना करना सगुण विद्याहै यह अभिप्राय है जे सगुण ब्रह्म के उपासनासे मन करके परमेश्वर में सायुज्यको प्राप्त होते हैं वह अणिमादिक सिद्धियों व ऐश्वर्य से जो हो सकताहै अनेक शरीरधारण करसकतेहैं आकाशआदि भूतसृष्टि को छोड़कर भौतिक सृष्टि उत्पन्न करसकतेहैं व नाश करसकतेहैं परंतु संपूर्ण जगत्के उत्पत्ति प्रलय स्थितिको नहींकरसकते यह सामर्थ्य केवल नित्यसिद्ध परमात्मा ब्रह्ममें है क्योंकि सृष्टि प्रकरणमें सवभूतोंकी सृष्टि वाक्यों में परमेश्वर परब्रह्महो को सृष्टि करनेको अधिकार बर्णन किया है अन्य सिद्ध मुक्त योगी परमेश्वर की उपासना ध्यान साधन से आदिमान ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं तिससे नित्य शक्ति व ऐश्वर्यमान न होने से जगत्के उत्पत्ति आदि व्यापार में समर्थ नहीं होते अब यह संशयहै कि श्रुतिमें यह कहा है॥

प्राप्नोतिस्वाराज्यंइत्यादि॥

अर्थ अपनी राज्य को प्राप्त होताहै इत्यादि इस प्रत्यक्ष उपदेश से मुक्त पुरुषोंमें स्वतंत्र सामर्थ्य जगत् व्यापार में अंगीकार करना चाहिये उत्तर यह है कि आदित्य आदिकी जो उपासना ब्रह्मभावसे करताहै वह

आदित्य मंडलस्थ ईश्वर की शक्तिको प्राप्त होताहै वह
इस ऐश्वर्यका अधिकारी होताहै उसके अर्थकहा है कि
अपने राज्यको प्राप्त होताहै सम्पूर्ण जगत् के उत्पत्ति
करने आदिकी शक्ति परमेश्वरके सामर्थ्य व ऐश्वर्य प्राप्त
होनेको नहींकहा यह वेदान्त शास्त्र में वर्णन किया है
श्रुतिमें दो प्रकारसे ब्रह्मकी उपासना कहाहै एकनिर्गुण
निर्विकार भावसे दूसरे जिनको निर्विकार निर्गुण का-
रण रूप भावसे उपासना करनेमें अधिकार नहींहै उन
के अर्थ विकारभाव कार्यब्रह्मकी उपासना श्रुतिमें कहा
है कि विकार आलम्बन करके ब्रह्मभाव धारणकरके
उपासनाकरै यथाश्रुतिमें दोरूपसे परमात्माकी स्थिति
को वर्णन किया है श्रुति यह है॥

एतावानस्यमहिमातो ज्यायांश्च पुरुषःपादोस्याविश्वाभूतानि त्रिपाद स्यामृतंदिवि॥

अर्थ तीनोंकालमें वर्त्तमान जितना यह संसारहै यह
सब इस पुरुष की महिमा अर्थात् विभूति है अब यह
संशय होताहै कि जब पुरुषकी महिमा का परिमाणहै
तौ उसका अंत व नाशभीहोगा व पुरुषका भी परिमाण
होगा इससंशय निवृत्त होनेके अर्थ यह कहाहै कि इस
से अर्थात् जगत् प्रपंचसे पुरुष पूर्ण ब्रह्मरूप अधिकहै

इसका परिमाण नहीं है अनन्त है सब जगत् इसके एक पादहै अर्थात् एक अंशहै व एक अंशमें बसता है तीनपाद अमृतरूप इसके प्रकाशस्वरूप जगत् व लोक मेंहै इसतरह श्रुतिमें विकार रूप तथा जगत् से भिन्न निर्विकार अधिक पुरुषको कहाहै जे विकार आलम्बन करनेवाले हैं वह ब्रह्मके निर्विकार रूपको नहीं प्राप्त होते जिसतरह निर्विकार रूपको न प्राप्तहो सविकार-हीमें स्थित होतेहैं इसीतरह सविकार उपासना से निरवग्रह अर्थात् सबमें स्वतंत्र शक्ति ऐश्वर्यको न प्राप्त हो सावग्रह ऐश्वर्यको प्राप्त होतेहैं मुक्तोंको जो ऐश्वर्य होताहै वह उनको स्वतंत्र नहींहोता परमेश्वर आधीन होताहै भोगमात्र उनका अनादि सिद्ध ईश्वरकी तुल्य होताहै क्योंकि परमेश्वर की तुल्य मुक्त पुरुषोंका भोग होना श्रुतिमें कहाहै परंतु सामर्थ्य में तुल्यहोना नहीं कहा भोगकी तुल्यता प्रतिपादक श्रुति यह है॥

सयथैतांदेवतां सर्वाणिभूतान्यवंतिएवंहैवांविदंसर्वाणि भूतान्यवंतितेनोएतस्यैदेवतायैसायुज्यंसलोकतां जयति॥

अर्थ जिसतरह इसब्रह्म देवताको सबभूत भोगके

अर्थ प्राप्त होतेहैं इसीतरह निश्चय करके ब्रह्मज्ञानीको सब भूत प्राप्तहोते हैं तिससे अर्थात् तुल्य भोगहोने से इस देवताके सायुज्य सलोकता को लाभ करताहै अब यह संशयहैकि भेदकथनसे ऐश्वर्य का अंतहोना संभव होताहै व वेदान्तशारीरक सूत्रमें इसके बिरुद्ध॥

अनावृत्तिश्शब्दादनावृत्तिश्शब्दात्॥

अर्थ शब्द प्रमाणसेअनावृत्तिहै अर्थात्फिर आगमन का निषेधहै यह वर्णन कियाहै व पुनरागमनकेनिषेधके शब्दप्रमाणमें श्रुतियहहै॥

यब्रह्मलोकमभिसम्पद्यतेनचपुनरावर्त्तते॥

अर्थ जो ब्रह्मलोक में प्राप्तहोताहै फिर नहीं आता अर्थात् वह फिर संसारमें पतितनहीं होताइससे यहनिर्णय होना चाहिये कि मुक्तफिर संसारमें जैसाश्रुति में कहाहैनहीं आता व पूर्वोक्त तर्क अनुसार फिर संसार में आताहै व मुक्ति अवस्था में जो ऐश्वर्य प्राप्तहोताहै वह अंतको प्राप्तहोताहै व नहीं प्राप्तहोता उत्तर यहहै कि मुक्त होकर फिरमहा प्रलयके उपरांत दूसरे कल्पमें संसारमेंआताहै महा प्रलयतक ब्रह्मसुखको प्राप्तरहता-है वर्तमान कल्पमें फिर संसारमें पतित नहींहोता इस से जो अनावृत्तिको उक्त श्रुतिमें व अन्यआप्त वाक्यमें

कहाहै उसका अर्थ उपचार करके यह जानना चाहिये कि अतिदीर्घकाल महाप्रलय तक ब्रह्म सुखमें रहने व फिर संसारमें इस कल्पमें न आनेकेभाव से पुनरागमन के न होनेको कहा है अत्यंत अभाव के अभिप्राय से नहीं कहा जो यह संशयहो कि न्यायदर्शनमें यहकहाहै॥

तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्गः॥

अर्थ उसका अर्थात् दुःखका अत्यंत छूटजाना मोक्षहै यहां स्पष्ट अत्यंत शब्द कहाहै तौ यह समुझना चाहिये कि यहां अत्यंत शब्द अधिक सुख प्राप्ति व अतिदुःख नाश होनेके अर्थ का सूचक है जैसे लोकमें अधिक सुख दुःख होनेमें अत्यंत सुख व दुःख व पुरुषको अतिसुखी अतिदुःखी शब्द करके वाच्य करते हैं अत्यंत अभाव व सर्वकालमें अभाव होनेके अर्थका वाचक नहींहै क्योंकि मुण्डक उपनिषद में मुक्तोंका फिर संसार में आना इस श्रुति में वर्णन किया है॥

तेब्रह्मलोकेहपरान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्तिसर्वे॥

अर्थ वेमुक्त पुरुष मुक्तिको प्राप्तहो ब्रह्म सुखको भोग कर महाप्रलयके पश्चात् मुक्ति सुखको छोड़ व मुक्तिसे रहित हो फिर संसारमें आते हैं तथा सांख्य दर्शन में प्रथमाध्याय में १५९ सूत्रमें कहाहै॥

इदानीमिवसर्वत्रनात्यन्तोच्छेदः॥

अर्थ अभीके सदृश अत्यन्त निवृत्ति नहीं है इससे जो पूर्वोक्त श्रुतिबाक्योंमें सबकालमें सदा अभाव होने अर्थात् अत्यन्त अभावहोनेका अर्थग्रहण किया जायगा तौ पूर्वापर श्रुतियोंमें व आप्त बाक्योंमें परस्पर बिरोध होनेसे कोई ग्रहणके योग्य न होनेका प्रसंग होगा इससे पूर्वोक्त श्रुतिबाक्यका पूर्वोक्तभाक्त व औपचारिक अर्थ ग्रहण करना उचितहै इस तरह शब्द प्रमाण से महा प्रलयके पश्चात् मुक्तका आगमनहोना सिद्धहोता है व पुनरावृत्ति न होना अर्थात् फिर संसारमें न आना युक्ति व हेतुकेभी बिरुद्धहै युक्ति व हेतुसे तर्ककरकेमुक्त का फिर संसारमें आना निश्चय होताहै क्योंकि जो मुक्त जीवोंका फिर आगमन न माना जावै तौ यद्यपि जीव अनन्त कहे जावैं तथापि मनुष्य संख्याके अपेक्षा अनन्तहोंगे परन्तु भेद व्यक्ति भावहोनेसे चाहै जितने होवैं परंतु संख्यात होनेका अनुमान होताहै उनमें से जेमुक्त होतेजातेहैं वह फिर नहींआते इसीतरह होतेहोते किसीकालमें सबजीवोंके मुक्तहोजानेपर ईश्वरकेसृष्टिके उत्पत्ति प्रलयका जो शास्त्रमें कहा है अभाव होजायगा व शास्त्रका कथन मिथ्याहोगा इससे जो मुक्तोंका मुक्तिके पश्चात् फिर संसार में आना कहा है ग्रहणके योग्य है [illegible] संशय होवे कि जो मुक्तिसेभी फिर पतितहोना है तौ [illegible] अर्थक्यों यत्न व परिश्रम करनाचाहिये

इसका उत्तर यहहै कि जब एक दिन एकघड़ीके सुख के अर्थ यत्न किया जाताहै तबमहा प्रलयतक करोड़ों बर्ष अतिसुखमें रहनेके अर्थ अवश्य यत्न करना उचितहै [illegible]पि पुरुष अपने स्वच्छरूपसे मुक्त निर्विकार ज्ञान [illegible]में होताहै केवल अज्ञानही बंध व दुःखका का- [illegible] अनादि कर्म संस्कार अनुसार अज्ञान का भी [illegible] होताहै अंतवान्कर्म साधन का फल अनन्त नहीं होसक्ता व मुक्तके फिर आगमनन होनेसे काल विशेषमें सृष्टिका अभाव होताहै इससे मुक्तका आगमन सिद्ध होताहै अबयह जानना चाहिये कि कितने काल तक जीवमुक्ति दशामें रहताहै उसकी संख्या यहहै कि ४३२०००० वर्षोंकी एक चतुर्युगी होतीहै २००० चतुर्युगियोंका एक अहोरात्र ऐसे ३० तीस अहोरा- त्रोंका एक महीना ऐसे १२ बारामहीनोंका एकबर्षऐसे सौवर्षोंका परान्त काल होताहै इनसबके गणित करने से ३११०४०००००००००००यह संख्या होतीहै इ- तने वर्षोंतक जीवमुक्त रहकर पूर्वोक्त श्रुति प्रमाण से अति सामर्थ्यको प्राप्त अति उत्कृष्ट ब्रह्म सुखको भोग- करताहै मुक्तिसे अधिक कोई सुख नहींहै इससे अत्यंत सुख व अत्यंतदुःख निवृत्ति होना कहा जाताहै ऐसीमुक्ति परम सुखरूपके अर्थ मनुष्योंको चाहिये कि जैसा अ- धिकारहोवै सम्पूर्ण क्लेश निवृत्तहोनेके अर्थ संसार बंधसे मुक्त होनेके अर्थ साधन बिवेक सहित निर्गुण व सगुण भावसे ब्रह्मकी उपासनाकरै संसार दुःखरूपमें पतित

होकर इसजन्म व परजन्ममें नाना प्रकारके क्लेश न सहै व दीन होकर बिषय आसक्त व पराधीन होवै अनित्यनाशमान विषय सुखमें मोहितहो नाना प्रकारके अधर्ममें प्रवर्तहो परिणाममें पीछे दुःख व संताप न प्राप्त न होवै क्योंकि वेदशास्त्र व बिबेकसे सब तरहसे यह निश्चयहै कि बे परमात्मा आनन्द मयके उपासना व शरण प्राप्तहोने के और कोई उपाय आनन्द प्राप्त होनेका नहीं है आनन्द केवल आनन्दरूप ब्रह्मके उपासना व ज्ञान लाभ होनेमें है इति श्री ज्ञानप्रकाश नामकोऽयंग्रन्थःसमाप्तः॥

श्लोक॥

वेदवेदाङ्कचन्द्रेऽब्दे श्रावणेबहुलेदले॥
गुरोर्वारेनवम्यांच ग्रन्थोऽयंपूर्णतामगात् १

दोहा॥

बिक्रम सम्बत् बेद युग अङ्क मयङ्क बिचार॥
श्रावणमास प्रथम दल नवमीतिथि गुरुवार १
बेदस्मृति अरु शास्त्रगत सत सम्मत अनुकूल॥
ग्रन्थसमापित जेहिपढ़त कटत अविद्यामूल २

इतिश्रीज्ञानप्रकाशेप्रभुदयालुनिर्मितेब्रह्मोपासनाफल मोक्षवर्णनेएकादशोऽध्यायः ११॥

स्थानलखनऊ मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने में छपी॥
मई सन् १८८८ ई०॥

——※——